बारह एकांकी

विष्णु प्रभाकर

●

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

डॉ० रमेशकुमार शर्मा द्वारा
परिषद् के पुस्तकालय
के लिए

बारह एकांकी

*
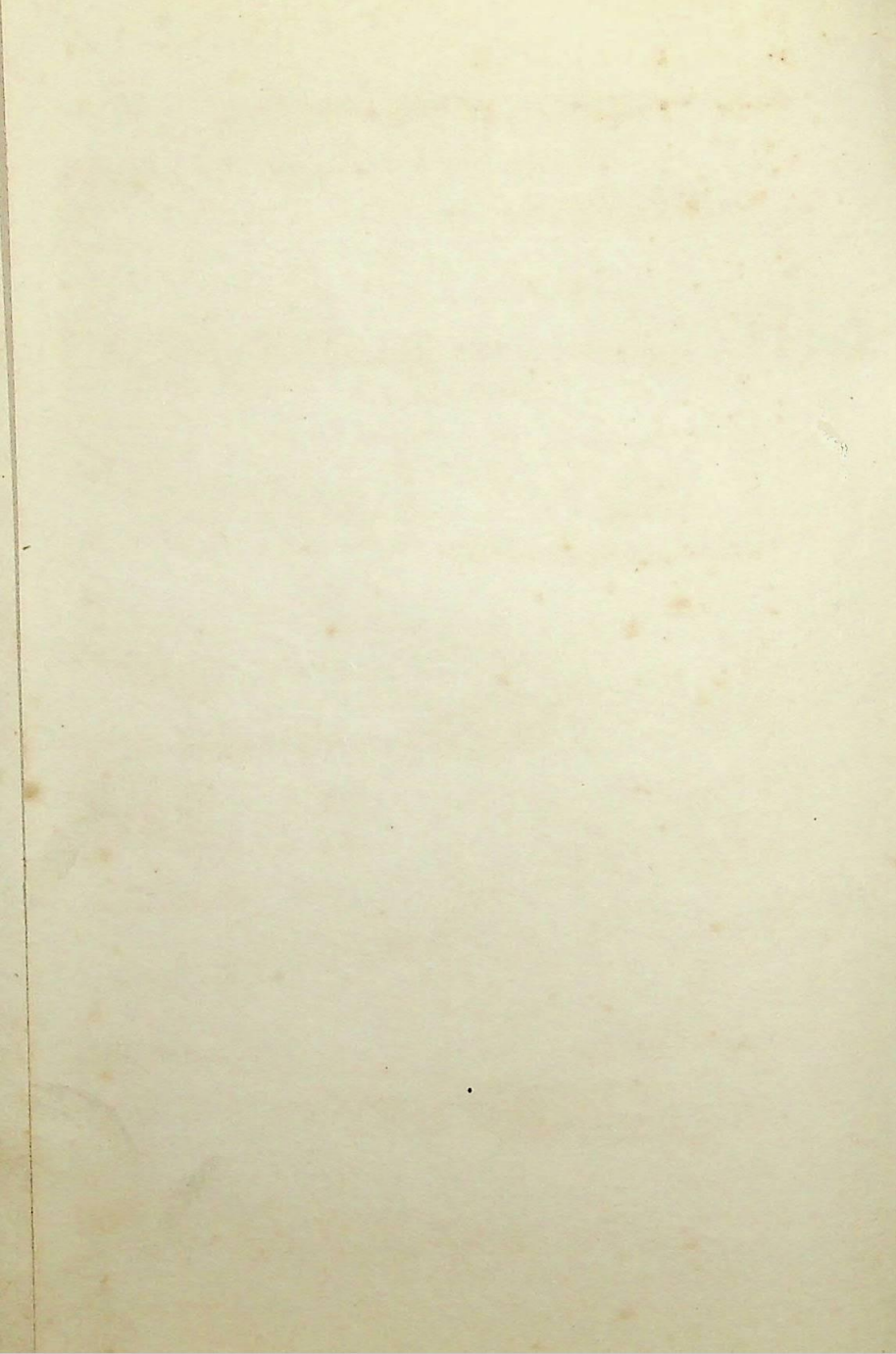
विष्णु प्रभाकर

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक–७५

सम्पादक एवं नियामक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन

Lokodaya Series : Title No. 75

BARAH EKANKI
(One Act Plays)

VISHNU PRABHAKAR

Bharatiya Jnanpith Publication

Second Edition 1965
Price Rs. 4.00

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रकाशन

प्रधान कार्यालय
९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

विक्रय केन्द्र
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

द्वितीय संस्करण १९६५

मूल्य ४.००

सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी-५

दो शब्द

यह मेरा पाँचवाँ नाटक-संग्रह है। अपने ही नाटकोंके बारेमें क्या लिखा जा सकता है। जरूरत भी नहीं है। केवल इतना बताना है कि इस संग्रहमें अधिकांश ध्वनि-रूपक हैं। ध्वनि-रूपकोंके भी कई भेद हैं। इस संग्रहमें सवेरा; साँप और सीढ़ी मनोवैज्ञानिक ध्वनि-नाटक हैं, पूर्णाहुति, ऐतिहासिक ध्वनि-नाटक। नये-पुराने और धुआँ दोनों एकपात्रीय ध्वनि-रूपक हैं। और वह जा न सकी तथा जजका फ़ैसला दोनों क्रमशः मेरी गृहस्थी और जजका फ़ैसला नामक कहानियोंके रूपान्तर हैं। श्यूआन चुआङ् जीवन चरित्रात्मक ध्वनि-रूपक है और रसोईघरमें प्रजातन्त्र, एक झलकी।

ये ध्वनि-रूपक आकाशवाणीके विभिन्न केन्द्रोंसे अनेक बार प्रसारित हो चुके हैं। माँ, रक्त-चन्दन, और सब हैं समान रंग नाटक हैं। माँ और रक्त-चन्दन कई बार खेले जा चुके हैं। शेष दो नये हैं। 'रसोईघरमें प्रजातन्त्र' भी कई बार खेला जा चुका है।

इन नाटकोंके लिखनेका समय १९४९ से १९५७ तक फैला है। विषय अधिकतर सामाजिक है। दो ऐतिहासिक रूपक हैं। व्यंग्य और हास्यका चित्रण करनेका प्रयत्न भी है, पर ये सब बातें तो पाठक पढ़कर जान सकते हैं। मैं बीचमें क्यों आऊँ। मैं तो उन सबका कृतज्ञ हूँ जिनके कारण ये नाटक लिखे गये और प्रकाशित हुए।

दिल्ली —विष्णु प्रभाकर

२३ मार्च १९५८

क्रम

■ ■

माँ
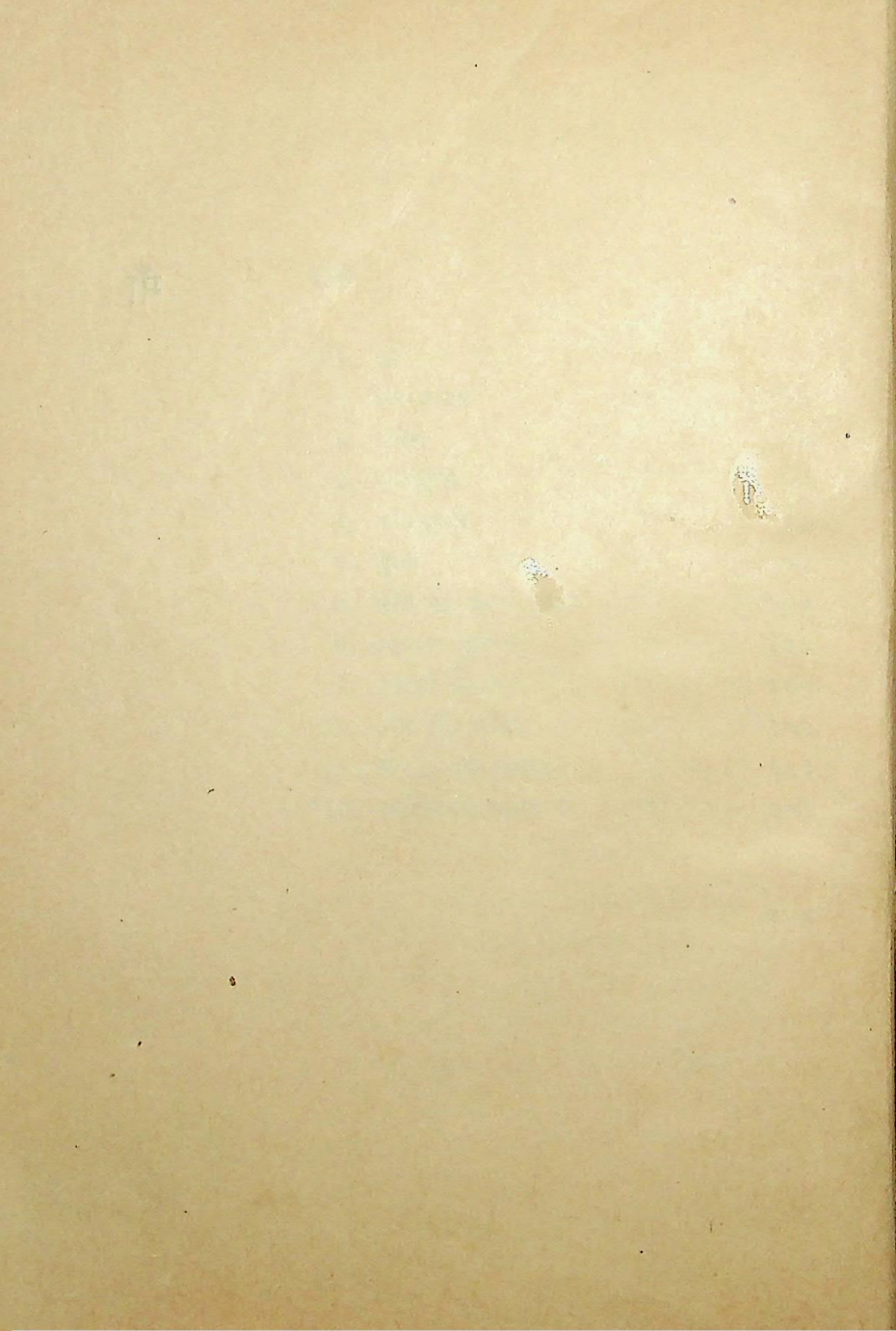
[एक साधारण मध्य वर्गके परिवारका कमरा। सुविधानुसार उसे कैसे भी सजाया जा सकता है। सुघड़ता और सुरुचि उसकी विशेषता है। सम्पूर्ण नाटकमें मनीषी एक प्रकारके मानसिक रोगसे पीड़ित है, इसलिए पलंगपर लेटी रहती है। आस-पास डॉक्टर और परिजनोंके बैठने और दवा आदिके रखनेकी व्यवस्था है। ऊपरसे आने-जानेकी व्यवस्था भी है। नाटक आरम्भ होनेके समय मनीषी पलंगपर लेटी है। युवती तो है ही, असुन्दर भी नहीं है। विवाह हुए साल भी नहीं बीता है पर, अभीसे बड़ी-बड़ी आँखें भयसे पूरित हैं जैसे किसी नानीकी कहानी-का काल्पनिक राक्षस उसे दबोचने आनेवाला है। रह-रहकर किसी शापग्रस्त व्यक्तिकी तरह तड़प उठती है। पास ही एक वयोवृद्ध डॉक्टर बैठे हैं—मस्त, हँसमुख, बात-बातमें चुटकी लेनेवाले। पति बादल-कुमार भी हैं। स्वस्थ सुशील तो हैं ही, समझदार भी लगते हैं।]

डॉक्टर : [परीक्षा करते हुए] ऊहूँ यह भी नहीं, पेट बिलकुल ठीक है। आँखें देखूँ [एक क्षण बाद] एकदम चमकदार। नाक-कान भी साफ़-सुथरे हैं। जीभ तो दिखाओ, मुँह खोलो, अ, अ करो, कहीं टान्सिल न हो। हाँ, हाँ, और ज़ोरसे···ऊँ ऊँ, जी नहीं यहाँ भी सब ठीक है। [स्टेथ्स्कोप निकालकर] अच्छा अब दिल देखूँ, हूँ [एक क्षण बाद] सांस लो, और जोरसे, और ज़ोरसे, हूँ··· [एकदम बोल उठते हैं] कहत कबीर सुनो भाई साधो···· मनी ! तुम्हारा दिल तो तूफ़ानमेलकी गतिसे दौड़ रहा है यानी शिशुके दिलकी भांति यानी नितान्त निश्छल।

बादल : यानी डॉ० साहब ! मनीको कोई रोग नहीं है।

डॉक्टर : एकदम नहीं है। वह पूर्णरूपेण स्वस्थ है। क्यों, मैं शुद्ध भाषा बोलता हूँ न ?

बादल : हृदयकी भाषा कभी अशुद्ध नहीं होती, डॉक्टर साहब।

डॉक्टर : कहत कबीर सुनो भई साधो। बादल, तुमने कही है मर्मकी बात'। काश कि मनीषी इस बातको गाँठमें बाँध ले। देखो, देखो, बादल। देखो, मनीषी मुसकरा रही है यानी वह हमारी बात समझती है। देखो मनीषी ! तुम्हारा रक्त भी ठीक है, रक्तचाप भी ठीक है, हृदय भी ठीक है, हृदयकी गति भी ठीक है, पर मस्तिष्कमें कुछ गड़बड़ है····

बादल : [भयातुर] मस्तिष्कमें गड़बड़ यानी····

मनीषी : यानी मैं पागल हो रही हूँ···

डॉक्टर : अभी हो तो नहीं रही हो, पर हो सकती हो। कहत कबीर सुनो भई साधो, तुम्हारे मस्तिष्कमें एक तराज़ू है····

मनीषी : [चकित] तराज़ू !

बादल : [अनबूझ] तराज़ू ! कैसी तराज़ू ?

डॉक्टर : यही तोलनेकी तराज़ू, दो पलड़ेवाली। उसके एक पलड़ेमें बहुत-सा बोझ भरा हुआ है लेकिन दूसरा बिलकुल खाली है। इस बातका जो परिणाम हो सकता है वह हो रहा है यानी असन्तुलन। एक पलड़ा धरतीपर पड़ा है, दूसरा आकाशमें लगा है। शरीर स्वस्थ हो तो कैसे हो ?

बादल : तो मनीषीको सोचनेकी बीमारी है ?

डॉक्टर : केवल सोचनेकी, और जब आदमी केवल सोचता है तो डर जाता है। डरनेपर स्नायु-तन्तु विचलित हो

जाते हैं। स्नायु-तन्तुओंके विचलित होनेपर शरीर काँपता है। शरीर काँपनेपर दिल धड़कता है। दिल धड़कनेपर पेटमें दर्द होने लगता है। पेटमें दर्द होनेपर भूख बन्द हो जाती है। भूख बन्द हुई तो खून नहीं बनता और फिर''''कहत कबीर सुनो भई साधो, रोग ऐसे बरसते है जैसे बादलसे पानी''''झमाझम'''झमाझम''''

मनीषी : डॉक्टर मौसा, आप तो मेरा मज़ाक़ उड़ाते हैं।

डॉक्टर : सच, मैं मज़ाक़ उड़ाता हूँ। तब तो बहुत सुन्दर बात है। तुम मेरा उड़ाओ [सब हँस पड़ते हैं] अरे, यही तो इस रोगकी दवा है। तुमने मज़ाक़ उड़ाया नहीं और तराज़ूके दोनों पलड़े बराबर हुए नहीं। अच्छा बादल ! आजसे सब दवाइयाँ बन्द। खाने-पीनेका कोई परहेज नहीं। परहेज है तो लेटे रहनेका। और हाँ, मौसम अच्छा है। छुट्टी लेकर घूम आओ। खेलो-कूदो, मौज करो, मज़ाक़ उड़ाओ'''और मुझे भी छुट्टी दो। नमस्ते''' [चल देते हैं]

बादल : [ठगा-सा] नमस्ते'''मैं साथ चलूँ ?

डॉक्टर : [मुड़कर] कौन किसके साथ जाता है, बादल ? वैसे चलना-फिरना जीनेके लिए अनिवार्य है ? क्यों, कबीर साहबने यही कहा है न ? [जाते हैं]।

बादल : [हँसता हुआ] डॉक्टर साहब भी क्या खूब हैं। कबीरके बिना एक क़दम नहीं चल सकते। अच्छा मनी ! तुम एक बात बताओगी ?

मनीषी : क्या ?

बादल : तुम डॉक्टर साहबकी तरह हँस क्यों नहीं सकतीं, खुश

क्यों नहीं रह सकतीं, नन्हीं नादान चिड़िया क्यों नहीं बन सकतीं ?

मनीषी : जो, अपना-अपना स्वभाव है।

बादल : स्वभाव क्या रोज़ बदलता है ? विवाहके पहले तीन महीनोंमें तुमने क्या नहीं किया ? तुम्हारी वह चहक, तुम्हारी वह मस्ती, तुम्हारा वह मुक्त भाव, वह सहसा…

मनीषी : [हठात्] स्वामी….

बादल : नहीं मनी ! तुम मुझसे कुछ छिपा रही हो।

मनीषी : [विह्वल] नहीं, नहीं, मेरे पास छिपानेको क्या है ? और फिर आपसे छिपानेको ! मुझ अनाथके आप ही सब कुछ हैं। आपको पाकर ही तो मैं इतना हँस सकी थी और [किसीके आनेकी खटखट]

बादल : [एकदम] मौसी आ रही है।

[कमलाका प्रवेश, एक संयत गम्भीर प्रौढ़ा, आँखें प्रेमिल, मनीषी सहसा सँभलती है। बादल उनकी ओर बढ़ता है।]

कमला : क्यों बादल ! क्या बता गये हैं तेरे मौसा ?

बादल : बता गये हैं कि मनी बहाना किये पड़ी है !

कमला : चल हट। वह भी आदतसे मजबूर हैं। रात कितना तेज़ दौरा पड़ा था बेचारीको। पीली पड़ गयी है।

बादल : इसीलिए मौसाजी कह गये हैं कि बीमारीका बहाना करके मनी घूमना चाहती है।

कमला : तो इसमें बुरा क्या है ? चले जाओ घूमने। बल्कि तुम्हें तो चले जाना चाहिए था। हैं, आज ही छुट्टी ले लो…यह क्या ? चुप क्यों हो गया….बोलता क्यों नहीं रे….

बादल : मौसी बात यह है [एकदम] मौसी ! आजकल काम बहुत है, छुट्टी नहीं मिल सकती ।

कमला : छुट्टी नहीं मिल सकती या पैसे ?

बादल : पैसे ? हाँ, वह भी समस्या है···बात यह है···

कमला : बात मैं जानती हूँ, देख लूँगी । तू छुट्टी तो लेकर आ···

बादल : मौसी ! मौसी !! तुम कितनी अच्छी हो···

कमला : अरे परे हट । आ ऊपर आ । अभीतक छमासड़ा बना हुआ है । आ खाना परोस आयी हूँ । खाकर दफ़्तर जा । [जाती है]

बादल : अभी आया एक पलमें···देखो मनी···

मनीषी : मेरे पास आओ ।····सच कहती हूँ, मुझे कहीं ले चलो । यहाँसे दूर—बहुत दूर जहाँ मैं हूँ, आप हों, और कोई न हो । जहाँसे फिर लौटना न हो ।

बादल : [अनबूझ-सा] लौटना न हो । क्या कह रही हो तुम ? यानी यानी····

मनीषी : [पूर्वतः] सच कहती हूँ । मैं यहाँ लौटना नहीं चाहती ।

बादल : आखिर क्यों ?

मनीषी : क्योंकि यहाँ कोई तुम्हें मुझसे छीन लेगा । सच कहती हूँ मुझे ऐसा लग रहा है जैसे कोई····

बादल : जैसे कोई मुझे तुमसे छीन रहा है । तो यह बात है । तो यह काल्पनिक भय तुम्हें सता रहा है । इसी भयके कारण तुम रातोंमें चीख-चीख कर उठती हो, इसी भयके कारण तुम्हें दौरे पड़ते हैं । इसी भयके कारण····

मनीषी : [विह्वल] स्वामी, स्वामी····

बादल : बोलो, मैं ग़लत कह रहा हूँ ? बोलो····

मनीषी : स्वामी ! मैं कुछ नहीं जानती, मैं कुछ नहीं समझती । मैं कायर हूँ, दुष्टा हूँ ।

बादल : आत्म-निन्दा पर-निन्दाके समान ही पाप है मनी, और यह भी याद रखो, तुम्हारी इच्छाके बिना मुझे तुमसे कोई नहीं छीन सकता ।

मनीषी : [पूर्वतः] स्वामी···स्वामी । मैं क्या करूँ···

बादल : कुछ नहीं, केवल मनको शान्त करो ।

कमला : [ऊपरसे] बादल क्या करने लगा रे । मैं कबतक बैठी रहूँगी ।

बादल : [ज़ोरसे] अभी आया मौसी, इसी क्षण । [**मनीसे**] तुम मेरा विश्वास नहीं करती तो मत करो, इस मौसीकी बात तो सुनो । परायी होकर भी कितना प्यार करती है । इसीके कारण तुम यहाँ हो । मेरी माँ कभी नहीं चाहती थी कि मैं तुमसे विवाह करूँ । वह तो मौसीने मुझे सहारा दिया, नहीं तो तुम्हारी माँके कारण····

मनीषी : [तीव्र] मेरी कोई माँ न थी । उस दुष्टाका···

बादल : मनीषी ! माँ इस संसारका एकमात्र शाश्वत सत्य है । सन्तानको उसका अपमान नहीं करना चाहिए ।

[**गमन, तीव्र संगीत, मनीषी कई क्षण ठगी-सी शून्यमें ताकती है, फिर बोल उठती है ।**]

मनीषी : क्या···क्या कह गये वह ! माँ इस संसारका एकमात्र सत्य है । सन्तानको उसका अपमान नहीं करना चाहिए ।··· सन्तानको उसका अपमान नहीं करना चाहिए····नहीं करना चाहिए । [सहसा उत्तेजित होकर] नहीं, नहीं, यह ग़लत है । सन्तानको माँका अपमान नहीं करना

चाहिए लेकिन माँ सन्तानका अपमान करे तो···माँ दुष्टा हो तो···मेरी माँ दुष्टा है, राक्षसी है, उसने मुझे बरबाद किया, मेरे जीवनमें काँटे बोये, अपने स्वार्थके लिए मेरा गला घोंटा। नहीं, नहीं, सन्तानके माँका अपमान करनेकी बात ग़लत है, एकदम ग़लत है···

मंजु : [बाहरसे आते हुए] एकदम ग़लत है। क्या एकदम ग़लत है····

मनीषी : ओह मंजु !

मंजु : हाँ, हूँ तो मैं ही, पर तुम किसे एकदम ग़लत ठहरा रही थीं।

मनीषी : [एकदम] वह आज आ रही है।

मंजु : कौन आ रही है ? तुम्हारी माँ।

मनीषी : [तीव्र] मेरी कोई माँ नहीं है। वह मेरी शत्रु है, शत्रु। मैं उससे नफ़रत करती हूँ····

मंजु : हाँ, यदि प्यार नहीं कर सकती तो नफ़रत ही करोगी। प्यार और नफ़रतके सिवा माँको कुछ और किया ही नहीं जा सकता, लेकिन मनी ! विद्वान् लोग कहते हैं कि प्यार और नफ़रत दोनोंका अर्थ एक ही है···

मनीषी : मंजु ! मैं अर्थ जानना नहीं चाहती। मैं उससे बचना चाहती हूँ।

मंजु : भूकम्पसे बचना चाहती हो···

मनीषी : मंजु ! मुझे उपदेश मत दे। यह पत्र पढ़···[पत्र देती है]

मंजु : [क्षणिक मौन] हूँ, तो बात यहाँतक पहुँच गयी। वह तुम्हें देखे बिना नहीं रह सकती और तुम उसे देख नहीं सकतीं।

मनीषी : मैं उसे देखना नहीं चाहती। मैं उससे मिलना नहीं चाहती। वह अपनेको कैसी माँ कहती है कि जब बेटीको ज़रा-सा सुख मिला तो आ पहुँची विष पिलाने।

मंजु : शुक्र है तुमने अपनेको उसकी बेटी माना तो···

मनीषी : मंजु ! तुझे इतना सुख मिलता है कि तेरा सिर फिर गया है।

मंजु : सुख तो अपने अन्दर है। कहींसे मिलता नहीं, पगली। और जैसा मेरा सिर फिरा भगवान् करे सबका फिरे।

मनीषी : मंजु ! तू यहाँसे चली जा।

मंजु : अच्छा···मैं चली····

मनीषी : ओ मंजु ! मंजु !! तू समझती क्यों नहीं ? तू मेरी सहायता क्यों नहीं करती ? मेरी माँ यहाँ आ गयी और मेरे पति और उनकी माँको पता लग गया तो···

मंजु : तो ग़ज़ब हो जायेगा। तेरी सास कुछ समझे या न समझे पर पुरुष बड़े शक्की होते हैं।

मनीषी : यही तो···

मंजु : अच्छा ज़रा बैठ जाऊँ। [बैठकर] लो एक काम करो।

मनीषी : क्या ?

मंजु : तुम्हारी यह मौसी तुम्हें बहुत प्यार करती है।

मनीषी : वह प्यारके अलावा और कुछ कर ही नहीं सकती। न कोई नाता, न कोई रिश्ता; दूर-दराजका सम्बन्ध तक नहीं लेकिन प्यार इतना कि···

मंजु : प्यार करनेके लिए नाते-रिश्तेकी आवश्यकता नहीं होती मनी ! बल्कि अकसर ये नाते-रिश्ते प्यारको राहके रोड़े बन जाते हैं।

मनीषी : ठीक कहती हो, लेकिन अब तो तुम मुझे एक काम करने-को कह रही थी।

मंजु : हाँ, वही तो कहती हूँ। तुम सब बातें इस मौसीसे कह दो।

मनीषी : [काँपकर] क्या····?

मंजु : हाँ, तुम मौसीसे कह दो कि तुम्हारी माँ तीन महीनेसे तुम्हें पत्र लिख रही है। वह तुमसे मिलना चाहती है। वह आज आ रही है····

मनीषी : यह सब उनसे कह दूँ····

मंजु : हाँ।

मनीषी : लेकिन वह आ क्यों रही है? उसे यहाँ आनेका अधिकार क्या है? वह मेरी कौन होती है? उसके कारण···

मंजु : उसके कारण क्या हुआ वह मैं सब कुछ जानती हूँ, लेकिन एक बार तुम मौसीसे कह देखो न।

मनीषी : कहनेसे कोई लाभ नहीं। मैं यहाँसे भाग जाऊँगी। मैं उसे देख नहीं सकती····

मंजु : [हँसकर] देख तक नहीं सकती? हूँ····हूँ····हूँ····देख तक नहीं सकती। नहीं मनीषी! अपनेको धोखा मत दो। तुम उसे देखनेको आतुर हो। तुम मन ही मन उसके रूपकी कल्पना करती हो। तुम अपने दिलमें उसकी मूर्ति बनाती हो····

मनीषी : [कड़ककर] मंजु, बन्द कर यह बक-बक····

मंजु : सच्ची बातको अकसर लोग बक-बक कह देते हैं। तेरा इसमें कोई अपराध नहीं है। फिर तेरे मनमें तेरी माँकी जो मूर्ति है वह बड़ी भयानक है। है न? उसका मुख क्रोधसे विकृत है, उसकी आँखें नफ़रतसे लाल हैं, उसके

दाँत आगेको निकल आये हैं। उसके बाल रूखे और उलझे हैं....

मनीषी : मंजु, मंजु ! तुझे हुआ क्या है ? तू मुझे जला क्यों रही है ?

मंजु : क्योंकि जले हुएको जलानेमें मज़ा आता है। [हँस पड़ती है] पगली, मेरी, बात मान ले और....

[बादलका प्रवेश]

बादल : ओ मंजु आयो है। अरे भई ! तुम अपनी सखीको समझाती क्यों नहीं ? यह क्यों जलती रहती है ?

मंजु : वाह भाई साहब ! बादल होकर मुझसे कहते हो कि मैं किसीकी जलन बुझाऊँ।

बादल : भई, हम तो गरजनेवाले बादल हैं, बरसते नहीं।

मंजु : बस बिजलियाँ गिराते हैं।

बादल : जो तुम समझो। मैं दफ़्तर चला। सुनो मनी ! मैंने जानेका निश्चय कर लिया है। अभी जाकर छुट्टीका प्रबन्ध करता हूँ। कल ही चल सकते हैं।

मंजु : बाहर जा रहे हो ? मुझे भी ले चलोगे ?

बादल : तू चल सकती है, सच !

मंजु : अरे भाई साहब ! हमें कौन ले चलता है। सब कहनेकी बातें हैं।

बादल : बस इतनी जल्दी हथियार डाल दिये। अच्छा, मैं चला।

मंजु : भाई साहब ! मैं भी आ रही हूँ। अच्छा मनी ! मैं भी चली। [धीरेसे] घबरानेकी कोई बात नहीं। सब बातें मौसीको बता देना, फिर जो कुछ होगा देखा जायेगा। [जाना]।

मनीषी : [खोयी-खोयी] मौसीको बता दूँ ! मौसी मुझे इतना प्यार करती है। परायी होकर भी कितनी अपनी है। कैसी

बात है जो अपने हैं वे शत्रु हैं; जो पराये हैं वे प्यार करते हैं····

[कमलाका प्रवेश]

कमला : मनीषी बेटी, आओ तुम भी कुछ खा लो।

मनीषी : [एकदम] मौसी ! मुझे आपसे कुछ बातें करनी हैं।

कमला : [पास आती हुई] क्या कहा तुमने ? मुझसे क्या करना है ?

मनीषी : कुछ बातें करनी हैं।

कमला : हाँ, हाँ, क्यों नहीं ? ज़रूर करो, पर आज मुझे ज़रा जल्दी जाना है। कल न कर लोगी।

मनीषी : नहीं मौसी, अभी करूँगी। मौसी, आप मुझे कितना प्यार करती हैं····

कमला : अच्छा, अच्छा कर, पर····अरे यह क्या, आँखोंमें पानी क्यों भर आया ?

मनीषी : [रुआँसी] मौसी, मैं बड़ी अभागिन हूँ।

कमला : ऐसा घर-वर पाकर भी जो भाग्यको कोसते हैं वे सचमुच अभागे ही होते हैं। लेकिन मैं कहती हूँ खबरदार जो····

मनीषी : मौसी आप समझीं नहीं। इसी सुखके कारण मैं किसीकी आँखका काँटा बन गयी हूँ। वह मेरे पतिको मुझसे छीन लेना चाहती है।

कमला : क्या कहा। कोई क्या करना चाहता है ?

मनीषी : मेरे पतिको····

कमला : कौन है ? कौन है ?

मनीषी : मेरी माँ।

कमला : [ठगी-सी] क्या कहा तुमने ? तुम्हारी माँ ?

मनीषी : हाँ।

कमला : लेकिन तुम्हारा तुम्हारी माँसे क्या सम्बन्ध ?

मनीषी : उसने मुझे ढूँढ़ निकाला है। वह मेरे पास आना चाहती है।

कमला : मैं समझी नहीं।

मनीषी : उसने मुझे पत्र लिखा है। वह बराबर तीन महीनेसे मुझे पत्र लिख रही है।

कमला : तीन महीनेसे पत्र लिख रही है। कहाँसे ?

मनीषी : इसी शहरसे।

कमला : वह इसी शहरमें है और तुमसे मिलने नहीं आयी।

मनीषी : [आवेश] मैं उससे मिलना नहीं चाहती। मैं उससे नफ़रत करती हूँ। जो अपने सुखके लिए मुझे चार वर्षकी आयुमें छोड़कर चली गयी, जिसने मुझे माँके सुखसे वंचित किया, जिसने मुझे अभाव और अपमानमें तड़पनेको विवश किया वह मेरी माँ होनेका दावा कैसे कर सकती है ?

कमला : मनीषी ! शान्त हो बेटी। तेरी सारी कहानी मैंने सुनी है। तेरे दर्दको मैं समझती हूँ। तेरे पिताका जब देहान्त हुआ था तब तू दो वर्षकी थी। तेरी माँ युवती थी। दो साल उसने रो-रोकर काटे पर फिर वह वहाँ न रह सकी। तेरे बाबाके विरोधके बावजूद वह चली गयी।

मनीषी : [करुण स्वर] दादी कहती थी कि बाबाने उसके पैरोंमें टोपी रख दी लेकिन····लेकिन····

कमला : मैंने सुना है बेटी, सब कुछ सुना है। यह भी सुना है कि वह तुम्हें ले जाना चाहती थी, पर तुम्हारे बाबाने तुम्हें नहीं दिया।

मनीषी : नहीं, नहीं, यह ग़लत है। वह मुझे ठुकरा गयी। वह मुझे प्यार नहीं करती थी। वह अपनेको, अपने सुखको प्यार करती थी।

कमला : और तुम अपने सुखको प्यार करती हो। इसमें उसने बुरा क्या किया। दुनियामें ऐसा ही होता है!

मनीषी : [काँपकर] मौसी!

कमला : मैं ग़लत कहती हूँ। तुम उससे इसीलिए तो नफ़रत करती हो कि उसने तुम्हारे सुखका ध्यान नहीं रखा।

मनीषी : मौसी [एकदम टूटकर] मौसी, आप नहीं जानतीं कि मुझपर क्या-क्या बीती है। मैं कितने अभावमें तड़पी हूँ। कैसे-कैसे अपमानकी आगमें झुलसी हूँ। सब बच्चे माँ-बापकी बातें करते थे और मैं रोती रहती थी। सब बच्चोंके माँ-बाप उन्हें प्यार करते थे और मैं प्यारके दो शब्दोंके लिए तरसती रहती थी। माँ-बाप बहुतोंके मर जाते हैं तब दूसरे लोग उन बच्चोंसे सहानुभूति प्रकट करते हैं। पर....पर....मुझे वे वेश्याकी बेटी तक कह देते थे।

कमला : [काँपकर] क्या, क्या कह देते थे। वे सब दुष्ट थे, पशु....पापी....

मनीषी : और मेरी माँ क्या थी। सती....साध्वी...

कमला : तुम्हारी माँ न सती थी न साध्वी, वह एक स्त्री थी। एक ऐसी स्त्री जो सती होनेका ढोंग न रच सकी।

मनीषी : मौसी! आप माँका पक्ष ले रही हैं।

कमला : जिसपर आक्रमण किया जाता है उसका पक्ष लेना ही चाहिए। [हँसकर] क्या मैंने तुम्हारा पक्ष नहीं लिया। क्या....

मनीषी : मैं जानती हूँ। मैं सब कुछ जानती हूँ। उन्होंने मुझे बताया था कि तुम्हारे कहनेपर ही ये लोग मुझे स्वीकार कर सके हैं। तुम्हारी कृपासे ही मैं यहाँ हूँ। आपने तब मेरी रक्षा की तो आज भी मुझे बताइए कि मैं क्या करूँ। मेरी मांको अब पन्द्रह वर्ष बाद क्या प्रेम उमड़ा है कि वह मुझसे मिलनेको बेचैन। उससे मेरा सुख क्यों नहीं देखा जाता ? क्यों मेरे सौभाग्यको दुर्भाग्यमें पलट देना चाहती है ?

कमला : तुम्हारा विचार है कि उसके आनेसे ये लोग नाराज़ होंगे।

मनीषी : अवश्य होंगे। जिसकी माँ दूसरोंके पीछे भागती फिरी उसकी बेटीका क्या भरोसा। फिर मौसी, पुरुष कितने शक्की होते हैं ?

कमला : पुरुष शक्की होते हैं या नहीं पर तुम अवश्य हो। उसके साथ कायर भी हो। स्वार्थी कायर ही होते हैं। क्या तूने बादलसे कहा····

मनीषी : नहीं उनसे तो नहीं कहा। उनसे कहती तो···

कमला : तो वह तुझे घरसे निकाल देते। इतना अविश्वास ! इतना धोखा ! इतना स्वार्थ ! अब समझी, यह सब रोग, यह दौरे, ये सब इसी कारण थे। मनीषी, अब अपनेको और धोखा न दे। माँ आ रही है तो उसका स्वागत कर। मैं अभी जाकर बादलको बुलवाती हूँ···[गमन]

मनीषी : मौसी ! मौसी !! सुनो तो····मौसी, उन्हें न बुलवाओ। उनसे कुछ न कहो। मौसी···ओह ! गयी। ओह यह क्या हो गया ? मैंने अपने स्वार्थके कारण उनसे मांके आनेकी बात छिपायी। मैं अपने सुखके कारण ही मांसे

नफ़रत करती हूँ। नहीं, नहीं, यह ग़लत है। यह ग़लत है। यह नहीं हो सकता''''[मंजुका प्रवेश]

मंजु : क्या नहीं हो सकता। तू हर वक़्त क्या बड़बड़ाती रहती है।

मनीषी : मंजु! मौसीने सारा दोष मेरे सिरपर डाल दिया। मुझे स्वार्थी कहा और कहा कि अपने सुखके कारण ही मैं अपनी माँसे नफ़रत करती हूँ।

मंजु : सच, ऐसा कहा ?

मनीषी : वह उन्हें बुलवा रही है। वह उनसे सब कुछ कह देना चाहती हैं।

मंजु : वह तो अबसे बहुत पहले कह देना था।

मनीषी : तू भी ऐसा ही सोचती है।

मंजु : यही सोचकर तो आयी हूँ।

मनीषी : मंजु, मेरी कुछ समझमें नहीं आ रहा। मैं पागल हो रही हूँ। मैं यहाँसे भाग जाना चाहती हूँ। चल मंजु, यहाँसे चल''''

मंजु : हाय दैया, मेरे साथ भागना चाहती है, नारी नारीके साथ ? [एकदम] मनीषी, यह कैसी दुर्बलता है। अपनेको सँभाल। न, न, रो मत, सुन [धीरे-से] माँको आने दे। आनेपर उसे खूब डाँटना, कोसना और घरसे निकाल देना। तब ये लोग बहुत प्रसन्न होंगे और'''

बादल : [हर्षसे पुकारता जाता है] अरे मनी, मनी! छुट्टीका प्रबन्ध हो गया। ओह मंजु, तुम हो।

मंजु : क्या करूँ अपनी अनाथ बहनकी सार-सँभाल करने आना ही पड़ता है।

बादल : काश कि हम भी अनाथ होते।

मंजु : अब हो जाओ। वह तो सोचनेकी बात है।

बादल : यानी सोचूँ तो अनाथ, नहीं तो····

मंजु : सनाथ····नमस्कार, मैं चली। मेरे अनाथ-नाथ भी पधार रहे होंगे। उन्हें सनाथ कर आऊँ। फिर तुम्हारी तैयारी करवाऊँगी। [गमन]

बादल : [हँसता हुआ] अनाथ-नाथ ! भई खूब। यह मंजु भी खूब है। क्यों मनी, तुम दोनों एक शहरकी हो ?

मनीषी : जी।

बादल : लेकिन दोनोंमें कितना अन्तर। एक अनाथ, दूसरी अनाथ-नाथ····

मनीषी : [एकदम] आपको मंजु बहुत अच्छी लगती है।

बादल : न, न, एकदम नहीं। मुझे अनाथ-नाथोंसे डर लगता है। बाबा रे, कैसा कड़वा सत्य बोलते हैं···अच्छा मनी ! मंजुके भी तो माँ नहीं है।

मनीषी : जी हाँ। इसकी माँ बचपनमें मर गयी थी, पर मेरी माँ ज़िन्दा है।

बादल : सुना तो है, पर देखा नहीं।

मनीषी : आज देख लेना।

बादल : क्या ! क्या कहा ? ओ आँ, मौसी कहती थी कि आज तुम्हारी माँ आ रही है····तुमने पहले मुझे क्यों नहीं बताया ? इसीलिए न कि तुम मेरा विश्वास नहीं करती थी।

मनीषी : [एकदम काँपकर] नहीं, नहीं यह बात नहीं।

बादल : तब !!

मनीषी : [एकदम] मैं बताती हूँ, उसका कारण यही था कि आप मुझपर···

बादल : शंका करने लगते····

मनीषी : [एकदम] नहीं, नहीं, यह बात नहीं····यह बात नहीं···

बादल : तो क्या बात है ?

मनीषी : [विह्वल] मैं कैसे समझाऊँ ? कैसे बताऊँ ? [एकदम] मैं उससे नफ़रत करती हूँ। मैं उससे मिलना नहीं चाहती···

बादल : तो यह बात मुझे पहले बतानी थी। पर ख़ैर अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। वह कब आ रही हैं ?

मनीषी : बस अब कभी भी आ सकती है।

बादल : तो फिर तुम उसका स्वागत करनेको तैयार हो जाओ।

मनीषी : नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता। मैं उससे नहीं मिल सकती। मैं उससे नफ़रत करती हूँ। मैं उसे देख ही नहीं सकती। मैं उसे मार डालूँगी····

बादल : यह तो और भी अच्छा होगा····

मनीषी : आप तो मज़ाक़ करते हैं।

बादल : मज़ाक़ मैं करता हूँ ? यह तूफ़ान मैंने मचा रखा है ? चलो उठो, हम अभी यहाँसे चलते हैं लेकिन···

मनीषी : स्वामी····

बादल : लेकिन यह सोच लो कि हम हमेशाके लिए कहीं नहीं जा सकते।

मनीषी : स्वामी ! मैं बहुत दुर्बल हूँ। मैं आपको कैसे समझाऊँ ?
[मंजुका तेज़ीसे प्रवेश]

मंजु : मनी, मनी, माँ आ गयी।

मनीषी : क्या····

बादल : माँ आ गयीं ! कहाँ····

मनीषी : नहीं, नहीं, दरवाजे बन्द कर दो, वह नहीं आ सकती, वह नहीं आ सकती। मैं उससे नहीं मिलूँगी, स्वामी! मैं उससे नहीं मिलूँगी। मैं उसे देख नहीं सकती। मुझे...

बादल : अब कुछ नहीं हो सकता, हमें माँका स्वागत करना होगा।

मनीषी : नहीं, नहीं, मैं स्वागत नहीं कर सकती। मैं उसका अपमान करूँगी। मैं उसे घरसे निकाल दूँगी।

[डॉक्टरका प्रवेश]

डॉक्टर : किसे घरसे निकाल दोगी? शायद माँको, लेकिन वह तो आ ही नहीं रही।

मनीषी : नहीं आ रही?

बादल : आपसे किसने कहा?

डॉक्टर : उसीने। अभी इधर आ रहा था तो रास्तेमें मिल गयी।

मनीषी : मेरी माँ आपको मिल गयी। आप उसे जानते थे।

डॉक्टर : उसने स्वयं बताया कि वह मनीषीकी माँ है और अब वह उसके घर नहीं जायेगी।

मनीषी : क्यों नहीं आयेगी?

डॉक्टर : कहती थी, मनीषी मुझसे नफ़रत करती है। वह मेरी सूरत नहीं देखना चाहती। वह समझती है कि मेरे आनेसे उसके सुखी जीवनमें तूफ़ान आ जायेगा।

बादल : यह कहा उसने। समझदार जान पड़ती है। मनी! तुम्हारी माँ....।

मनीषी : वह इस समय है कहाँ?

डॉक्टर : इस समय मेरे घरपर है।

बादल : तो आप उन्हें अपने घर ले गये।

डॉक्टर : मैं उसे क्यों ले जाता? घर उसीका है।

मनीषी : क्या, क्या कहा। घर उसीका है।

डॉक्टर : हाँ बेटी ! जो मेरे घरकी मालकिन है वही तुम्हारी माँ है।

मनीषी : क्याऽआऽआ····।

बादल : हाँ, मनी ! जिसे अबतक मौसी कहती आयी हो, वही तुम्हारी माँ है। उनसे नफ़रत कर सको तो··· [मनीषी बीचमें नहीं-नहीं करती है।]

मनीषी : [पागल-सी] नहीं, नहीं, यह सब ग़लत है। यह नहीं हो सकता। [भागती है]

बादल : [पुकारता हुआ] मनी···मनी···तुम जा कहाँ रही हो ?

डॉक्टर : वह माँके पास जा रही है। [हँसता है] कबीर साहब कहते हैं कि हमको भी चलना चाहिए। चलनेमें ही सुख है। आओ बादल, आओ मंजू···

[डॉक्टर व बादल तेज़ीसे बाहर जाते हैं। आँखोंमें पानी-भरे मंजु भी पीछे-पीछे जाती है।]

● ●

रक्त-चन्दन

[पात्र : राधाकृष्ण : गौरीका पिता, गुल : राष्ट्रीय कॉन्फ्रेन्सका एक सैनिक, गौरी : राधाकृष्णकी पुत्री, सोमनाथ, सादिक़ : किसानोंके वेशमें दो सैनिक, तीन हमलावर क़बायली सैनिक। समय : युद्धकालीन काश्मीर, १९४७ का अक्टूबर मास। स्टेजपर हलका प्रकाश। चारों ओर टूटे मकानोंका ढेर, ईंट-पत्थर आदि; लकड़ीके दरवाज़े; सामने एक मकानकी दीवार है जिसका दरवाज़ा बन्द है। खिड़की कई बार आहिस्ता-आहिस्ता खुलती है और बन्द होती है। उसीके साथ प्रकाश घटता-बढ़ता है। प्रकाशके साथ स्वर भी उभरते हैं और उसके सहारे कुछ शक्लें भी उभरती हैं। कहीं दूर खटका होता है, गोली चलती है और खिड़कीपर-से वे मूर्तियाँ भूतकी तरह ग़ायब हो जाती हैं। कुछ क्षण सन्नाटा रहता है फिर दरवाज़ा खुलता है और तीन मूर्तियाँ धीरे-धीरे बाहर आती हैं। तीनों पुरुष हैं। वे चारों ओर देखते हैं और फिर धीरे-धीरे बातें करते हैं।]

गुल : अभी कोई डर नहीं है। मैंने उन्हें ऐसा उल्लू बनाया है कि वे कमसे कम दो-तीन घण्टे इधर आनेकी बात नहीं सोच सकते। साले कहीं औरतोंकी तलाशमें घूम रहे होंगे।

सोमनाथ : तुम ठीक कहते हो! वे कुछ नहीं चाहते, न जर, न ज़मीन। वे तो औरत चाहते हैं, औरत। उन्होंने··· उन्होंने [स्वर भर्रा जाता है।]

गुल : हिम्मत सोमनाथ! हिम्मतसे काम लो। [उसे थपथपाता है]

सोमनाथ : मैं समझता हूँ, गुल! सब-कुछ समझता हूँ। सब-कुछ देखता हूँ लेकिन मैं क्या करूँ? रह-रहकर मेरी बीवीका

चेहरा मेरी आँखोंमें उभर आता है। रह-रहकर जैसे वह मेरे कानोंमें कह जाती है···'ज़िन्दगी-भर तुमने मेरी रक्षा करनेकी क़सम खायी थी; लेकिन उस दिन तुम्हारे देखते-देखते वे जालिम लुटेरे मुझे उठाकर ले गये।' [भावावेग] आह गुल! [अवकाश] वह देखो—वह मेरी बीवी मुझे देख रही है। उसकी वे आँखें····वे आँखें···

गुल : वे आँखें! वे आँखें ही तुम्हारी ताक़त बनेंगी, सोमनाथ! तुम्हारी बीवीकी आँखें नहीं है। वे तुम्हारे वतनकी आँखें हैं। तुम्हारे ख़ूबसूरत वतनकी ख़ूबसूरत आँखें जो आज तुम्हें ख़ूनसे खेलनेको पुकार रही हैं।

सादिक़ : ख़ूनसे नहीं ज़िन्दगीसे कहो, गुल! आज मेरे वतनकी ज़िन्दगी मोरचेपर डटी हुई है।

सोमनाथ : और उसी ज़िन्दगीको ये लुटेरे पैरोंसे रौंद डालना चाहते हैं।

सादिक़ : लेकिन ज़िन्दगी उन्हें रौंद डालेगी, सोमनाथ! वह साँपकी तरह है जो ठुकरानेवालेको डँसकर ही छोड़ता है।

सोमनाथ : मुझे यक़ीन है। मुझे यक़ीन है। मैं डरता नहीं। तुम लोग अपने मनमें कुछ और न सोच बैठना। मैं पूरी तरह तैयार हूँ।

गुल : मैं जानता हूँ सोमनाथ! तुम्हें डरनेकी कोई ज़रूरत नहीं है। जो वतनकी राहमें मिट जाते हैं आनेवाली नस्लें उनके क़दमोंके निशानोंको चूमा करती हैं।

सादिक़ : और तवारीख उनकी शोहरतका डंका पीटती है।

सोमनाथ : मैं यह सब कुछ नहीं जानता। मैं तो इतना ही जानता हूँ—यह आज़ादीकी लड़ाई है। मेरी बीवी उसके लिए मिट गयी। मैं भी मिट जाना चाहता हूँ; लेकिन उन्हें

मिटाकर। उन्हें यह बताकर कि किसीकी आज़ादीपर हमला करना अपनी ज़िन्दगीपर हमला करना है।

सादिक़ : और अपनी ज़िन्दगीपर हमला करना है मौत !

गुल : बेशक उन्हें मौत मिलेगी, एक बुज़दिल इनसानकी मौत।

सोमनाथ : बेशक वे बुज़दिल हैं। हमलावर हमेशा बुज़दिल होता है। [उन्हें जोश आ जाता है। स्वर तीव्र हो उठते हैं। तभी दरवाज़ा फिर खुलता है। एक सिर दिखाई देता है।]

राधाकृष्ण : शी शी शी····तुम लोग क्या कर रहे हो ?

गुल : [एकदम] ओह्···कोई बात नहीं। हम जा रहे हैं। जब चारों तरफ़ आग बरसती हो तो ख़ूनको जोश आ ही जाता है। अच्छा सोमनाथ; तुम जा सकते हो। और तुम भी सादिक़। याद रखना, हिम्मत न टूटने पाये। फ़ौज आनेवाली है।

सोमनाथ : तुम यक़ीन रखो। यह हमारी आज़ादीकी लड़ाई है गुल। इसे फ़ौजें नहीं लड़ेंगी, हम लड़ेंगे।

सादिक़ : बेशक हम लड़ेंगे। हम तैयार हैं। हमारा ख़ून झरनोंकी तरह मचल-मचलकर बह उठनेको उतावला है।

सोमनाथ : और हमारी ज़िन्दगियाँ चिनारके लाल अंगार पत्तोंकी तरह मादरे वतनको ढँक लेना चाहती हैं।

राधाकृष्ण : फिर वही जोश, फिर वही बातें। तुम लोग जाते क्यों नहीं ?

सादिक़ : [एकदम] ठीक है राधाकृष्ण। आदाबअर्ज़, मैं चला।

सोमनाथ : और मैं भी, आदाबअर्ज़ गुल, आदाबअर्ज़ राधाकृष्ण ! [दोनों एकदम मुड़ते हैं]

राधाकृष्ण : आदाबअर्ज़।

गुल : आदाबअर्ज़ सोमनाथ ! आदाबअर्ज़ सादिक !

[दोनों आगे बढ़कर बाहर हो जाते हैं। एक क्षण सन्नाटा रहता है। फिर गुल मुड़ता है।

गुल : अच्छा काका; मैं भी चला।

राधाकृष्ण : हाँ, तुम्हें भी जाना चाहिए। चाँद छिप चुका है। और गौरीका ध्यान रखना। उसे श्रीनगर पहुँचाना ही होगा; नहीं तो····

गुल : [एकदम] कुछ नहीं, काका। तुम फ़िक्र मत करो। मैं कुछ-न-कुछ करके लौटूँगा। अच्छा मैं जा रहा हूँ, होशियार रहना। डरना मत। जल्दी वापस आऊँगा।

राधाकृष्ण : अच्छा, देखकर जाना और गौरीका ध्यान रखना।

गुल : ज़रूर, ज़रूर।

[शब्द दूर होकर मिटते हैं। राधाकृष्ण कुछ क्षण उस ओर देखता रहता है जिधर गुल गया है। उसी बीचमें खिड़की धीरे-धीरे खुलती है। एक कुमारीका सिर धीरे-धीरे सामने आता है। प्रकाश इतना धुँधला है कि स्पष्ट कुछ नहीं दिखाई देता। पर वह एक कुमारीका मुख है, उस कुमारीका जो भयातुर है। वह जैसे ही आगे झुकना चाहती है खट्-से शब्द होता है। राधाकृष्ण चौंकता है।]

राधाकृष्ण : कौन ?

गौरी : [भयातुर] कोई नहीं।

राधाकृष्ण : गौरी !

गौरी : काका।

राधाकृष्ण : [अन्दर जाकर द्वार बन्द करता है और खिड़कीके पास आता है] तुम क्यों आ गयीं ?

गौरी : वैसे ही देख रही थी, काका। वे लोग गये ?

राधाकृष्ण : हाँ बेटी, वे गये। हम भी अब जानेवाले हैं।

गौरी : हाँ, काका। चलो, बड़ा डर लगता है।

[सहसा कहीं शोर उठता है। गोली चलती है। वे दोनों काँपते हैं]

राधाकृष्ण : यह क्या गोली चली ? चलो, चलो, गौरी।

गौरी : [भयातुर] काका।

[गौरी एकदम राधाकृष्णसे चिपट जाती है। वह शीघ्रता-से उसे थामता है और खिड़की बन्द करता है। शोर पास आता है। वह स्पष्ट होता है। गन्दी गालियाँ, और वीभत्स हँसी पास आती जाती हैं। कुछ ही क्षणमें कई क़बायली वर्दियाँ पहने और हथियारोंसे लैस स्टेजपर प्रवेश करते हैं। उनकी चाल बताती है कि वे नशेमें चूर हैं। उन्होंने घासके जूते पहने हैं जो शब्द नहीं करते, पर उनका स्वर उसकी पूर्तिके लिए काफ़ी है। उन्होंने बन्दूकें लटकायी हैं और वे बेतहासा पागलोंकी तरह हँसते हैं और गाली देते हैं।]

प० क़बा० : [अट्टहास] खों, वहाँ तो कोई नहीं मिला। साला काफ़िर हमको फिर धोखा दिया। कहाँ है वह ? हम उसको अबी जानसे मार डालेगा। [बन्दूक़ तानता है]

दू० क़बा० : [और भी ज़ोरसे]—ओय, ओय, ओय, उधर क्या है ? उधर जला हुआ मकान है।

पहला : [उसी तरह]—वही, वही, हम उसीको मारेगा। उसने हमको धोका दिया है। उसने हमको दौलत नहीं दिया। औरत नहीं दिया। खों, तुमने इधर औरत देखा है ? कम्बख्त ये काफ़िर लोग कहाँसे रुपया लाता है ? कहाँसे औरत पैदा करता है ?

दूसरा : मालूम होता है कि काफ़िर लोग खुदाके मुन्शीको रिश्वत देता है।

पहला : क्या? तुमने क्या बोला? ख़ुदाको रिश्वत! ख़ुदाको रिश्वत…नई, नई, तुम झूठ बोलता है। ख़ुदा रिश्वत नहीं माँग सकता। तुम बी काफ़िर है, साला काफ़िर। हम तुमको मारेगा, अबी मारेगा।

[बन्दूक़ तानता है। तीसरा क़बायली प्रवेश करता है]

तीसरा : किसको मारेगा? कौन है इधर? तुम लोग इधर क्या कर रहा है! उधर क्यों नहीं जाता? [हँसकर] एक मौलवीने क़ुरानमें सौ-सौका नोट छिपाया है।

पहला : सौ-सौका नोट क्या औरत होता है? खूबसूरत औरत…. [अट्टहास]।

दूसरा : ख़ूबसूरत औरत !! ख़ूबसूरत औरत कहाँ है? हम औरत माँगता है।

तीसरा : तुमको औरत मिलेगा, तीन औरत, मौलवीके घरमें तीन परीज़ादियाँ हैं [हँसकर] तीन परीज़ादियाँ। खों….हम बी तीन। वो बी तीन।

दूसरा : [नाचता हुआ]। हम बी तीन, वो भी तीन, ओ ओ ओ….हम बी तीन, वो भी तीन।

पहला : वो बी तीन….तीन….तीन….तीन औरत….तीन ख़ूबसूरत औरत।

तीसरा : [उसी मस्तीमें] ऐ ऐ नाचता है! चलता क्यों नहीं? बहोत ख़ूबसूरत औरत है। बहोत ख़ूबसूरत। हा, हा, हा, तीन ख़ूबसूरत औरत और तीन सौ-सौका नोट। यहाँ न औरत है न दौलत। चलो-चलो। उधर सब-कुछ है। [नाटकीय ढंगसे] जर है, जन्नतकी हूर है, तीन सौ-सौ-

का नोट, तीन ख़ूबसूरत परीज़ादियाँ ! [हँसता है] ।

पहला : [अट्टहास] चलो, चलो, उधर ही चलो । [जाता है ।]

दूसरा : हाँ, हाँ, जन्नतमें चलो । वहाँ हूर हैं, हूर.... [जाता है ।]

[तीनों नाचते-गाते-हँसते जाते हैं । पहला फिर लौटता है और बन्दूक़ उठाकर मकानको लक्ष्य करके गोली दाग देता है । गहरा स्वर उठता है, फिर डूबने लगता है। कुछ क्षण गूँज उठती रहती है फिर सन्नाटा छा जाता है । कई क्षण बाद खिड़की फिर खुलने लगती है । राधाकृष्ण-का सिर उभरता है । उसकी गति बताती है कि वह चौकन्ना है । उसके साथ गौरीका सिर भी सामने आता है । तनिक-सी आहटपर वह पीछे हट जाता है । वह डरी हुई हिरनीकी भाँति चौकन्नी है । दोनों धीरे-धीरे बातें करने लगते हैं ।]

गौरी : काका !

राधाकृष्ण : हाँ ।

गौरी : गये ?

राधाकृष्ण : हाँ, गये मालूम होते हैं ।

गौरी : फिर तो नहीं आयेंगे ?

राधाकृष्ण : क्या पता, बेटी । शहरपर इन्हींका क़ब्ज़ा है । जब चाहे आ सकते हैं ।

गौरी : पर काका, गुल भइया तो कहते थे कि शायद वे आज रात इधर नहीं आयेंगे ।

राधाकृष्ण : कहता तो था । उसने कोशिश भी की थी और मुझे तो ऐसा लगता है कि यह जो तीसरा क़बायली आया था यह कोई गुलका भेजा हुआ भेदिया था ।

गौरी : भेदिया क्या, काका ?

राधाकृष्ण : कोई अपना आदमी क़बायलीका वेश बनाकर धोखेसे उन्हें कहीं और ले गया है।

गौरी : सच ?

राधाकृष्ण : लगता तो ऐसा ही है।

गौरी : पर काका, ये लोग ऐसे क्यों हैं ! क्यों आग लगाते हैं ? क्यों लूटते हैं ? क्यों मारते हैं ?

राधाकृष्ण : ये राक्षस हैं, बेटी ! इनका स्वभाव ही ऐसा है।

गौरी : ये राक्षस हैं ? नहीं काका, ये तो आदमी हैं। इन्हें देखकर डर तो लगता है, पर हैं तो आदमी ही।

राधाकृष्ण : डर लगता है; तभी इन्हें राक्षस कहते हैं, बेटी !

गौरी : डर तो बहुत लगता है, काका ! [अवकाश] काका ! मुझे माँके पास कब ले चलोगे ?

राधाकृष्ण : [अपने-आपसे] काश कि बेटी, तू भी अपनी माँके साथ श्रीनगर चली जाती।

गौरी : क्यों काका ! बोलते क्यों नहीं ? कब चलोगे ?

राधाकृष्ण : कब चलोगे ? बस अब चलेंगे ही। गुल इसी बातका इन्तजाम करने गया है। आज हमें यहाँसे चले जाना है। कुछ भी हो।

गौरी : सच काका ! तब तो बड़ा अच्छा रहेगा। रास्तेमें कुछ गड़बड़ तो नहीं है ?

राधाकृष्ण : नहीं बेटी ! आगे सब ठीक है। श्रीनगरसे हमारी फ़ौजें चल पड़ी हैं।

गौरी : तो श्रीनगर चलेंगे। ओह, यहाँ तो बड़ा डर लगता है। वहाँ माँ होंगी, दादी होंगी, भइया होंगे। कैसा अच्छा रहेगा ? क्यों काका, गुल भइया कब आयेंगे ?

राधाकृष्ण : [खोया-खोया-सा] बस आने ही वाला होगा।

गौरी : काका, गुल भइया बहुत अच्छे हैं।

राधाकृष्ण : [उसी प्रकार] अच्छा; वह फ़रिश्ता है, फ़रिश्ता। वह हमारा सहारा है। हमारे-जैसे हज़ारों बदनसीबोंका सहारा है। भगवान्! तुम उसकी रक्षा करना। कहीं उसे कुछ न हो....कहीं उसे कुछ न हो।....नहीं तो....नहीं तो....

[राधाकृष्ण भावावेशमें खोने लगते हैं। गौरी उन्हें देखती है]

गौरी : [एकदम] काका!

राधाकृष्ण : [चौंककर] हाँ बेटी!

गौरी : काका! तुम चुप क्यों हो जाते हो? मुझे डर लगता है। देखो चाँद भी छिप गया। बाहर कैसा अँधेरा है? मुझे यहाँसे ले चलो।

राधाकृष्ण : बस, अब चलेंगे। आओ अन्दर बैठें। यहाँ कोई आ सकता है? आओ....

[राधाकृष्ण गौरीको ऐसे पकड़ते हैं जैसे अपनेमें समेट लेंगे और अन्दरकी ओर मुड़ना चाहते हैं]

गौरी : क्यों काका, गुल भइया भी चलेंगे?

राधाकृष्ण : वह कैसे जा सकता है? यह उसका मकान है। वह यहाँ नहीं रहा तो....

[कहते-कहते वह खिड़की बन्द करना चाहता है कि बाहर खटका होता है, वे चौंकते हैं]

राधाकृष्ण : कौन?

[गुल स्टेजपर प्रवेश करता है। उसके पास एक छोटी-सी गठरी है]

गुल : मैं था, काका!

राधाकृष्ण : [हर्षसे] तुम आ गये गुल!

[खिड़कीसे हटकर किवाड़ खोलता है, गुल अन्दर आता है, दोनों खिड़कीपर आते हैं। गौरी गुलके पास आती है। वह बहुत प्रसन्न है]

गौरी : तुम आ गये भइया ! कब चलोगे !

[गुल कुछ अनमना-सा है। मुसकराना चाहकर भी मुखपर प्रसन्नता नहीं आ पाती]

गुल : बस, अभी कुछ देरमें चलेंगे ?

राधाकृष्ण : गौरी ! देखो तो बेटी समावारमें पानी है ?

गौरी : हाँ, है। चाय पियोगे ?

राधाकृष्ण : हाँ, गुलको चायकी ज़रूरत है।

गौरी : अभी बनाती हूँ।

[गौरी जाती है। राधाकृष्ण गुलको देखता है।]

राधाकृष्ण : क्या खबर है ?

गुल : खबर खराब है।

राधाकृष्ण : [चिन्ता] खराब ?

गुल : हाँ काका। खबर बहुत खराब है। उन लोगोंने गाँवके गाँव तबाह कर दिये हैं। वे बेगुनाह इनसानोंकी जिन्दगीपर मौत बरसा रहे हैं। उनके नापाक इरादे औरतोंकी अस्मत-को बरबाद कर रहे हैं। वे ज़मीन नहीं चाहते।

राधाकृष्ण : वे ज़मीन नहीं चाहते जर चाहते हैं ? और···जाने दो। वह सब तो मैं भी ज़ानता हूँ। पर सवाल यह है कि क्या किसी तरह गौरीको यहाँसे निकाला जा सकता है ? उसे डर लगता है।

गुल : उसे डर लगता है ? उसका डरना ठीक है। हैवानसे आदमी नहीं डरता; लेकिन जब इनसान हैवान बन जाता है तो उससे बस डरा ही जाता है।

राधाकृष्ण : ठीक है गुल, पर गौरीके जानेके बारेमें कुछ हुआ क्या ?

गुल : हाँ काका !

राधाकृष्ण : [एकदम प्रसन्न] सच ?

गुल : सच काका ! दुनियाकी कोई भी ताक़त उसे यहाँसे जानेसे नहीं रोक सकती ।

राधाकृष्ण : [कुछ चौंकता तो है, पर प्रसन्न होकर कहता है] गुल; तुम बहोत अच्छे हो । तुम्हारी वजहसे गौरी अबतक बची रही, नहीं तो····

गुल : [हँसकर] ठीक है, काका ! उस बातकी चर्चा क्यूँ करते हो पर····[एकदम फिर खोया-सा हो जाता है] कैसी दुनिया है यह ? कैसा निजाम है उसका ? [हँसता है]

राधाकृष्ण : गुल !

गुल : काका !

राधाकृष्ण : हालत कुछ बहुत खराब है ? क्या हमारी फ़ौजें नहीं आयीं ?

गुल : आनेवाली हैं ।

राधाकृष्ण : तो क्या वे लोग कुछ कर रहे हैं ?

गुल : कुछ नहीं काका ! उनका कोई डर नहीं है । वे इस वक़्त भी आ जायें, तो गौरी उन्हें नहीं मिल सकती ।

राधाकृष्ण : [चकित-सा] क्या मतलब ? तुम कहना क्या चाहते हो ?

गुल : [मुँहपर उँगली रखता है] आहिस्ता-आहिस्ता बोलो, काका ! दीवारें टूट चुकी हैं । हवासे अब कोई परदा नहीं है ।

राधाकृष्ण : [धीरेसे] ठीक है । मुझे बताओ, मैं क्या करूँ ?

गुल : [पोटली देता है] लो, यह लो । इसमें सलवार, कुल्ला, कुरता और जूते हैं ।

[राधाकृष्ण एकदम पोटली खोलता है और एक-एक चीज़को देखता है]

राधाकृष्ण : [प्रसन्न होकर] ओ हो ! ये सब तो उन-जैसे हैं। खूब ! इन्हें पहनकर मैं बिलकुल क़बायली लगूँगा।

गुल : और उनकी हदसे बाहर हो जाऊँगा।

राधाकृष्ण : हाँ, मैं तो हो जाऊँगा; लेकिन गौरी कैसे करेगी ?

गुल : गौरीके लिए भी मैं सब सामान ले आया हूँ।

राधाकृष्ण : क्या लाये हो ? देखूँ, कहाँ है ?

गुल : यह है।

[गुल जेबसे शीशी निकालकर आगे बढ़ाता है।]

राधाकृष्ण : [चौंककर] यह क्या····यह तो शीशी है। [हँसकर] इसमें क्या जादूकी दवा है ?

गुल : [गम्भीर स्वरमें] हाँ काका, इसमें जादूकी दवा है। इसे पीकर आदमी ऐसा ग़ायब हो जाता है कि उसे कोई भी नहीं पा सकता।

राधाकृष्ण : [ठगा-सा] सच ?

गुल : [बरबस हँसकर] लो देखो ! तुम तो पढ़ना जानते हो ?

राधाकृष्ण : [शीशीको रोशनीके पास ले जाता है, पढ़कर काँप उठता है] क्या····क्या····यह तो····यह तो ज़हर है। क्या तुम गौरीको ज़हर देना चाहते हो ?

गुल : [ढीला स्वर] काका !

राधाकृष्ण : [भयातुर] गुल ! गौरीको ज़हर देना होगा····गौरीको ज़हर····

गुल : काका ! और कोई रास्ता नहीं, कोई रास्ता नहीं। होता तो काका; काश कि मैं अपनी जान देकर भी गौरीको बचा पाता।

प्र-६२
२६५

राधाकृष्ण : [रुँधा हुआ स्वर] गौरीको ज़हर····गौरीको ज़हर, नहीं····नहीं····

गुल : [उसी तरह]···काका, मैं उसे नहीं बचा सकता; लेकिन उसे बेइज़्ज़त होते भी नहीं देख सकता। इज़्ज़त ज़िन्दगीसे बहुत क़ीमती होती है, काका ! बहुत क़ीमती।

राधाकृष्ण : [रोता है] लेकिन गुल····गुल····

गुल : रोते हो काका ! तुम्हारा रोना ठीक है। औलादकी मोहब्बत रुलाती ही है, लेकिन काका ! अब तुम रोते हो; पर जब तुम अपनी औलादकी इज़्ज़त अपनी आँखोंके सामने उन खूँखार बहशी डाकुओंके हाथोंसे लुटते देखोगे तब क्या करोगे ?

[गुलको जोश आता है। उसका धीमा पर आवेशपूर्ण स्वर गहरी गूँज पैदा करता है। राधाकृष्ण फूट-फूटकर रोता रहता है, बोलता नहीं। सहसा गौरीके आनेका स्वर उठता है। दोनों चौंकते हैं।]

गुल : काका ! गौरी आ रही है। उसे अपने आँसू मत दिखाओ।

राधाकृष्ण : गुल···गुल ! [राधाकृष्ण एकदम सीधा होकर आँसू पोंछता है। गौरी पास आती है।]

गुल : गौरी ! तुम बहुत अच्छी हो। मुझे इस वक़्त चायकी बड़ी ज़रूरत थी। बहुत थक रहा हूँ।

गौरी : तो लो, चाय पियो। बहुत है।

गुल : काकाके लिए भी है ?

गौरी : हाँ।

गुल : और गौरीके लिए भी !

गौरी : [हँसकर] मैं तो पी चुकी।

गुल : तो क्या हुआ ! अब हमारे साथ पियो । तुम्हारे लिए बाकरखानी लाया हूँ ।

गौरी : [बालोचित सरलतासे] कहाँ है ?

[जेबमें-से निकालता है]

गुल : लो । एक ही मिली है, तुम ही खाना ।

गौरी : और तुम ?

गुल : मैं तो खा आया हूँ ।

गौरी : काका नहीं खायेंगे ? [राधाकृष्णसे] काका, आधी तुम लो ।

राधाकृष्ण : [बहुत सँभलकर बोलता है पर स्वर भर्राया हुआ है ।] तुम्हीं खाओ, बेटी ! मेरे पेटमें दर्द है ।

गौरी : नहीं काका, तुम भी लो । पेटका दर्द ठीक हो जायेगा । हमें चलना भी तो है । कैसी अँधेरी रात है ? चाँद भी तो छिप गया ।

गुल : अच्छा हुआ जो छिप गया । वह हमारी मुसीबतको जानता है । अँधेरेमें हमें कोई नहीं देखेगा ।

गौरी : पर मुझे तो डर लगता है ।

गुल : डरकी दवा तुम्हारे काकाके पास है ।

गौरी : सच ? डरकी भी कोई दवा होती है !

गुल : हाँ, होती है । पर तुम पहले चाय तो दो ।

गौरी : ओ हो, वह तो मैं भूल ही गयी ।

[प्यालेमें चाय उँड़ेलती है । प्याले फूटे हैं ।]

गौरी : प्याले भी तो फोड़ गये ।

गुल : उन्हें फोड़ना ही आता है । वे जोड़ना नहीं जानते ।

गौरी : [प्याला देती हुई]····ऐसा कबतक रहेगा भइया ?

गुल : [घूँट भरता हुआ] बस, अब सवेरा हुआ ही चाहता है ।

सुना है कि हमारी फ़ौजें चल पड़ी हैं। इधर हम लोग भी तैयार हैं।

गौरी : [राधाकृष्णको प्याला देती हुई] लो काका ! [गुलकी ओर मुड़कर] तुम भी लड़ोगे !

गुल : अब तो सबको लड़ना होगा।

गौरी : पर मुझे तो डर लगता है।

गुल : [हँसकर] तुम अभी छोटी हो। पर तुम्हारे डरकी दवा मैं ले आया हूँ।

गौरी : [हँसकर] ओ हो ! वह तो मैं भूल ही गयी थी। काका, दो न कौन-सी दवा है !

राधाकृष्ण : [काँप उठता है। प्याला हाथसे छूट जाता है।] क्या···

गौरी : [एकदम] काका तुम्हारी चाय बिखर गयी।

राधाकृष्ण : [रुँधा स्वर] बिखर जाने दो। मेरे पेटमें दर्द कुछ तेज़ हो रहा है, गौरी। ओह····ओह····

[राधाकृष्णका मुँह बुरी तरह विकृत हो जाता है। आँखोंमें आँसू भर आते हैं। गौरी पास आकर हाथ पकड़ती है।]

गुल : [गम्भीर अर्थ-भरा स्वर] काका ! पेटके दर्दको ठीक कर लो। हमें भी चलना है, देर हो गयी तो वे लोग आ सकते हैं। इस बार उन्हें धोखा नहीं दिया जा सकता।

राधाकृष्ण : [सँभलता हुआ] ठीक है। मैं ठीक हूँ, गुल। मैं चलूँगा, अभी चलूँगा।

गुल : तो गौरीको उसकी दवा दे दो।

राधाकृष्ण : अभी देता हूँ। चाय पी लूँ। बेटी ! चाय और है ?

गौरी : है काका ?

राधाकृष्ण : तो दो न। बाकरखानी भी दो।

गौरी : [चाय उँड़ेलती है; बाकरखानी देती है] लो काका। और मुझे दवा दो।

राधाकृष्ण : अभी देता हूँ। [बाकरखानीका टुकड़ा गौरीके मुँहमें देता है।] लो खाओ।

गौरी : [भरा मुँह] काका, मैं तो खा ही रही थी।

गुल : पर काकाके हाथसे कहाँ खाया था ?

[हँसता है।]

गौरी : [हँसती है] अच्छा काका, दवा दो। फिर चलें।

गुल : हाँ दो काका ! गौरीको चलनेका बड़ा चाव है। ठीक भी है, बेचारी अपनी माँसे मिलेगी।

गौरी : और दादीसे, भइयासे।

गुल : हाँ, सबसे मिलना। काका, अब दवा दे दो, जल्दी करो।

राधाकृष्ण : [शीघ्रतासे] लो गुल, तुम ही दो। मैं ज़रा अन्दर देख लूँ।

[शीशी देते हुए हाथ काँपता है।]

गुल : [शीशी लेकर] हाँ, काका ! तुम ज़रूरी सामान बटोर लो। लो गौरी, यह दवा आँख मींचकर पी लो।

[राधाकृष्ण लड़खड़ाता है पर रुकता नहीं। गौरी दवाकी शीशी हाथमें लेती है।]

गौरी : आँख मींचनेकी क्या ज़रूरत है ? क्या कड़वी है ?

गुल : नहीं।

गौरी : तो लो, मैं ऐसे ही पी जाती हूँ। [शीशी खोलकर मुँहसे लगाती है।]

[दवा मुँहमें जाती है, चेहरा विकृत होता है, देखते-देखते पीछेको गिर पड़ती है और छटपटाने लगती है। मुँहसे अस्फुट स्वर निकलता है] का....

[गुल एकदम पुकारता है ।]

गुल : गौरी···

[राधाकृष्ण दौड़ा आता है ।]

राधाकृष्ण : [रोते हुए] गौरी···गौरी····इ-ही ही ही···

[फूट-फूटकर रोता है ।]

गुल : [रुँधा स्वर] काका····काका···

राधाकृष्ण : [चीत्कार करता हुआ] गौरी····गौरी····मेरी बेटी ! गुल, गौरी कहाँ गयी ? गौरी, तू तो अभी बोल रही थी । तू अभी कहाँ चली गयी । गुल, गौरी कहाँ गयी । उसे तूने मार डाला । गुल, तूने गौरीको मार डाला ।···

गुल : [रुँधा कण्ठ] काका! काका ! तसल्ली····तसल्ली करो···

राधाकृष्ण : [उसी तरह] तूने मेरी बेटी छीन ली, तूने मुझे बरबाद कर दिया और अब कहता है तसल्ली करो····गौरी····गौरी ····तू कहाँ गयी ?

गुल : [रुँधा पर गहरा स्वर] काका ! काका !! हमें यहाँसे चलना है । अभी चलना है ।

राधाकृष्ण : [जैसे सँभलता है] गुल····गुल····गौरी मर गयी ?

गुल : [गम्भीर स्वर] नहीं काका, गौरी बच गयी । वह भगवान्के पास चली गयी । वहाँ उसकी खूबसूरती और अस्मतका मोल-तोल करनेवाला कोई नहीं होगा ।···और काका, तुमने अपनी बेटीकी अस्मत ही नहीं बचायी, तुमने दुश्मनकी आँखोंमें धूल झोंकी है । लुटेरोंके मनसूबोंपर पानी फेरा है । तुमने वतनके दुश्मनोंसे वतनकी आबरूको बचाया है ।

राधाकृष्ण : [चकित-सा ऊपरको मुँह उठाता है] गुल····गुल···· तुम क्या कह रहे हो ?

गुल : ठीक कह रहा हूँ, काका ! उठो और वतनपर जान क़ुरबान करनेवाली बेटीको आगके सुपुर्द करो ।

[कहीं गोली चलती है, शोर उठता है ।]

राधाकृष्ण : [काँपकर] वे फिर आ गये गुल !

गुल : कोई डर नहीं, अब कोई डर नहीं काका ! हम तैयार हैं, लो उठो । गौरीको अन्दर ले चलो ।

[क्षणिक सन्नाटा, फिर शोर, राधाकृष्णका काँपना ।]

गुल : उठो काका ! वे आ गये तो····

राधाकृष्ण : [उठता हुआ] नहीं, नहीं, गुल ! जो इसको जीते जी नहीं छू सके वे मरनेपर भी नहीं छू सकेंगे ।

[कण्ठ रुक जाता है ।]

गुल : तुम बहादुर हो, काका !

[दोनों गौरीको उठाकर ले जाते हैं । शोर पास आता जाता है । खिड़की-द्वार दोनों बन्द होते हैं । गालियोंका शोर उठता है । दो क़बायली झूमते हुए स्टेजपर प्रवेश करते हैं ।]

प० क़बा० : खों काफ़िरने हमें कितना बेवक़ूफ़ बनाया । मौलवी तो पहले ही लुट चुका था । न वहाँ सौ-सौके नोट थे, न परीजादियाँ ।

दूसरा : वहाँ तो बस साला काफ़िर था, वही बोलनेवाला । क्या नाम था उसका ?

पहला : खों तुम रेडियोकी बात कहता है । [हँसता है] ओ हो हो हो, वह कहता था, वह बोलता है, गाता है, ओ हो हो····रेडियो गाता है ।

दूसरा : मैंने जब कहा कि गाओ, तो वह बोला तक नहीं । मेरे

हाथोंमें आते ही सालेकी ज़बान बन्द हो गयी। मैंने भी सालेको एक ही बारमें चूर-चूर कर दिया।

पहला : पर परीजादियाँ ? मुझे परीजादी चाहिए। मुझे औरत चाहिए, ख़ूबसूरत औरत। साला काफ़िर ख़ूबसूरत औरत होता है।

दूसरा : इधर कहीं ज़रूर औरत होगा, ज़रूर, ढूँढ़ो।

[तभी लकड़ियोंके जलनेका स्वर उठता है, कुछ प्रकाश भी आता है।]

पहला : खों, यह रोशनी कैसी ? कहीं आग है ?

दूसरा : आग ! इधर आग लग रहा है। उधर मेरे दिलमें भी आग लग रहा है। तुम देखो, खों, तुम देखो···

पहला : ओ ओ···इधर नहीं, उधर देखो, उधर। आग उधर लगा है।

दूसरा : उधर लगा है ! ठीक लगा है। जहाँ औरत नहीं है, जर नहीं है वहाँ आग ही लगना चाहिए। हम औरत माँगता है, औरत नहीं देगा तो आग लगेगा। खों, ख़ुदा इन्साफ़ करता है।

पहला : पर मुझे औरत चाहिए। इधर नहीं है, तो उधर चलो। चलो···

दूसरा : चलो, चलो। इधर चलो, उधर चलो। कहीं चलो।

[वे उसी मस्तीमें आगे बढ़ना चाहते हैं पर रुककर बन्दूक़ तानते हैं और जिधर रोशनी दिखाई देती है उधर दाग देते हैं। तेज़ शब्द उठता है। वे अट्टहास करते हैं।]

पहला : [अट्टहास] ओ हो हो हो, और आग लगना चाहिए, ख़ूब आग लगना चाहिए···

[दोनों जाते हैं । कई क्षण शोर उठता है फिर शान्ति छा जाती है । कई क्षण बाद खिड़की खुलती है । दो सिर उठते हैं]

गुल : गये; कैसे ख़ूँख़ार लोग हैं ?

राधाकृष्ण : [रुँधा स्वर] कैसी भयानक रात है ? कैसा भयानक नज़ारा है ?

गुल : और हम लोगोंने दुश्मनको कैसा छकाया । कैसा पस्त किया ? [आह खींचकर] और गौरीने मरकर भी हमारी कैसी मदद की । कैसी भली ? कैसी प्यारी लड़की थी ?

राधाकृष्ण : [कुछ कहना चाहता है पर रो पड़ता है] गुल ।

गुल : रोओ मत काका, गौरी एक बहादुर लड़की थी । रोना बहादुरोंकी बेइज़्ज़ती करना है ।

राधाकृष्ण : [आँसू पोंछकर] गुल, मैं क्या करूँ ? मैं बाप हूँ । मेरा दिल····

गुल : तुम्हारा दिल नहीं मानता । ठीक है । पर यक़ीन करो काका, मैं गौरीके फूलोंकी जी-जानसे हिफ़ाजत करूँगा । वह तुम्हारे सुरगसे भी ऊपर, तुम्हारे ध्रुव-लोकसे भी ऊपर गयी है । देख लेना काका, गौरींको लोग देवीकी तरह पूजेंगे ।

[राधाकृष्ण बराबर रोये जा रहा है ।]

गुल : चलो काका ; तुम्हें छोड़ आऊँ, चलो ।

[उसे वहाँसे पकड़कर ले चलता है । वे खिड़कीसे हटते हैं । द्वार खुलता है । दोनों क़बायलियोंके वेशमें बाहर जाते हैं । गुल द्वार बन्द करता है । राधाकृष्ण एकदम फूट-फूटकर रोता हुआ द्वारसे चिपक जाता है ।]

राधाकृष्ण : बेटी, बेटी, गौरी ई···ही····

[गुल उसे बाँहोंमें भरता है।].

गुल : काका ! तुम्हारी बेटी वतनपर क़ुरबान हुई है। उसी वतनके लिए अपनेको सँभालो। वतनको बचानेके लिए हमें अभी बहुत कुछ करना है। मुझे यक़ीन है कि गौरी-जैसी बहादुर बेटीका बाप बुज़दिल नहीं हो सकता।

राधाकृष्ण : [एकदम सँभलकर] हाँ गुल, मैं बुज़दिल नहीं हो सकता। नहीं, मैं बुज़दिल नहीं हो सकता। मेरे सामने मेरी बेटीकी मिसाल है। [आवेश] बेटी, यक़ीन रखो, मैं तुम्हारे ख़ूनका बदला लूँगा। मैं दुनियाको तुम्हारी कहानी सुनाऊँगा। मैं एक तूफ़ान पैदा कर दूँगा और उस तूफ़ानमें मेरे वतनका एक-एक दुश्मन तबाह हो जायेगा। गुल, तुम गवाह हो। गौरी तुम्हारे सुपुर्द है।

गुल : यक़ीन रखो, मैं उसको जानसे भी ज़्यादा प्यार करता हूँ। मैं अपना ख़ून देकर उसकी हिफ़ाजत करूँगा।

[दोनों धीरे-धीरे एक ओरको जाते हैं। राधाकृष्ण बार-बार मुड़ता है। पर गुल उसे प्यारसे थप-थपाकर ले जाता है। दूर आगकी रोशनी तेज़ होती है। स्टेजपर प्रकाश गहरा होता है; और परदा गिर जाता है।]

● ●

सवेरा
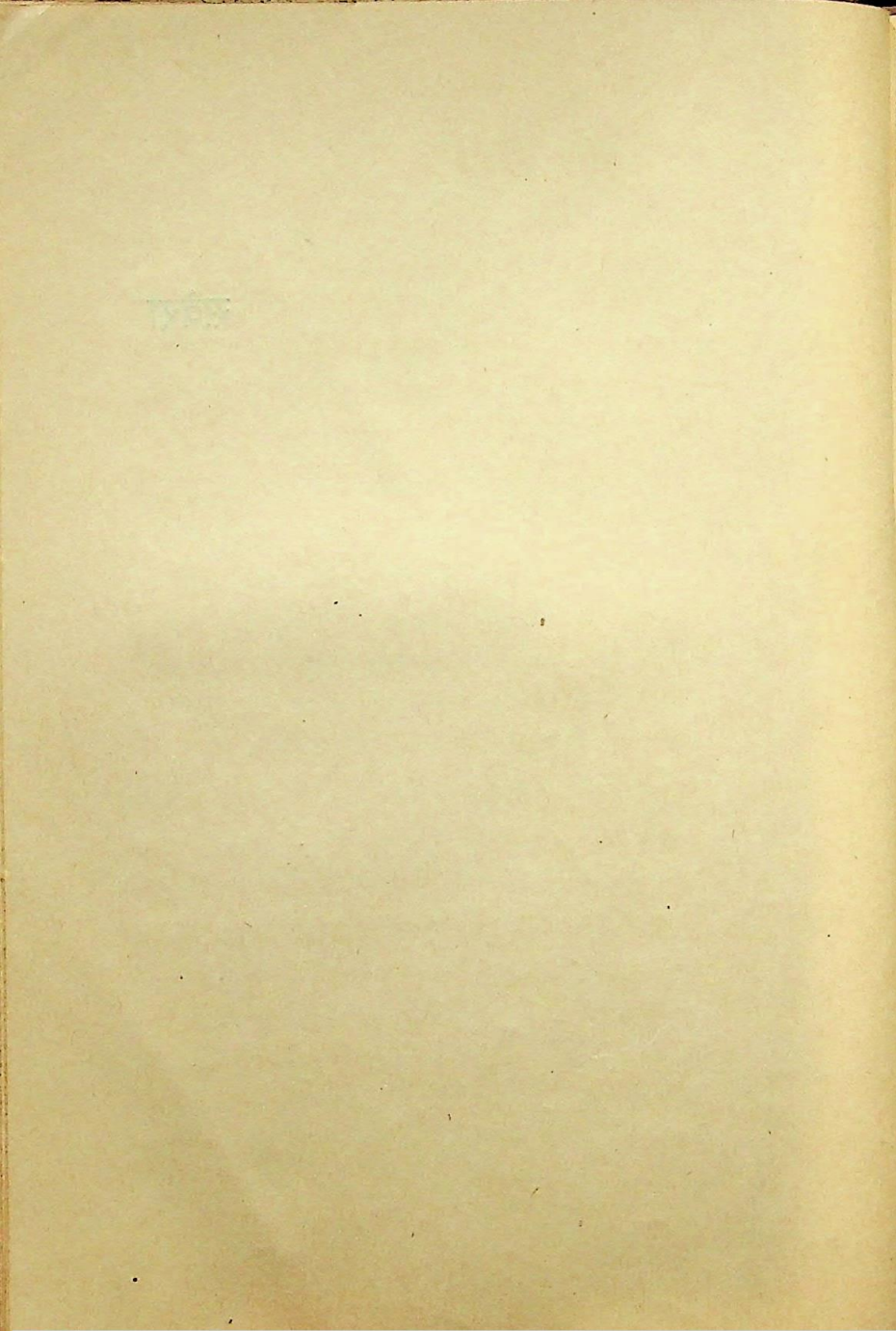
[पात्र : पहरुआ, एक असुन्दर युवती, एक युवक, एक बहरा कलाकार। परदा उठनेपर स्टेजपर गहन अन्धकार दिखाई देता है। नेपथ्यमें-से संगीतकी उठती हुई ध्वनि कौतूहल पैदा करती है। वह सूर्यकी गतिकी तरह धीरे-धीरे उभरकर तीव्र होती है, फिर धीरे-धीरे हलकी होती है। हलके होते-होते स्टेजपर अन्धकार कुछ धुँधला पड़ता है। दूर कहीं पहरुएकी आवाज़ उठती है।]

पहरुआ : खबरदार, होशियार, जागते रहना····हाँ····हाँ देखना, खबरदार···होशियार····

[फिर गीदड़की हू-हू, कुत्तोंकी भों-भों, कहीं दूर जैसे ज़ोरसे कोई बोला, पक्षी फड़फड़ाकर उड़े। साथ ही संगीत डूबता है, किसीके चलनेका स्वर होता है। स्टेजपर अन्धकारको चीरती आलोक-किरण चमक उठती है। उसमें एक नारीका चित्र उभरता है। किरणके पड़ते ही नारी सहमती है। प्रकाशमें उसका व्यक्तित्व उभरता है। वह युवती है, शरीर स्वस्थ है, आँखें निराशा और पीड़ासे पूर्ण हैं, गालोंपर आँसुओंके गहरे निशान अंकित हैं। होठ रह-रहकर काँपते हैं। शाल लपेटे वह तेज़ीसे आगे बढ़ती है। नया संगीत उभरता है। युवती स्टेजके बीचमें आते ही फिर ठिठकती है और चौकन्नी होकर चारों ओर देखती है। तभी स्टेजके किनारेपर आलोक-किरण एक युचकको ढूँढ़ निकालती है। वह भी कुछ भौंचक्का-सा गरदन उचकाकर, आगे देखता है। वह

एक स्वस्थ, सुन्दर युवक है। लम्बा और प्रभावशाली, उसके नेत्रोंमें दृढ़ता है, पर मुखपर हलकी चिन्ता है]

युवक : [स्वगत] एक युवती ! इस समय एक युवती ! अभी तो थी। अन्धकारमें कुछ दिखाई भी तो नहीं पड़ता। अवश्य उधर गयी है ! उधर ख़तरा है, जल्दी देखूँ, कहीं कुछ हो न जाये। न जाने क्या हो रहा है आजकल ? ज़रा-सी बात हुई और चल दिये ज़िन्दगीको ख़त्म करने। दो महीनेमें सात व्यक्ति इधर आकर मौतको गले लगा चुके, लेकिन मुझे उसे देखना चाहिए····देखना चाहिए। वह ऐसे नहीं मर सकती [शीघ्रतासे स्टेजके बीचमें आता है। आलोक-किरण युवतीपर पड़ती है। वह अब स्टेजके दूसरे किनारेपर है। युवक उसे देख लेता है। एकदम पुकारता है।]

युवक : ठहरो !

[युवती सहसा काँपकर मुड़ती है। उसका मुख पीला पड़ जाता है। वह चीख़ना चाहती है।]

युवक : ठहरो ! उधर कहाँ जाती हो ?

युवती : [मौन कम्पन।]

युवक : तुम जवाब क्यों नहीं देती ! तुम जानती हो कि इधर क्या है ? तुम फिर भी चुप हो ? क्यों, क्या मरनेके लिए आयी हो ? लेकिन तुम तो काँप रही हो। मरनेवाले काँपा नहीं करते। बोलो····[युवती फटी आँखोंसे उसे देखती रहती है। प्रकाश रह-रहकर उसपर पड़ता रहता है। वह थर-थर काँपती है आँखोंसे आँसू अबाधगतिसे बहे पड़ते हैं, युवक सहसा नम्र होता है] रोती हो। मैं जानता हूँ,

तुम दुःखी हो, बहुत दुःखी। शायद तुमसे कोई पाप हो गया है। शायद तुम····

युवती : [सहसा काँपकर] क्या····क्या पाप ! पाप !

[युवती सहसा चीख़कर बेहोश हो जाती है। संगीत गहरा होकर सहसा टूट जाता है]

युवक : क्या ? क्या बेहोश हो गयी ! इतनी बेचैन, इतनी दुर्बल, इसी बूतेपर मौतको गले लगाने चली हो [स्नेह-पूरित स्वरमें पुकारता है] सुनो, इधर सुनो, आँखें खोलो, हाँ, हाँ, आँखें खोलो, खोलो तुम्हें कोई डर नहीं है, तुम्हारा नाम क्या है ? [स्वगत] कोई जुम्बिश नहीं, कोई हरकत नहीं। बहुत डर गयी जान पड़ती है। [लड़कीको हिलाकर] उठो, उठो लड़की ! देखो कौन आया है ! [कोई जवाब नहीं, केवल संगीत प्रतिध्वनि पैदा करता है] ऐसे-ऐसे बुज़दिल भी मौतको गले लगाने चल देते हैं [चिल्लाकर] मैं कहता हूँ, तुम सुनती क्यों नहीं ? अभी पुलिस आयेगी तो कौन जवाब देगा। [धीमा स्वर] ऊहूँ, कोई जवाब नहीं ! डर निराशाकी सीमाको पार गया है। पानी लाना पड़ेगा [युवक उठकर शीघ्रतासे बाहर जाता है, स्टेजपर अन्धकार छा जाता है। संगीत उठता है। प्रकाश फिर पड़ता है। युवक लौट रहा है। शीघ्रतासे वह युवतीके पास आकर पानी-भरे कपड़ेको युवतीके मुँहपर निचोड़ता है, फिर आँखोंपर छपके देता है और पुकारता है] आँखें खोलो ! हाँ, हाँ, आँखें खोलो ! [युवती हिलती है, आँखें चौंधियाती है] उठो ! शाबाश, यहाँ कोई नहीं है ? [युवती आँखें खोलती है, मींचती है, गहरी साँस खींचती है, फिर एकदम काँपकर उठते-उठते बोलती है]

युवती : [काँपती वाणी] मैं कहाँ हूँ ?

युवक : तुम कहाँ हो, यह भी नहीं जानती ! यह मौतकी खोहका रास्ता है। यहाँसे कुछ गज़के फ़ासलेपर वह तालाब है, जहाँ ज़िन्दगीसे डरनेवाले मौतका शिकार बना करते हैं।

युवती : [सँभलती हुई] मौतका शिकार बना करते हैं ?

युवक : हाँ, और क्या होता है ? शुतुरमुर्ग़की तरह रेतमें मुँह गाड़-कर वे अपने-आपको बड़ी आसानीसे शिकारीके हाथमें सौंप देते हैं।

युवती : [एकदम] नहीं, नहीं, यह ग़लत है, एकदम ग़लत है। वे ज़िन्दगीकी मुसीबतोंसे छुटकारा पानेके लिए मौतको गले लगाते हैं।

युवक : छुटकारा [हँसकर] खूब ! शायद तुम भी ज़िन्दगीकी मुसीबतोंसे छुटकारा पाने जा रही थीं !

युवती : [दृढ़ स्वर] हाँ !

युवक : लेकिन क्यों ? क्यों तुम्हें ज़िन्दगीसे डर लगता है।

युवती : ज़िन्दगीसे डर ! ज़िन्दगीसे डर ! [एकदम] लेकिन नहीं, मैं तुम्हारी बातका जवाब नहीं दूँगी। तुम पूछनेवाले कौन हो ? मैं जीना चाहती हूँ या मरना, इससे तुम्हें क्या मतलब है ? तुम अपने रास्तेपर जाओ। मेरा रास्ता मत रोको।

[जानेको होती है।]

युवक : मैंने तुम्हारा रास्ता नहीं रोका। मैं रोकनेवाला कौन हूँ ? यह तो तुम्हारे अपने अन्दरका डर है, जो तुम्हें रोक रहा है, जिसने तुम्हें बेहोश किया है। तुम बुज़दिल हो और बुज़दिल कभी मरना नहीं जानते।

युवती : [काँपकर मुड़ती है] मैं बुज़दिल हूँ, मैं मरना नहीं जानती।

युवक : हाँ, तुम मरना नहीं जानती ! मरना वही जानता है जो ज़िन्दगी पूरी कर लेता है, जो ज़िन्दगीसे प्यार करता है। ज़िन्दगीसे डरकर भागनेवाले मरना नहीं जानते। वे केवल मौतको अपमानित करते हैं।

युवती : [ठगी-सी] मौतको अपमानित करते हैं ? मौतका भी अपमान होता है ?

युवक : ज़िन्दगीसे डरना मौतका अपमान करना है।

युवती : लेकिन मैं ज़िन्दगीसे नहीं डरती। ज़िन्दगी ही मुझे तबाह और बरबाद करनेपर तुली है। [भावावेश] सब मुझसे छुटकारा पाना चाहते हैं। मुझे बोझ समझते हैं। मेरे हर क़दमके साथ उनकी मुसीबतें बढ़ती हैं, हर साँसमें कष्टोंके बादल उमड़ते दिखाई देते हैं। मैं उनकी ज़िन्दगीमें धूमकेतुकी तरह मुसीबतों और दुःखोंको लानेवाली हूँ। इसलिए [याचना] तुम मुझे मत रोको। मुझे जाने दो। मेरे मरनेसे उनका भला होगा।

युवक : उनका किनका ?

युवती : जिनपर मैं बोझ हूँ।

युवक : पर किनपर ? मैं तो उन्हें नहीं जानता। वे आख़िर कौन हैं ?

युवती : [व्यंग्य] तुम उन्हें नहीं जानते ! तुम उन्हें जान भी कैसे सकते हो ? तुम भी तो उन्हींमें-से हो। तुम भी तो उसी समाजका एक अंग हो, जो मुझे बरबाद कर रहा है।

युवक : [हँसकर] समाज ! तो तुम समाजके डरसे मौतका अपमान करने जा रही थीं। समझा''''लेकिन एक बात बताओगी ?

युवती : क्या ?

युवक : तुम्हारे माँ-बाप हैं ?

युवती : [काँपकर] तुम मुझसे ऐसे-ऐसे सवाल क्यों करते हो ? मेरे माँ-बाप हैं या नहीं हैं—तुमसे मतलब ?

युवक : क्रोध मत करो ! क्रोध उन्हींको आता है जो बुज़दिल होते हैं, जो ग़लत रास्तेपर होते हैं ।

युवती ? मैं ग़लत रास्तेपर हूँ !

युवक : अभी तुम्हें सन्देह है ?

युवती : नहीं, नहीं । तुम मुझे व्यर्थका भुलावा देते हो । मैं हाथ जोड़ती हूँ, तुम चले जाओ, मुझे मत रोको ।

युवक : रोकने-न-रोकनेका अब कोई सवाल नहीं है । [मुड़नेका प्रयत्न करता है] तुम रुक चुकी हो । [क्षणिक विराम] क्या तुम्हारे विवाहके बारेमें कोई अड़चन है ?

युवती : [एकदम टोककर] तुम····तुम कौन हो ? तुम ऐसी बातें क्यों करते हो ? तुम मुझे कैसे जानते हो ?

युवक : मैं तुम्हें नहीं जानता, तुम्हारा नाम तक नहीं जानता । वैसे आत्महत्या करनेवालोंको जानना कोई बड़ी बात नहीं है और फिर उनको जो घर छोड़कर चोरोंकी तरह तालाबमें डूबने जाते हैं । तुमसे तो वे कहीं अच्छे हैं, जो ज़िन्दगीको खतरेमें डालकर फाँसीके तख्तेको चूमते हैं । लेकिन हाँ, तुमने बताया नहीं—तुम्हारा विवाह क्यों नहीं हो रहा ?

युवती : [रोकर] मैं तुम्हें कुछ नहीं बताऊँगी । तुम बहुत बुरे हो । तुम मुझे जाने दो ।

युवक : अब मैं तुम्हें जाने भी दूँ तो तुम नहीं जा सकतीं ।

युवती : [काँप उठती है] क्या····?

युवक : काँप गयी ! मैं तुम्हारी जातिको जानता हूँ ।

युवती : [एकदम] फिर वही बात ? तुम क्या-क्या जानते हो

इससे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं मरने आयी हूँ, मर-कर रहूँगी ? तुम आज रोक सकते हो लेकिन मरनेके लिए कोई दूसरा वक़्त भी हो सकता है।

युवक : [एकदम प्रसन्न होकर] शाबाश लड़की ! शाबाश ! यही तो मैं कहता हूँ कि तुम्हारे मरनेका समय अभी नहीं आया। विश्वास रखो, एक दिन तुम अवश्य मरोगी। मरना ध्रुव सत्य है।

युवती : [ठगी-सी] तुम क्या कह रहे हो ?

युवक : यही कि तुम मरनेकी चिन्ता मत करो। मरते सभी हैं ?

युवती : तो क्या करूँ ?

युवक : जियो।

युवती : जीते भी तो सभी हैं।

युवक : नहीं सब नहीं जीते। सब तो बिलबिलाते हैं, मिमियाते हैं, तुम जियो। जीवनको पूरा करो, मृत्यु आगे बढ़कर तुम्हारा स्वागत करेगी और रही पति प्राप्त करनेकी बात, सो वह एकदम कठिन नहीं है। साहस करो, इतने मिलेंगे कि चुनना कठिन हो जायेगा [हँस पड़ता है] सच कहता हूँ।

युवती : [खीझकर] तुम मेरा मज़ाक़ उड़ा रहे हो। मुझे असहाय जानकर मेरे साथ खेल करना चाहते हो ! तुम मुझे क्यों सताते हो ? भगवान्‌के लिए इतने निर्दयी न बनो। मुझे जाने दो।

युवक : जानेसे तुम्हें कौन रोकता है। जाओ ! मैं तो तुमसे केवल इतना कहना चाहता हूँ कि तुम्हारा विवाह न होगा तो संसारमें भूचाल नहीं आ जायेगा और····[अवकाश]

युवती : [एकदम] और ?

युवक : [हँसकर] तुम तो जाना चाहती हो। जाओ! मेरी बातोंमें दिलचस्पी क्यों लेती हो ?

युवती : ओह ! तुम शैतान हो । तुम····

युवक : [हँसकर] राक्षस हो ! लड़की ! तुम्हारे दाहिने गालपर लहसुन है। शैतान वह है, मैं नहीं। वह तुम्हारा विवाह नहीं होने देता।

युवती : [तिलमिलाकर] तुम शैतान ही नहीं, गुस्ताख भी हो ! तुम्हें एक अबलासे ऐसी बातें करते शर्म नहीं आती ?

युवक : [हँसकर] तुम अबला हो ! नहीं, लड़की ! तुम्हें भ्रम हो गया है। तुम तो मुरदा हो और मुरदोंसे बातें करनेमें शर्म और शिष्टाचारकी आवश्यकता नहीं होती। [हँसकर] तुम्हारे गालपर लहसुन है, तुम असुन्दर हो। तुम्हें कोई पत्नी-रूपमें स्वीकार नहीं करता और इस बुराईको छिपाने-का जो एक रास्ता होता है, वह भी तुम्हारे लिए बन्द है। तुम्हारे माँ-बापके पास इतना पैसा नहीं है कि वे तुम्हारे दहेज़की ऊँची माँग पूरी कर सकें।

युवती : [काँपकर] तुम···तुम··· [रो पड़ती है।] तुम इतना जानते हो !

युवक : [शान्त स्वर] जाननेको इसमें है क्या ? यह एक घरकी कहानी नहीं है। घर-घरकी कहानी है परन्तु दुःख यही है···

[सहसा पास ही खड़का होता है, दूर पहरुएकी आवाज़ गूँजती है।]

पहरुआ : खबरदार···होशियार···मास्टरजी चार बज गये खबर-दार···हहह होशियार···

युवती : [घबरायी हुई] सवेरा होनेवाला है। मैं क्या करूँ? मुझे बताओ, मैं क्या करूँ?

युवक : ठहरो ! कोई और आता है ? शायद तुम्हारी ही जातिका प्राणी है।

[स्टेजका अन्धकार और भी धुँधलाता है। उठता हुआ कोहरा धुँधलाहटको गहरा करता है। प्रकाश-किरण उसे भेदकर एक तीसरे व्यक्तिपर पड़ती है। वह अपनेमें खोया-खोया लड़खड़ाता-सा आगे बढ़ रहा है। उसके बाल लम्बे और बिखरे हुए हैं। आँखें वेदनासे पूर्ण हैं। वह एक कलाकार है। उसने ओवरकोट पहना है। वह आप-ही-आप बोल रहा है]

कलाकार : नहीं, मेरा जीवन व्यर्थ है। एक भार है। मैं उसका अन्त कर दूँगा।...मैं जीकर करूँगा भी क्या? कौन मेरी देख-भाल करेगा? कौन मुझे अपना कहेगा—जिस दुनिया-में मैं किसीको अपना नहीं कह सकता, उसमें मैं नहीं रहूँगा! मैं अकेला हूँ अकेला....तिरस्कृत! अपमानित! वे मुझे बहरा कहते हैं, लेकिन क्या बहरा होना पाप है? बहरोंके पास क्या दिल नहीं होता? दिलमें दर्द नहीं होता।....

[बोलता-बोलता वह स्टेजके बीचमें आ जाता है। युवक और युवती दोनों पीछेको हटते हैं। वह उन्हें नहीं देखता। सहसा युवक आगे बढ़कर कलाकारके सामने आ जाता है।]

युवक : मैंने कहा श्रीमान्‌जी, नमस्ते।

[कलाकार नहीं सुनता, पर देखकर एकदम चौंक उठता है।]

कलाकार : [चीख़कर] कौन ?

युवक : डरो नहीं, डरो नहीं । इधर देखो ।

कलाकार : तुम····तुम कौन हो ?

युवक : एक युवक, और यह एक लड़की है, आत्महत्या करने आयी है । तुम भी आत्महत्या करने जा रहे हो ।

कलाकार : क्या···क्या कहते हो ?

युवक : [ज़ोरसे] कुछ बहरे जान पड़ते हो ?

कलाकार : [एकदम चिढ़कर] बहरा ! हाँ बहरा ! तुम्हें इससे क्या ? तुम कौन होते हो ? तुमने मुझे क्यों रोका ? मैं आत्महत्या करूँगा, करूँगा···।

युवक : यह तो मैं जानता हूँ, तुम्हारा रूप ही बता रहा है । तुम ठुकराये गये हो ! तुम्हारे ऐसोंका दस्तूर यही है । किसीने ठोकर मारी और लुढ़कते-लुढ़कते तालाबमें जाकर डूब मरे।

कलाकार : कोई डूबे, तुम्हें इससे क्या ? तुम मेरे रास्तेमें क्यों खड़े हो ?

युवक : बिलकुल नहीं श्रीमान् ! मैं तो केवल आपका नाम और पता लिखनेके लिए नियुक्त किया गया एक क्लर्क हूँ ।

कलाकार : नहीं, नहीं मैं तुम्हें कुछ नहीं बताऊँगा । आगेसे हट जाओ । मैं तुम्हें कुछ नहीं बताऊँगा ।

युवक : न बताइए, मैं लिख लूँगा ।

कलाकार : क्या लिख लोगे ?

युवक : यही कि एक कलाकार अपने बहरेपनके कारण पत्नी प्राप्त करनेमें असमर्थ थे, इसलिए कलाको विधवा बनाकर मौत-की खोहवाले तालाबमें डूब मरे ।

कलाकार : [एकदम चकित] क्या, क्या तुम मुझे जानते हो ?

युवक : कोई भी समझदार आदमी तुम्हें देखकर इतनी-सी बात जान सकता है । तुम्हारे लम्बे बाल, नीची क़लमें, यह अट-

पटा वेष—कोई भी कह देगा कि तुम कलाकार हो ! आत्म-हत्या करने जा रहे हो, सो ठुकराये हुए हो····

युवती : [एकदम आगे आकर] मुझे ऐसे लगता है कि मैं तुम्हें जानती हूँ ।

युवक : तुम इन्हें जानती हो ?

युवती : [देखकर] अरे, ये तो शंकर हैं । निर्मलाके बड़े भाई । कल ही उसका विवाह था और कल ही इनके छोटे भाई का विवाह था । मैं तो वहाँ मौजूद थी । इन्होंने मण्डपको बड़ी सुन्दरतासे सजाया था । स्थान-स्थानपर अपने चित्र लगाये थे । सब लोग प्रशंसा कर रहे थे ।

कलाकार : [एकदम] तुम क्या बातें कर रहे हो ?

युवक : [ज़ोरसे] यह लड़की आपके द्वारा सजाये गये विवाह-मण्डपकी प्रशंसा कर रही है । कल आपके छोटे भाई और छोटी बहनका विवाह था न ?

कलाकार : [काँपकर] तो····तो तुम मुझे जानते हो । हाँ; कल मेरे भाई-बहनका विवाह था । लेकिन····लेकिन [एकदम] हट जाओ ! तुम मेरे रास्तेसे हट जाओ । मैं मरूँगा, अवश्य मरूँगा । [तेज़ीसे जानेको आगे बढ़ता है ।]

युवक : रास्ता खुला है श्रीमान् । मैं कायरोंको मरनेसे नहीं रोकना चाहता । वे मानवतापर कलंक हैं । उन्हें समाप्त हो जाना चाहिए । [कलाकार झिझकता है] जाइए खड़े क्यों हो गये ? आगे बढ़िए ?

कलाकार : [तिलमिलाकर] मैं कायर हूँ, मैं मानवतापर कलंक हूँ ।

युवक : जो ज़िन्दगीसे मुँह छिपाकर भागते हैं, वे कायर ही होते हैं ।

कलाकार : [दुखी व्यग्र] मैं ज़िन्दगीसे भाग रहा हूँ, [एकदम] तुम नहीं जानते । तुम सच्ची बात नहीं जानते । मैं अकेला

हूँ। मेरा इस दुनियामें कोई नहीं है। सब मुझसे घृणा करते हैं। ज़िन्दगीमें मेरे लिए कोई रस नहीं है, कोई आकर्षण नहीं। [एकदम शिथिल पड़कर] मैं बहरा हूँ····बहरा···

युवक : [हँसता है] तुम बहरे हो ? नहीं, नहीं, तुम्हें कौन बहरा कह सकता है ? तुम बहरे होते तो कैसे मौतकी पुकार सुन पाते ? तुम तो बहुत बड़े कवि हो, कलाकार हो, ऋषि हो, जो इतनी दूरसे तालाबकी ओर खिचे चले आ रहे हो। जाइए, मैं आपको नहीं रोकूँगा। और देखिए आप अकेलेपनकी शिकायत कर रहे थे। यहाँ एक लड़की है। इसे लेते जाइए, अच्छा साथ रहेगा। यह भी मरना चाहती है।

कलाकार : [चकित] यह भी मरना चाहती है !

युवक : हाँ !

कलाकार : क्यों ?

युवक : क्योंकि इसे पति नहीं मिलता।

कलाकार : [ठगा-सा] इसे पति नहीं मिलता ?

युवक : जी हाँ ! इसे पति नहीं मिलता। आपको पत्नी नहीं मिलती। [अट्टहास] आप बहरे हैं, इसलिए आपको पत्नी नहीं मिल सकती। इस लड़कीके गालपर लहसुन है इसे पति नहीं मिल सकता।

[क्षणिक अवकाश]

कलाकार : [धीरे-धीरे] गालपर लहसुन होनेसे क्या होता है ?

युवती : [धीरे-धीरे] बहरा होना ऐसा क्या पाप है ?

युवक : [पूर्वतः] बेशक गालपर लहसुन होनेसे कुछ नहीं होता, न बहरा होना पाप है बशर्ते कि····

कलाकार : बशर्ते कि····

युवक : बशर्ते कि आपके पास धन हो [हँसकर] धन सर्व शक्तिमान् है। वह सब कमियों और दोषोंको ढँक सकता है, पर क्या किया जाये ? वह आपके पास नहीं है [नाट्य-ढंगसे] और मुझे खेद है कि मैं भी आप लोगोंकी सहायता नहीं कर सकता। इसलिए मैं आपके मार्गसे हट जाता हूँ।····अच्छा ! अब सवेरा होनेवाला है; बिदा, प्यारे दोस्तो, बिदा। जहाँ मुझे आपके मरनेका दुःख है वहाँ इस बातका सुख भी है कि मरनेके लिए ही सही, आप दोनोंको साथी मिल गया है ! इसलिए दोस्तो, खुश रहो और हँसते-हँसते मृत्युका वरण करो। नमस्कार, प्यारे साथियो। अन्तिम नमस्कार।

[युवक इस प्रकार नाटकीय ढंगसे बोलता है कि वे दोनों तिलमिलाते हैं, सकपकाते हैं और चोट-पर-चोट खाकर ठगे-से रह जाते हैं। युवकके चुप होते-होते युवती एकदम बोलती है]

युवती : नहीं-नहीं, मैं इनके साथ नहीं जाऊँगी, मैं आत्महत्या नहीं करूँगी।

युवक : क्या कहा ? आत्महत्या नहीं करोगी। यह तुम्हें क्या हुआ ? यहाँ आकर भी क्या कोई ऐसे बोलता है !

युवती : हाँ, मैं बोलती हूँ।

युवक : पर क्यों···? तुम्हें यह एकदम क्या हो गया ? क्या तुम पतिके बिना रह सकती हो ? क्या तुम्हारे कारण तुम्हारे परिवारवाले दुःखी नहीं होंगे ? आखिर क्यों तुमने एकदम अपना विचार पलट दिया ? क्यों···?

युवती : क्यों [एकदम] मुझे कुछ पता नहीं, पर मैं अब मरूँगी नहीं। मैं जीयूँगी। जब तक मौत नहीं आ जाती, जीती रहूँगी···

युवक : हुर्रा ! तो तुम आत्महत्या नहीं करोगी ?

युवती : नहीं।

युवक : मुझे खेद है, कलाकार महोदय ! अब तुम्हें अकेले ही जाना पड़ेगा। आपका भाग्य ! जाइए, जल्दी जाइए। सवेरा तेज़ीसे उगता आ रहा है। उसके उगनेसे पहले-पहले आपको अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देनी चाहिए।

कलाकार : लेकिन···लेकिन···

युवक : लेकिन क्या ? कहीं आप भी तो···

कलाकार : हाँ, मैं सोचता हूँ कि मुझे भी फ़िलहाल मरनेकी ज़रूरत नहीं।

युवक : क्या···क्या, आप भी आत्महत्या नहीं करेंगे ?

कलाकार : सोच तो यही रहा हूँ।

युवक : पर क्यों ?

कलाकार : क्योंका तो मुझे कुछ पता नहीं, पर मनमें जीनेकी चाह जाग रही है। जीमें उठ रहा है कि इस दुनियाके ऊपर खूब हँसूँ···ठठाकर हँसूँ···। [हँस पड़ता है]

युवक : तुम हँस पड़े ! सच, देखो-देखो, इधर ऊषा भी मुसकराती हुई भागी जा रही है, अरुण कैसा उतावला होकर पीछे-पीछे दौड़ रहा है [प्रभात संगीत उठता है] और इन दोनोंकी यह आँखमिचौनी देखकर धरती कैसे खिल उठी है !

[प्रकाश फूटता है और स्टेज एकदम आलोकित हो उठता है। वे तीनों अचरजसे एक दूसरेको देखते हैं।

कलाकार युवतीको, युवती कलाकारको एक विशेष दृष्टिसे परखते हैं और फिर फुसफुसाते हैं।]

कलाकार : लहसुन लगता तो आँखोंको बुरा है।

युवती : बहरा होना अच्छा तो नहीं है।

कलाकार : क्या ही अच्छा होता कि यह लहसुन न होता।

युवती : कोई इनसे मनकी बातें धीरे-धीरे कैसे कर सकता है ?

कलाकार : फिर भी इसे छिपाया तो जा ही सकता है।

युवती : बहरोंके लिए सुननेके यन्त्र आते हैं।

युवक : [हँसकर] आप लोग क्या फुसफुसा रहे हैं ? दिन निकल आया है। घर लौट जाइए।

कलाकार : [एकदम] हाँ, मैं घर लौटूँगा। मुझे वह पत्र फाड़ना है, जो मैं अपनी आत्महत्याके बारेमें लिखकर रख आया था।

युवती : [एकदम] अरे हाँ। मुझे भी वह पत्र फाड़ना है। मुझे बहुत जल्दी घर पहुँचना चाहिए।

कलाकार : यहाँ तो कोई सवारी भी नहीं मिलती।

युवती : यहाँ कुछ नहीं मिलता। मुझे पैदल ही भागना होगा। उफ़् ! आवेशमें मनुष्य क्या कर बैठता है।

कलाकार : आवेश मनुष्यको कायर बना देता है [ज़ोरसे] आइए, अब क्या सोच रही हैं, चलें ! आपको मेरे साथ चलनेमें कोई आपत्ति तो नहीं है।

युवती : [ज़ोरसे] अब कोई आपत्ति नहीं है, चलिए।

कलाकार : चलिए [मुड़कर] अच्छा भाई ! हम जाते हैं। नमस्कार ! तुमसे मिलकर बहुत ख़ुशी हुई।

युवती : मुझे भी हुई ! मैं भी तुम्हें नमस्कार करती हूँ। भूलना नहीं, कभी-कभी आना।

युवक : [हँसता हुआ] नमस्कार मित्रो, नमस्कार। मैं कभी किसीको नहीं भूलता। जब भी याद करोगे तभी अपनी सेवामें पाओगे। अच्छा बिदा। तुम्हारा मार्ग मंगलमय हो।
[मिलन संगीत उठता है। दोनों बाहर जाते हैं। युवक कई क्षण तक उन दोनोंको जाते देखता है। फिर मुसकराने लगता है और गुनगुनाता है, परदा गिरने लगता है, युवक धीरे-धीरे स्टेजपर गुनगुनाता घूमता ह। परदा एकदम उठता है। सूर्यकी प्रथम किरण युवकके मुखपर पड़ती है। दिव्य आलोक उभरता है, दोनों एक हो जाते हैं और परदा एकदम गिरता है।]

●

पूर्णाहुति

[पात्र : संघमित्रा : सम्राट् अशोककी बहन, राजकुमार : कलिंग-का राजकुमार, चण्डगिरि : बन्दीगृहका घातक, महेन्द्र : सम्राट् अशोक-का भाई, भिक्षु : बौद्ध-भिक्षु उपगुप्त। रंगमंचपर रात्रिका गहन अन्धकार। रह-रहकर पहरुएकी पुकार उठती है। मंचपर एक ओर दीपकका मन्द प्रकाश हो रहा है। मानो वह वहाँ सिमट गया है। कुछ क्षण बाद वहाँ उस प्रकाशमें एक छाया-मूर्ति उभरती दिखाई देती है। वह एक युवककी छाया है जो एक शिलापर मौन बैठा हुआ किसी गहरी विचार-धारामें निमग्न है। उसके शरीरकी छाया तम्बूकी एक भित्तिपर ऐसे पड़ रही है जैसे किसी कुशल चित्रकारने विश्वासको चित्रित किया हो। वह कलिंगका राजकुमार है और अशोककी आज्ञासे बन्दीगृहमें मृत्युकी राह देख रहा है। इसी समय एक ओरसे राजकुमारी संघमित्रा और उसके पीछे बन्दीगृहका घातक चण्डगिरि वहाँ आते हैं। राजकुमारीने सिरसे पैर तक एक काला वस्त्र पहना है, उसकी चाल स्थिर है, पर उसके नयन चमकते हैं। चण्डगिरिका विशाल शरीर, उसकी बड़ी-बड़ी मूँछें और हाथकी बड़ी कटार मनमें भय पैदा करती है। आकर दोनों रंग-मंचके प्रवेशद्वारपर रुक जाते हैं।]

संघमित्रा : तुम वहीं, बाहर ठहरो, चण्डगिरि! मैं एकान्त चाहती हूँ।

चण्डगिरि : परन्तु देवि, सम्राट्की आज्ञा है कि···

संघमित्रा : सम्राट्की आज्ञा मैं जानती हूँ, चण्डगिरि। और यह भी जानती हूँ कि तुमपर विश्वास किया जा सकता है। कुमार क्षमा माँग ले तो सम्राट् उन्हें मुक्त करनेको तैयार हैं। मैं चाहती हूँ कि उन्हें···

चण्डगिरि : देवि, यह सब ठीक है लेकिन मेरा कर्तव्य मुझसे कहता है कि····

संघमित्रा : [विनय] चण्डगिरि ! मुझे राजकुमारसे कुछ क्षण बहुत आवश्यक बातें करनी हैं। मैं चाहती हूँ कि भिक्षु उपगुप्त-के आनेके पूर्व उन्हें समाप्त कर लूँ।

चण्डगिरि : [चकित] क्या ! भिक्षु उपगुप्त यहाँ आयेंगे ?

संघमित्रा : हाँ चण्डगिरि ! वे सम्राट्से आज्ञा लेने गये हैं।

चण्डगिरि : सम्राट् उन्हें आज्ञा देंगे ! एक भिक्षुको यहाँ आनेकी आज्ञा देंगे ! असम्भव, एकदम असम्भव !

संघमित्रा : असम्भव नहीं चण्डगिरि ! उन्हें आज्ञा मिलेगी। सम्राट् जो न कर सके उसे वह करना चाहते हैं। जाओ उनकी राह देखो।

[चण्डगिरि सहसा कुछ उत्तर न देकर शून्यमें ताकता है]

संघमित्रा : [विनम्र स्वर] जाओ चण्डगिरि।

चण्डगिरि : [एकदम] जाऊँ···अच्छा जाता हूँ राजकुमारी ! लेकिन दण्ड तो स्थिर है।

संघमित्रा : जबतक सम्राट् दूसरी आज्ञा न भेजें तबतक वह स्थिर है।

चण्डगिरि : अच्छा देवि ! मैं बाहर ठहरता हूँ लेकिन ध्यान रखिए कि उषाकी प्रथम किरणके उदय होनेसे पूर्व आपको चले जाना होगा।

संघमित्रा : जानती हूँ।

[चण्डगिरि जाता है। संघमित्रा एक क्षण उसे जाते देखती है। फिर राजकुमारकी ओर मुड़ती है, पर आगे नहीं बढ़ती, वहीं खड़ी-खड़ी दीर्घ निःश्वास लेती है।]

संघमित्रा : [स्वगत—एक दीर्घ निःश्वास लेकर] यह सब क्या है ? यह इतना आकर्षण क्यों है ? हृदयमें यह धड़कन कैसी

है ? यह स्पन्दन किसका है ? [उच्छ्वसित स्वर] क्या प्रेमका ? [कुछ ऊँचा स्वर]···क्या मैं सचमुच राजकुमारसे प्रेम करती हूँ ? क्या मैं सचमुच उसे बचाना चाहती हूँ ? क्या उसे बचाना ठीक है···वह शत्रु है ! वह मेरे भाई, मेरे देश, मेरे सम्राट्का शत्रु, है—शत्रु, हाँ वह शत्रु है। मैं शत्रुसे प्रेम करती हूँ। मेरे देशका शत्रु मेरे हृदय-सिंहासनपर आ बैठा है। ओह···पर···पर शत्रु हुआ तो क्या ? वह वीर है, वह निर्भीक है, वह सुन्दर है। अभी उस दिन जब इसका हाथी मगधकी सेनामें घुस गया था, तो वह काईकी तरह फटती चली गयी थी। बार-बार असंख्य सैनिकोंने उसे घेरनेकी कोशिश की पर उसके छत्रधारी आरोहीने शर-वृष्टिसे सबको कुण्ठित कर दिया। तब वह ऐसे लगते थे जैसे देव-सेनापति कुमार कार्त्तिकेय युद्ध कर रहे हों। स्वयं सम्राट्ने एक दिन उसके शौर्यकी प्रशंसा की थी और आज भी वह ऊपरसे जितने कठोर हैं, भीतरसे उतने हो त्रस्त हैं। उन्होंने मुझसे पूछा था—"क्या शस्त्रके अतिरिक्त किसीका वध करनेकी कोई और भी रीति होती है।" यह बताता है कि वह आलोडित हो रहे हैं और उनका अन्तर्मन कुमारको क्षमा करनेका मार्ग ढूँढ़ रहा है। मैं वही मार्ग उन्हें सुझाऊँगी और कुमारको बचाऊँगी। लेकिन···लेकिन कुमार···नहीं, नहीं, अब मैं कुछ नहीं सोचूँगी। समय बहुत कम है और मुझे कुमारको क्षमा स्वीकार करनेके लिए मना लेना है।

[वह शीघ्रतासे आगे बढ़कर मंचके उस ओर आती है जहाँ दीयेके मन्द प्रकाशमें कुमार विचारमग्न बैठा है। आहट पाकर वह चौंकता है।]

कुमार : कौन ? चण्डगिरि ! क्य समय हो गया ?

संघमित्रा : [मौन रहती है ।]

कुमार : बोलते नहीं ? कौन है ? [उठता है और राजकुमारीको कोई नारी समझकर स्तम्भित रह जाता है] कोई नारी ! इस समय ? यहाँ ? कौन हैं आप ? [संघमित्रा मौन रहती है] आप बोलती नहीं [पास आता है । ध्यानसे राजकुमारीको देखता है और काँपकर पीछे हट जाता है] आप ! राजकुमारी संघमित्रा ! आप आयी हैं ! समझा ।

संघमित्रा : [मौन रहती है]

कुमार : आयी हैं तो आप बोलतीं क्यों नहीं ? [राजकुमारी अब भी मौन है] शायद मुझसे कोई धृष्टता हो गयी है । ओह, समझा । मैं देवीको प्रणाम करना भूल गया । बन्दी कलिंग-कुमार देवी संघमित्राको प्रणाम करता है । [हाथ जोड़कर प्रणाम करता है] पधारिए, आपने इधर आने-का साहस कैसे किया ।''''भाई जो युद्धभूमिमें नहीं कर सका वह क्या बहन बन्दीगृहमें करने आयी है ।

संघमित्रा : [आगे बढ़कर] मुझे प्रसन्नता है कि कुमार मुझे भूले नहीं हैं ।

कुमार : [हँसकर] देवि, कलिंग-कुमारकी स्मृति इतनी क्षीण नहीं है कि वह अपने शत्रुको भी न पहचान सके ।

संघमित्रा : [काँपकर] शत्रु ! मैं आपकी शत्रु हूँ ?

कुमार : कलिंगकी भूमिको कलिंग-पुत्रोंके रक्तसे प्लावित करनेवाले अत्याचारी अशोककी बहन शत्रु नहीं तो क्या मित्र हो सकती है ?

संघमित्रा : [दृढ़ स्वर] हो सकती है ।

कुमार : [चकित] हो सकती है ?

संघमित्रा : हाँ।

कुमार : देवि, शायद पुरानी बातें याद कर रही हैं।

संघमित्रा : बात कभी पुरानी बात नहीं होती, कुमार! स्मृति उसे सदा नया रखती है।

कुमार : परन्तु बात पुरानी न होनेपर भी उसका प्रभाव बदल जाता है देवि!

संघमित्रा : नहीं कुमार, प्रभाव भी नहीं बदलता। वह केवल अपनेसे अधिक शक्तिशाली प्रभावके पीछे छिप जाता है।

कुमार : [हँसकर] शब्दोंका यह मायाजाल नारीको ही शोभा देता है, राजकुमारी!

संघमित्रा : [पास आकर] शब्दोंका मायाजाल? कुमार, शब्दोंका यह मायाजाल भावनाकी भित्तिपर उठता है, कुछ देर पहले तुमने भइयासे कहा था—बस यही तुम्हरी वीरता है, यही तुम्हारा शौर्य है, इसी बलपर सम्राट् बने हो, एक बन्दीका सिर नहीं झुका सके? खोपड़ियाँ ठुकरानेके लिए तो बहुत-से गीदड़ श्मशानमें घूमा करते हैं। लेकिन वह वीर-पुरुषका मार्ग नहीं है—इस सुन्दर शब्दजालके पीछे भी भावनाकी शक्ति थी।

कुमार : नहीं, राजकुमारी संघमित्रा! उन शब्दोंके पीछे भावना नहीं, नग्न सत्य था।

संघमित्रा : कुमार, अण्डा स्वयं जीव नहीं होता पर उसके अन्तरमें जीव समाया रहता है। नग्न सत्य और भावनाकी यही स्थिति है। भावना मनुष्यकी शक्ति है जो उसे कभी क्लान्त नहीं होने देती।

कुमार : [हँसता है] देखता हूँ देवी संघमित्राने भी अपने भाईकी भाँति न हारनेका प्रण किया हुआ है।

संघमित्रा : मैं प्रणमें विश्वास नहीं करती। मैं उत्तर चाहती हूँ।

कुमार : [गम्भीर शान्त स्वर] उत्तर देना कोई कठिन काम नहीं है, देवि, कठिन काम है आश्वस्त करना और फिर तुम्हें यह न भूलना चाहिए कि बन्दीके पास उत्तर देनेका भी समय नहीं है। उसके जीवनकी घड़ियाँ गिनी हुई हैं।

संघमित्रा : [शान्त] मैं उन्हीं घड़ियोंकी सीमा तोड़ने आयी हूँ, कुमार !

कुमार : [चकित] उन घड़ियोंकी सीमा तोड़ने आयी हो? मैं तुम्हारा आशय नहीं समझा, देवि !

संघमित्रा : आशय स्पष्ट है। मैं तुमसे तुम्हारे प्राणोंका दान माँगने आयी हूँ, कुमार !

[दृढ़ रहना चाहकर भी काँप उठती है।]

कुमार : [चकित] मुझसे। [अट्टहास करता है] मुझसे ! खूब। देवी तर्ककी भाँति नाटच-कलामें भी प्रवीण जान पड़ती हैं। तभी अपने भाईके पास न जाकर मेरे पास आयी हैं।

संघमित्रा : [उसी तरह शान्त] भइयाके पास जाकर क्या करती? वे प्राण ले सकते हैं, दे नहीं सकते। दे तुम ही सकते हो।

[कुमार काँपता है पर दूसरे ही क्षण तीव्र हो उठता है]

कुमार : [तीव्र स्वर] तो तुम कहना चाहती हो कि मैं तुम्हारे भइयाके पास जाकर क्षमा माँगूँ। उसकी अधीनता स्वीकार करूँ।

संघमित्रा : [एक दम व्याकुल स्वरमें] नहीं, नहीं मैं यह नहीं कहती। मैं यह कह ही नहीं सकती।

कुमार : तो क्या कहती हो?

संघमित्रा : मैं कहती हूँ कि सम्राट् यदि तुम्हारी मुक्तिका आदेश दें तो तुम उसे अस्वीकार मत करना।

कुमार : [ठगा-सा] क्या····क्या मगधका क्रूर सम्राट् मेरी मुक्ति-का आदेश देगा ?

संघमित्रा : दे सकता है।

कुमार : पर क्यों ? कैसे ?

संघमित्रा : क्यों और कैसे जाननेकी इतनी चिन्ता मत करो, कुमार ! मनुष्य कब क्या कर बैठेगा, कौन जानता है। मगध-सम्राट्की मानसिक स्थिति इस समय ऐसी है कि मेरे कहनेपर वह तुम्हें क्षमा कर सकते हैं।

कुमार : तुम्हारे कहनेपर वह मुझे क्षमा कर सकते हैं ? तुम्हारे कहनेपर। तुम मेरी मुक्तिकी प्रार्थना करोगी ?

संघमित्रा : आज्ञा दो तो।

कुमार : पर क्यों ?

संघमित्रा : क्यों ?

कुमार : हाँ, तुम मेरी मुक्तिकी प्रार्थना क्यों करना चाहती हो ? तुम मुझे क्यों बचाना चाहती हो ? क्यों····क्यों···

संघमित्रा : [**खोयी-खोयी**] क्यों करना चाहती हूँ ? क्यों बचाना चाहती हूँ ? [**एकदम**] तुम नहीं जानते ?

कुमार : शायद नहीं जानता। तभी तो पूछता हूँ।

संघमित्रा : [**उच्छ्वास**] नहीं जानते तभी पूछते हो। ओह···· निष्ठुर कुमार, आखेटके बादकी वह रात भूल गये ? भूल गये वे प्यारकी बातें—जब तुमने कहा था····ओह कैसे बताऊँ····कैसे बताऊँ····तुम्हें कैसे बताऊँ कि···कि तुमने कहा था—तुम्हारे नयन शरद्की ज्योत्स्नाको लजाते हैं। तुम्हारा हास्य हिम-शिखरके प्रभातसे अधिक मनोरम है।

तुम्हारी वाणीमें मलयका संगीत है। तुम्हारे गीतोंमें यौवनका नृत्य है।

[बोलते-बोलते भावनातिरेक हो जाता है। कुमारी प्रकोष्ठकी भित्तिका सहारा लेकर मौन हो जाती है। नयन मुँद जाते हैं। शरीर शिथिल पड़ जाता है। केवल तीव्र श्वास समयके अन्तरपर उठती है। मौनमें उसीका स्वर चीत्कार करता है। कुमार स्थिर भावसे उसे देखते हैं। देखते रहते हैं। क्षण आते हैं, युग जाते हैं। कुमार फुसफुसाते हैं।]

कुमार : राजकुमारी ! तुम मौन क्यों हो गयी ? बोलती क्यों नहीं।

कुमारी : [मौन]

कुमार : कुमारी शायद कुछ सोच रही है।

[कुमारी मौन ही रही पर उसका रूप जैसे प्रेमल ज्योतिकी तरह भासमान हो उठा। कुमारको लगा जैसे कुमारीके नेत्रोंसे झरता हुआ एक परम शान्त, परम उज्ज्वल प्रकाश उसकी ओर बहा आ रहा है और जैसे संघमित्रा स्वयं लुप्त होकर उसके नेत्रोंसे होती हुई उसके अन्तरमें समा गयी है। वह पुकार उठता है।]

कुमार : राजकुमारी, राजकुमारी, तुम कहाँ हो ? तुम बोलती क्यों नहीं ? बोलो····बोलो, तुम कहाँ हो ?

संघमित्रा : [जागकर उनींदे स्वरमें] कुमार ! मैं यहीं हूँ, कुमार !

कुमार : [अभी भी खोया-खोया] राजकुमारी, तुम कहाँ चली गयी थीं ? यह सब क्या था ? क्या था यह मायाजाल ? कैसी थी यह प्रणय-ज्वाला ? किसने पैदा की यह प्रणय-पिपासा ? राजकुमारी, महानाशके समय भी तुम्हें यह प्रेम-लीला सुहाती है।

संघमित्रा : [तड़पकर दृढ़ स्वरमें] कुमार ! नारी जिसे एक बार प्यार करती है उसके हाथों अपना रक्त उलीचा जानेपर भी वह उसे प्यार करती रहती है ।

कुमार : [काँपकर] राजकुमारी ?

संघमित्रा : [सहसा हँस पड़ती है] डर गये, कुमार ! डर गये ।

कुमार : [सावेश] हाँ कुमारी, मैं डर गया । युद्ध-भूमिमें महा-प्रलय देखकर भी जो नहीं डरा । पिताको भूलुण्ठित देखकर भी जिसने आह तक नहीं की । मगध-सम्राट्की भृकुटी भी जिसकी दृष्टिको नहीं झुका सकी, वही कुमार इस क्षण डर गया ।

संघमित्रा : [हँसती हुई] अचरज है, कुमार वीर होकर डर गये । क्या मैं जान सकती हूँ कि कुमारके इस डरका कारण क्या है ?

कुमार : दया ।

संघमित्रा : [काँपकर] दया ?

कुमार : हाँ कुमारी ! मुझे डर है कि कहीं तुम्हारे प्रणयकी वर्तमान स्थिति मेरी प्राणरक्षाका कारण न बने ! तुम्हारा प्रेम मुझे पथसे विचलित न कर दे ।

संघमित्रा : [काँपकर] तो····तो तुम जानते हो । तुम सब कुछ जानते हो । तुम्हें वे दिन याद हैं जब मगधके अतिथिके रूपमें तुम मृगया खेलने हमारे यहाँ आये थे । तब सम्राट्ने तुम्हारे हस्त-लाघवकी प्रशंसा की थी और तुमने मेरे रूपकी ।

कुमार : कलिंगका कुमार कुछ भी होनेसे पहले पुरुष है राज-कुमारी ! और पुरुष जो प्रशंसनीय है उसकी प्रशंसा करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं ।

संघमित्रा : [सँभलकर] जानती हूँ और तभी पूछती हूँ कि यदि मेरा प्रणय तुम्हारी प्राणरक्षा चाहता है, तो इसमें बुरा क्या है ?

कुमार : मगध-सम्राट्‌ने मेरा सिर काट डालनेकी आज्ञा दी है, प्रणय प्राणोंकी भिक्षा नहीं माँगा करता राजकुमारी ! मैं उस आज्ञाका सम्मान करूँगा। कुछ क्षण बाद जब मन-मोहनी उषा जागरणका संगीत अलापती हुई आकाशसे उतरेगी तब उसीके साथ मेरी मृत्यु भी मेरा आलिंगन करने आयेगी। मेरी मृत्युमें ही मेरा कल्याण है। कलिंग-के महानाशकी वेलामें जब उसकी असंख्य युवतियोंका सुहाग-सिन्दूर रक्तसे धुल गया हो, तो मैं तुम्हारी माँगमें सिन्दूर नहीं भर सकता। आज मेरी आखें तुम्हारा रूप देखनेमें अशक्त हैं। आज मेरे कान तुम्हारी प्रणय-रागिनी सुननेके अयोग्य हैं।

संघमित्रा : कुमार ! कुमार !!

[चण्डगिरिका प्रवेश]

चण्डगिरि : देवि !

संघमित्रा : कौन ? चण्डगिरि, तुम आ गये ?

चण्डगिरि : हाँ देवि ! बहुत देर हो चुकी है।

संघमित्रा : कोई आया ?

चण्डगिरि : नहीं देवि !

संघमित्रा : तो अभी ठहरो····

चण्डगिरि : देवी ! राजाकी आज्ञाका उल्लंघन हो रहा है।

संघमित्रा : [सविनय] थोड़ा, बस थोड़ा और, चण्डगिरि ! बात अभी अधूरी है।

चण्डगिरि : देवीको जैसी आज्ञा। [जाता है]

संघमित्रा : [निःश्वास] गया । उफ़ कुमार···

कुमार : [व्यंग्य] देवि, संघमित्रा प्रणयके लिए इतना झुक सकती है ?

संघमित्रा : [चोट खाकर] लक्ष्य प्राप्त करनेके लिए कुछ भी करना चातुर्य कहलाता है, कुमार !

कुमार : [आवेश] पर मैं ऐसे चातुर्यसे घृणा करता हूँ, देवि ! मैं अपना मस्तक कभी नहीं झुका सकता, कभी नहीं । मैं मर सकता हूँ पर किसीकी दयाका भिखारी नहीं बन सकता ।

संघमित्रा : [गहरा निःश्वास] कुमार ! तभी तो मैं तुम्हें प्रेम करती हूँ ।

कुमार : [सहसा शान्त होकर] परन्तु कुमारी ! मैं बन्दी हूँ, और बन्दीको प्रणयका अधिकार नहीं है ।

संघमित्रा : कुमार, मैं तुम्हें मुक्त करा सकती हूँ । अभी इसी क्षण करा सकती हूँ ।

कुमार : नहीं कुमारी नहीं ! मैं मगध-सम्राट्की दया नहीं चाहता । जो मेरे देशका दुश्मन और मेरे पिताका हत्यारा है, मैं उसकी दया नहीं चाहता । जबतक मेरे शरीरमें प्राण हैं तबतक मैं शत्रुकी दया स्वीकार नहीं करूँगा, कलिंगकी वीरताको कलंकित नहीं करूँगा ।

संघमित्रा : दया नहीं, कुमार ! वह दया नहीं है ।

कुमार : दया नहीं तो क्या है ?

संघमित्रा : पश्चात्ताप !

कुमार : पश्चात्ताप ? [सहसा अट्टहास] खूब ! अत्याचारी अशोक और पश्चात्ताप ! नागके दाँतोंमें अमृत ? संघमित्रा, तुम क्या कह रही हो ?

संघमित्रा : मैं ठीक कह रही हूँ, कुमार ! तुम्हारे आनेके बादसे सम्राट् पश्चात्तापकी आगमें जल रहे हैं । तुम्हारे उन वाक्योंने

उन्हें आलोडित कर दिया है। मैंने चण्डगिरिसे इसीलिए समय माँगा है। तुम्हारी मुक्तिका सन्देश आनेवाला है। भिक्षु उपगुप्त सम्राट्के पास गये हैं ?

कुमार : भिक्षु उपगुप्त सम्राट्के पास गये हैं।

संघमित्रा : डरो नहीं कुमार ! वे तुम्हारे प्राणोंका दान माँगने नहीं गये हैं।

कुमार : और किसलिए गये हैं ?

संघमित्रा : तुमसे बातें करनेकी आज्ञा माँगनेके लिए। जहाँतक तुम्हारे प्राणोंके दानका सम्बन्ध है, मैं चाहती, तो अभी आँचल फैलाकर सम्राट्से तुम्हें माँग लेती पर···

कुमार : पर···

संघमित्रा : पर मैं तुम्हें अपमानित करना नहीं चाहती थी।

कुमार : [चकित] मैं देवीका आशय नहीं समझा।

संघमित्रा : आशय स्पष्ट है, कुमार ! तुम्हारी भाँति मैं भी समझती थी कि तुमपर दया करना तुम्हारा अपमान होगा। मैंने सम्राट्से तुम्हारे लिए एक शब्द भी नहीं कहा पर दूसरी ओर उनके भीतर पश्चात्तापकी आग धधकानेमें कुछ नहीं उठा रखा। मैं भिक्षु उपगुप्तकी आज्ञामें···

कुमार : क्या ?···क्या तुम भिक्षु उपगुप्तकी आज्ञामें विश्वास रखती हो ?

संघमित्रा : वे मेरे होनेवाले गुरु हैं।

कुमार : राजकुमारी !

संघमित्रा : ठीक कह रही हूँ, कुमार !

कुमार : तो तुम यहाँतक पहुँच गयीं ? मेरे बचानेके लिए तुमने इतना कुछ कर डाला !

संघमित्रा : तुम्हें नहीं कुमार ! अपनेको बचानेके लिए, अपने स्वार्थ-के लिए।

कुमार : ठीक कहती हो देवि ! यह स्वार्थ ही है। सब कुछ स्वार्थ है। इस स्वार्थसे कोई भी अछूता नहीं है। मैं भी नहीं हूँ। मेरा देश-प्रेम, मेरी वीरता, सब कुछ स्वार्थ है। परन्तु देवि ! मेरा स्वार्थ बहुत बड़ा है। वह अभी पूरा नहीं हुआ है। सम्राट्का पश्चात्ताप अभी तलपर ही है। उसे अन्तरकी गहराईमें जानेके लिए अभी और चोटकी आवश्यकता है। विनाशके सम्पूर्ण हुए विना निर्माण असम्भव है।

संघमित्रा : क्या अभी और विनाश होना शेष है ?

कुमार : बहुत शेष है, देवि !

संघमित्रा : [कम्पित] क्या कहते हो ?

कुमार : [आवेशके प्रवाहमें] ठीक कहता हूँ, राजकुमारी। अभी कलिंगका रक्त-यज्ञ पूर्ण होना है। अभी मेरा वध शेष है। अभी तुम्हारा हृदय टूटना शेष है। अभी अशोकको अपने पश्चात्तापसे उत्पन्न दी गयी आज्ञाका उल्लंघन देखना शेष है।

संघमित्रा : [पागल-सी] क्या ! क्या कहते हो ?

कुमार : ठीक कहता हूँ। वह देखो, चण्डगिरि फिर आ गया है। इस बार वह लौटनेवाला नहीं है। मेरा समय आ पहुँचा है।

[चण्डगिरिका प्रवेश]

चण्डगिरि : देवि, सम्राट्की आज्ञा पालन करनेकी वेला आ पहुँची है।

संघमित्रा : [व्याकुल] चण्डगिरि ! दो क्षण और। बस वह आने ही वाले हैं।

कुमार : नहीं चण्डगिरि, अब किसीके आनेकी प्रतीक्षा नहीं है। तुम यहीं ठहरो और सुनो देवि संघमित्रा ! मैं तुम्हें प्रेम करता हूँ। अपने जीवनसे बढ़कर प्रेम करता हूँ। तुमसे भी अधिक मैं अपने देशसे प्रेम करता हूँ। उससे भी अधिक मैं मनुष्यसे प्रेम करता हूँ। वही मनुष्य आज सोया हुआ है। उसे जगानेके लिए अभी और बलिदानकी ज़रूरत है....

संघमित्रा : [टोककर] कुमार, सुनो तो, सुनो।

कुमार : मैं बहुत सुन चुका कुमारी ! अब तुम्हें सुनना है। सुन लो, कलिंग-कुमार प्रणयसे नहीं डरता, नारीसे नहीं डरता। संघमित्रा ! यदि तुम सचमुच मुझसे प्रेम करती हो तो समझ लो कि तुम्हारा प्रियतम कलिंगके रक्त-यज्ञमें अपने रक्तकी पूर्णाहुति देकर उसे सम्पूर्ण करना चाहता है और वह तुम्हें भी निमन्त्रण देता है कि तुम भी इस यज्ञमें आहुति दो, प्रणयका बलिदान करो। कलिंग-नारियोंके रोदनमें अपना रोदन मिला दो जिससे धरती-अम्बर काँप उठे, महानाश पूर्ण हो जाये और महातिनिशाके बाद उषाका उदय हो।

[बोलता-बोलता वह सहसा ब्रुत-से बने चण्डगिरिकी ओर बढ़ता है]

कुमार : लाओ चण्डगिरि, कहाँ है तुम्हारी कटार ? तुम्हारे हाथोंसे मेरे हाथमें कम शक्ति नहीं है।

[चण्डगिरि पागल-सा समझ नहीं पाता है। बिजली-सी कौंधती है। कुमार कटार छीन लेता है। चण्डगिरि और संघमित्रा जागकर दौड़ते हैं।]

चण्डगिरि : कुमार, क्या करते हो ? मेरी कटार दो। मेरी कटार दो।

संघमित्रा : कुमार ! कुमार ! कटार छोड़ दो । [कुमार कटार भोंक-लेते हैं, राजकुमारी चीख़ती है] ओह....कुमार....कुमार ? तुमने क्या किया ? तुमने कटार छातीमें मार ली । ओह, कोई है ? चण्डगिरि !

[कटार निकालना चाहती है । कुमार रोकता है]

कुमार : चण्डगिरि....चण्डगिरि, कटार निकाल लो ।

चण्डगिरि : [कटार खींचता है और कुमार आह करता है] मैं जाता हूँ और सम्राट्से कहता हूँ कि कुमारने अपने हाथसे अपनी छातीमें कटार भोंककर अपने प्राणोंका अन्त कर लिया !

[भागना चाहता है]

संघमित्रा : [व्याकुल] चण्डगिरि ! कटार मुझे दो । यह कटार मुझे देते जाओ ।

चण्डगिरि : [मुड़कर] राजकुमारी, चण्डगिरि इतना मूर्ख नहीं है कि वह कटार आपके हाथमें देकर आपको आत्महत्याका अवसर दे । [चला जाता है]

संघमित्रा : [जैसे दौड़ती है] चण्डगिरि, रुको, चण्डगिरि...

कुमार : [संघमित्राका आँचल पकड़कर] कहाँ जाती हो संघमित्रा ? ठहरो, प्रणयवेलामें मुझे अकेला न छोड़ो । मैं अब जानेवाला हूँ । मन भरकर प्यार कर लो और फिर...

[महेन्द्र और भिक्षु उपगुप्तका प्रवेश]

महेन्द्र : [प्रवेश करते-करते] संघमित्रा, क्षमा कर दिया ! सम्राट्ने कुमारको क्षमा कर दिया ! कुमार अब स्वतन्त्र हैं, उनका देश स्वतन्त्र है । [सहसा नीचे दृष्टि जाती है] क्या.... यह क्या...यह रक्त कैसा ? कुमार ! क्या कुमारका... ओह ! चण्डगिरि दो क्षण भी नहीं रुक सका ।

संघमित्रा : चण्डगिरिको कुछ नहीं करना पड़ा, भइया। सम्राट्‌की दया-की बात सुननेसे पूर्व ही कुमारने चण्डगिरिकी कटारसे अपने प्राणोंका अन्त कर डाला।

महेन्द्र : यह क्या हुआ भन्ते। यह क्या हुआ? नवप्रभातमें…

भिक्षु : शान्त देवी, शान्त महेन्द्र, कुमारने जो कुछ किया वह ठीक ही किया। वह प्राणोंका अन्त नहीं है। कुमारने इस रक्त-यज्ञमें पूर्णाहुति दी है।

संघमित्रा : [काँपकर] भन्ते !

महेन्द्र : क्या कह रहे हैं, भन्ते !

भिक्षु : ठीक कह रहा हूँ। उसने मेरा मार्ग प्रशस्त कर दिया है। उसके बलिदानकी नींवपर मनुष्यता जागेगी। अशोक अपनेको पहचानेगा, अवश्य पहचानेगा। महानाश जितना पूर्ण होता है निर्माण भी उतना ही दृढ़ होता है।

कुमार : [**शिथिल, पर शान्त स्वर**] प्रणाम भन्ते प्रणाम, नमो बुद्धाय, नमो बुद्धाय, बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि [कहते-कहते कुमारकी श्वास रुक जाती है। नेत्र मुँद जाते हैं। राजकुमारी चीख़ मारकर गिर पड़ती है। तभी सम्राट् अशोक, चण्डगिरिके साथ घबराये हुए प्रवेश करते हैं। चण्डगिरिकी भयानकता तरल होकर बड़ी दयनीय लगती है। सम्राट्के मुखपर पराजय गहरी होती है। यहीं परदा गिरता है।]

१९५१]

●

[प्रारम्भिक संगीतके बाद दूर पृष्ठभूमिमें ट्रेनके धीरे-धीरे आनेका स्वर, फिर तेज़ सीटी और ठहरनेका स्वर, फिर मोटर व ताँगोंका स्वर, दूरसे पास आते, फिर दूर जाते, साथ ही किसी वृद्धाके चलने और किवाड़ खोलनेका स्वर।]

माँ : [एक गहरा निःश्वास] नहीं आया....वह आज भी नहीं आया...गाड़ी आ चुकी...मोटरें आ चुकीं, ताँगे आ चुके, पैदल सवारियाँ आ चुकीं। सब पुराने भी हो चुके। रामू-का बेटा आ गया। दीनूकी बहू आ गयी। प्रभुका भाई भी आ गया। कितनी खुशी थी उसकी आँखोंमें! कितनी चमक थी उसके चेहरेपर! कैसा नाच रहा था! पर.... पर....मैं....मैं अभागिन आँखें बिछाये बैठी रही, कान लगाये सुनती रही,....हर आनेवाला कोई दूसरा था, हर उठनेवाली आवाज़ किसी दूसरेकी आवाज़ थी, ओह.... दूरसे वह दिखाई देनेवाला हर इनसान वह नहीं निकला जिसकी मुझे इन्तज़ार थी। वह दूसरा ही कोई निकला। दूसरा....दूसरा, जो मेरी उम्मीदोंपर पानी फेरता हुआ निकल गया, जो मेरी मिन्नतोंको ठुकराता हुआ चला गया, जिसने मेरे बुढ़ापेको रौंद दिया, जिसने मेरे दिलको कुचल दिया, जिसने मेरी आँखोंके पानीका मखौल उड़ाया, जो मेरी बेचैनीको देखकर ठहाका मारकर हँसा [उत्तेजना बढ़ती है फिर एकदम शान्ति, फिर धीरे-धीरे अस्फुट स्वरमें बोलती है] ओह....कैसी है यह ज़िन्दगी? कैसी है यह उसकी माया? क्यों इतना दुःख होता है? क्यों यह

दर्द उसने दिया है ? क्यों···क्यों····[दूर ताँगा आनेकी आवाज़] यह क्या, ताँगा ? ताँगा आ रहा है । अभी ताँगे आ रहे हैं । मैं भी कैसी मूर्खा हूँ । अभी तो सवारियाँ आ रही हैं । इतनी बड़ी रेल होती है । [**रेलकी सीटी**] लो, अब रेल गयी है । ज़रूर वह आ गया है । ज़रूर वह आ गया है । ज़रूर सामान ज़्यादा होगा । [**ताँगेकी आवाज़ पास आती है**] वह आ गया [**ज़ोरसे**] वह आ गया ।····मैं कहती न थी कि आज वह अवश्य आयेगा । अवश्य आयेगा, आज मेरी आँख फड़क रही थी, आज मैंने सवेरे-सवेरे उसे सपनेमें देखा था । आखिर वह मेरा बेटा है····मेरा बेटा····[**पुकारकर**] बेटा, बेटा, मोहन···· मोहन; मैं अभी आती हूँ । अरे, दरवाज़ा खुला पड़ा है । मैं दरवाज़ा कभी बन्द नहीं करती । न जाने कब तू आ जाये [**दूर जाते स्वर**] अरे, कहाँ है तू···कहाँ रुक गया था अबतक ? सब तो आ लिये तू ही अबतक··· [**ताँगा पास आकर दूर चला गया है ।**] कहाँ है ताँगा ? यहाँ तो नहीं है [**संगीत उठता है**] क्या····क्या चला गया ? क्या चला गया ? यह ताँगा भी चला गया ! यह ताँगा भी चला गया ! [**धीमे होते-होते मौन संगीत उभरता है**] वह नहीं आया····मेरा बेटा नहीं आया···· नहीं आया···[**फिर धीरे-धीरे तेज़ होता है**] वह अब भी नहीं आया ।····वह अब नहीं आयेगा····नहीं आयेगा । मैं जानती हूँ, वह अब नहीं आयेगा । उसे उस छोकरीने भरमा लिया है । उसे उस दुष्टाने क़ैद कर लिया है । उसे उस जादूगरनीने मुझसे छीन लिया है । वह जीत गयी है, मैं हार गयी हूँ । मैं····मैं जो माँ हूँ । मैं जो माँ हूँ । माँ

हार गयी, पत्नी जीत गयी। माँ हार गयी, पत्नी जीत गयी। माँ हार गयी, पत्नी जीत गयी। [अल्प विराम] मैं पहले ही कहती थी। मैं पहले ही जानती थी। मैं पहले ही समझती थी। वह जादू जानती है। नहीं तो मेरा मोहन ऐसा नहीं था। कितना प्यार करता था, कितना मचलता था, रूठता था, खेलता था, तंग करता था....मैं कह देती थी—अरे अब तू इतना बड़ा हो गया है, इस तरह बन्दरकी तरह मचला मत कर, तो हँसकर कहता था, 'माँ, तेरे सामने मैं हमेशा बन्दर बना रहूँगा। मुझे तेरे सामने बन्दर बनकर चलनेमें मज़ा आता है। है न माँ, तू भी तो यही चाहती है। सच, तू भी यही चाहती है। अगर मैं बड़ा बनकर तुझसे बात करूँ तो, तुझे कितना बुरा लगे! तब क्या तू हँसेगी? तब क्या तू मुझे झिड़केगी? तब क्या तू प्यार करेगी? न, न माँ? माँके सामने तो छोटा बननेमें ही रस है। मचलनेमें ही आनन्द है। चिढ़ानेमें ही मज़ा है। थप्पड़ खानेमें ही बड़प्पन है। [**भावावेशमें अपनेको भूली हुई**] माँ! यह तुम्हारा भगवान् भी जब बड़प्पनसे घबरा जाता है, जब उसका जी प्यारके थप्पड़ खानेको करता है, जब उसका जी पालनेमें लेटकर अँगूठा चूसनेको करता है तब....तब वह धरतीपर माँकी गोदमें आ लेटता है। माँकी गोद, माँकी गोद स्वर्ग है माँ। नहीं-नहीं, वह स्वर्ग, अपवर्ग, देवता, भगवान् सबसे ऊँची है, सबसे प्यारी है, वह सच है। वही सत्य है। शेष सब झूठ है। मिथ्या है, कल्पना है।' [**भावुक संगीत ऊपर जाकर नीचे एक मधुर अस्फुट तान देता उतरता है**] वह सच ही तो कहता था, माँकी गोदको

कौन भुला सकता है ? माँसे बिछुड़कर उस प्यारी गोदकी किसे याद नहीं आती होगी ? मोहनको भी आती होगी। वह भी मुझे याद करता होगा। नींदमें जागकर मुझे पुकारता होगा। मुझे पुकारता होगा··· [धीमे स्वरके बाद फिर एकदम तीव्रता] नहीं, नहीं, यह सब ढोंग है, यह सब ग़लत है, वह मुझे नहीं पुकारता, वह मुझे याद नहीं करता। करता होता तो क्या मुझे इस प्रकार भुला देता ? मुझे इस प्रकार तड़पाता ? मैं ऐसे ही तड़पती हूँ जैसे कभी यशोदा कन्हैयाकी यादमें तड़पती होगी [करुण संगीत, अल्प विराम] ओह, कैसा है यह माँका निगोड़ा दिल, कैसो है यह माँकी राक्षसी ममता, कैसा है यह माँ-का पापी प्यार ! इसी दिल, इसी ममता, इसी प्यारके कारण माँ, माँ है।

माँका दिल पिताके दिलसे भी अधिक प्यारसे भरा होता है। पिता बेटेसे उम्मीदें रखता है। आशाएँ बाँधता है। उससे कुछ चाहता है लेकिन माँ ! माँ बस प्यार करती है। प्यार ही करती है ! कुछ और नहीं चाहती है। मैं भी मोहनसे कुछ नहीं चाहती, उसे ही चाहती हूँ, बस उसे ही प्यार करती हूँ। यशोदा भी कन्हैयासे कुछ नहीं चाहती थी, कुछ नहीं माँगती थी, फिर भी वह उसे छोड़ गया। वह उसे छोड़ गया था। मोहन भी मुझे छोड़ गया।···क्यों···क्यों [अल्प विराम] यशोदा तो फिर कन्हैयाकी धाय-माँ थी। माँ नहीं थी। मैं तो मोहनकी माँ हूँ। कन्हैया भगवान् थे। उन्हें दुष्टोंको मारना था पर मोहन···मोहनको तो कुछ भी नहीं करना। वह क्यों मेरा खयाल नहीं करता ? क्यों मुझसे दूर भागता है ? क्यों···

क्यों उस कलको आयी छोकरीके कहनेमें चलता है ? क्यों उसके इशारोंपर नाचता है ? क्यों उसीकी ओर देखता है ? [अल्प विराम] ज़रूर ये आजकलकी बहुएँ जादू जानती हैं । आते ही पराये बेटोंको बसमें कर लेती हैं । नहीं तो कोई बात है कि जिनके लिए माँ-बाप दिनको दिन, रातको रात नहीं समझते, सब कुछ मिट्टी कर देते हैं वे बेटे ज़रा-सी देरमें तोतेकी तरह आँखें फेर लें ! सब कुछ सपनेकी तरह हो जाये ।

[सहसा कहीं शहनाई बजती है ।]

यह क्या शहनाई, यह शहनाई बज रही है । शह-नाई बज रही है । कहीं शादी है । कहीं शादी, कहीं जसूठन, कहीं सगाई ! किसीके घर बहू आयी है । किसीके घर बच्चा पैदा हुआ है । पर, पर मैं ऐसी अभागिन हूँ कि बेटे-पोतोंके रहते इस बुढ़ापेमें भी उनकी सूरतको तरसती हूँ । एकके तीन-तीन बच्चे हैं । सबको साथ लिये घूमे है । [अल्प विराम] मैं सब समझूँ हूँ, गँवार हैं न । हमें तमीज़ नहीं । उसके बच्चोंको बिगाड़ देंगे । इसीसे पास नहीं आते । [कण्ठावरोध] बाक़ी सब बहाने हैं । वे हमसे मिलना ही नहीं चाहते । [किसी वस्तुके ज़ोरसे गिरनेका स्वर]

यह क्या ? यह क्या गिरा ? अरे, यह तो मोहनकी कुरसी है और ये····ये पुरानी तसवीरें····अरे अरे····सब टूट गयीं । ओह, ओह, [जैसे खो गयी हो] यह कुरसी···· यह कुरसी····इस कुरसीपर मोहन बैठता था । कैसे इसे खींचे फिरता था, किसीको देता नहीं था । कोई छू देता तो लड़ने-मरनेको तैयार हो जाता और अब····अब बेचारी

ऐसे ही पड़ी है जैसे मैं। कोई पूछता ही नहीं, कोई देखता ही नहीं। इसी कुरसीपर बैठकर उसने फ़ोटो खिचवाया था, कैसा प्यारा फ़ोटो था, यही तो है। यही [उठाती है] अहा, कैसा प्यारा लग रहा है! कैसे लटूरे बाल हैं, कैसा मोटा-मोटा मुँह है! कैसा अकड़कर बैठा है! और ये हैं इसके पिता, देखकर मुसकरा रहे हैं। और मैं भी मुसकरा रही हूँ! कैसी प्यारी मुसकराहट! यक़ीन नहीं आता कि ये हम ही हैं। यह फ़ोटो भी कैसी चीज़ है! आदमीकी हर घड़ीको ज़िन्दा कर देता है। हर यादको ताज़ा कर देता है [अस्फुट होते स्वर] कैसे थे वे दिन....वे सुनहरे दिन...जब हम सब अपनी उस सुनहरी दुनियाके, उस शानदार दुनियाके, उस प्यारी दुनियाके बादशाह थे....सचमुच बादशाह थे। हम और हमारे बच्चे। जैसे कलकी बात हो, कलकी....[एकदम] लेकिन...लेकिन इस फ़ोटोको देख कर किसीकी याद आ रही है। कहीं ऐसी ही तसवीर देखी है! कहाँ देखी है? कहाँ [एकदम] अरे, वह तो मेरे बड़े बेटेकी तसवीर है...वह...वही तो है [दूर जाते, पास आते पदचाप] बिलकुल वही है; बेटा, बहू, तीन बच्चे। वही सुनहरी मुसकराहट, वही ख़ुशी, वही शानदार दुनिया, वही...वही जैसे....जैसे हम ही फिरसे जवान हो गये हैं। जैसे हम ही फिर लौट आये हैं [एकदम] यह क्या है? यह क्या है? यह मेरे दिलमें क्या हो रहा है? यह मुझे क्या याद आ रहा है? यह कौन हँस रहा है? यह किसकी आवाज़ मेरे कानोंमें गूँज रही है? यह पहचानी हुई आवाज़...यह दिलमें लहरें पैदा करनेवाली आवाज़...यह मेरे बेटेकी आवाज़ है, वह कुछ कह रहा है [काँपकर]

क्या कह रहा है ? क्या कह रहा है ? [एकदम आवेश] नहीं, नहीं, नहीं, यह सब जाल है, यह सब माया है, कोई कुछ नहीं कह रहा। कोई कुछ नहीं बोल रहा। [फिर धीमा पड़ता स्वर] लेकिन बात तो वह ठीक कह रहा है, ठीक कह रहा है ? [फिर जैसे किसीको सम्बोधित करती हो] क्यों जी, यह···यह ठीक कह रहा है ? बोलते क्यों नहीं ? मुसकरा क्यों रहे हो ? नहीं, नहीं तुम मुसकरा नहीं रहे। तुम···तुम भी कुछ कह रहे हो···हाँ तुम कुछ कह रहे हो···नहीं, नहीं मैं नहीं सुनना चाहती, मैं कुछ नहीं सुनना चाहती, तुम बेटेका पक्ष ले रहे हो। तुम बेटेसे मिल गये हो। तुम पुरुष हो पुरुष। तुम क्या जानो माँके दिलको बातें, तुम क्या जानो माँकी ममता !

नहीं, नहीं दूर हट जाओ। [सब चित्रोंको फेंकती है]। तुम सब दूर हट जाओ [शोर, फिर शान्ति] यह क्या, तुम फिर मुसकरा रहे हो। तुम फिर मुझे देख रहे हो, ऐसे ही जैसे पच्चीस वर्ष पहले देखते थे, ऐसे ही जैसे [ज़ोर-ज़ोरसे साँस] नहीं, नहीं, तुम मेरी ओर मत देखो, तुम ऐसे मत देखो। मैं माँ हूँ। मैं और कुछ नहीं हूँ। मैं और कुछ नहीं हूँ। [तेज़ीके बाद अल्प विराम] यह क्या, तुम नहीं मानते, तुम ऐसे ही देख रहे हो। मैं जानती हूँ तुम क्या कहना चाहते हो। मैं समझती हूँ, तुम्हारे दिलमें क्या है। रहने दो, रहने दो, मुझे भी कुछ याद आ रहा है ! मुझे भी कुछ याद आ रहा है। तुम्हारी आँखोंने मुझे सब कुछ याद दिला दिया। ओह, कोई उस यादको वापिस ले ले, ओह, मैं सब कुछ भूल जाऊँ। [अल्प विराम]

वे दिन···वे दिन, जब दिन-रात एक-दूसरेके पास बैठे रहना चाहते थे। वे दिन, जब हम चाहते थे कि रात-दिन ब्रह्माके रात-दिन बन जायें और तुम थे कि बड़ी दिक़्क़तसे लुप-छिपकर कुछ देरके लिए आते थे और··· और···[सहसा तेज़ीसे] नहीं, नहीं मुझे शर्म आती है। मुझे वह सब याद न दिलाओ। न···न···याद न दिलाओ। जाओ···तुम सब जाओ···[तेज़ीके बाद शान्ति] ओह, ओह, यह तो, यह तो तुम नहीं हो। तुम नहीं हो···यह तो मैं हूँ। नहीं, नहीं, मैं नहीं, मैं नहीं यह···यह तो तुम्हारी माँ है। तुम्हारी माँ, ओह, यह मुझे कैसे देख रही है; यह मुझे कैसे देख रही है? ओह, मुझे डर लगता है। यह कुछ कह रही है। यह क्रोधसे तिलमिला रही है। 'बहू, ओ बहू! क्या आग लग गयी, कबसे चीख रही हूँ। मैं कहती हूँ क्या पातालमें समा गयी? मुझे ये बातें अच्छी नहीं लगतीं। सारा काम पड़ा है। कोई बात है। कोई वक़्त है।' [विराम]

यह क्या, यह क्या! नहीं, नहीं, मैं जाती हूँ। मुझे जाने दो। मुझे जाने दो। अरे, तुम मेरा हाथ क्यों पकड़ रहे हो? यह तुम क्या कहने लगे—'नहीं, नहीं, नहीं,···

[तीव्र होकर सब शान्त हो जाता है]

यह सब क्या हुआ। यह सब क्या याद आ गया! वे दिन, जब हमारे दिलमें माँ-बापके लिए नफ़रत पैदा हो रही थी। हाँ, नफ़रत। वह नफ़रत थी। वे हमें मिलनेसे रोकते थे। वे अपने बेटेको अपना ही बनाना चाहते थे। अपने ही सुख-दुःखका उन्हें ध्यान था। अपने बेटेके सुख-दुःखको वे भूल चुके थे। ओह, वे ही माँ-बाप जिन्होंने उसे

बनाया था उसकी आँखोंका काँटा बन गये। घरमें सुख-शान्तिकी जगह कलह आ बैठी। मनका प्रेम मर गया। गिरस्ती बँधे हुए घायल बैलकी तरह घिसटने लगी। बेटा-बहू ढीठ हो गये और और माँ-बाप क्रोधी। [फिर एकदम आवेश] यह सब क्या है ? यह सब मुझे क्या याद आ रहा है ! मेरा पुराना जीवन क्यों मेरी आँखोंमें उभर रहा है ! नहीं, नहीं, नहीं, मैं अब कुछ नहीं सोचूँगी। कुछ नहीं सोचूँगी। मैं जाऊँगी, मैं जाऊँगी।···मैं जाती हूँ [विराम] लेकिन, लेकिन ये कैसी आवाज़ें उठ रही हैं ! यह कैसी गूँज गूँज रही है ! ये लड़ाईकी आवाज़ें, ये बुरी-बुरी बातें, यह उनका माँसे लड़ना, माँसे लड़ना। हाँ, हाँ, तुम माँसे लड़ते थे। तुमने घर छोड़कर भाग जानेकी धमकी दी थी। तुमने नया घर बसानेकी धमकी दी थी क्योंकि माँ नहीं चाहती थी कि उसका बेटा बहूके कहनेमें रहे। वह बहूका ध्यान रखे····वह···

नहीं, नहीं, नहीं, यह सब कुछ नहीं। मैं ऐसी नहीं हूँ। मैं तुम्हारी माँकी तरह अपना ही ध्यान नहीं रखती। मैं····मैं···[ज़ोरकी हँसी] यह क्या, यह क्या, यह कौन हँसा ! कौन हँसा ! कौन यह कह रहा है कि सब स्वार्थी हैं, सब अपना ध्यान रखते हैं, सदासे ही ऐसा होता आया है। माँ बेटेको चाहती है पर अपने लिए, अपने सुख-दुःखके लिए, अपनी शान्तिके लिए, अपने अरमानों-की पूर्तिके लिए, अपनी इच्छाओं, अपनी तमन्नाओंके लिए, अपने, अपने [ज़ोरसे निःश्वास] सब कुछ अपने लिए····अपने लिए····हाँ, अपने लिए, तुम ठीक····कह रहे हो। तुम ठीक कह रहे हो [धीमा स्वर] जब मेरे

बच्चे हो गये, जब मेरी दुनिया बस गयी तो···तो मैं तुम्हें भी भूलने लगी थी। तुम्हारा ध्यान भी मुझे नहीं आता था। मैं बच्चोंके पीछे दीवानी थी। तुम पुकारते रहते थे, मैं उनकी लोरियोंमें मस्त रहती थी। मुझे उनका दादीके पास रहना भी नहीं सुहाता था। दादी उन्हें गली-मोहल्लोंमें पकड़कर ले जाती तो मैं उनसे भी लड़ पड़ती। तब तुम कहते थे, 'दादी देखती नहीं बस खेलती है, तुम इतना देखती हो कि हमेशा चारपाईपर लिटाये रखती हो। तुम समझती हो दादीके साथ रहनेसे बच्चे बिगड़ जायेंगे। बच्चोंको गाँवमें ज़िन्दगी नहीं बितानी। बच्चोंको ज़मानेके अनुसार आगे बढ़ना है···

[**फिर एक दम चीख़कर**] बस···बस, अब कुछ मत कहो। ये कितनी भयानक, कितनी डरावनी बातें इन तसवीरोंने मुझे याद दिला दीं। कितनी डरावनी···क्या यह सब सच था, क्या सचमुच यह सब सच था? नहीं, नहीं, नहीं, यह सब ग़लत है। यह भ्रम है। यह जाल है···नहीं, जाल नहीं, भ्रम नहीं, सब सच है, सब सच है। [**आवेश**] नहीं, नहीं, सच नहीं, यह किसीका जादू है। [**गम्भीर**] नहीं, जादू नहीं, यह सच है। यही सच है। माँ बेटेको प्यार करती है लेकिन वह यह नहीं सोचती कि बेटा सदा बेटा नहीं रहता, बेटा सदा पालनेमें नहीं झूल सकता, बेटा सदा माँकी गोदमें नहीं खेल सकता। जो माँका बेटा है वह एक दिन पति भी बनता है, वह पिता भी बनता है, माँके साथ उसे किसी औरसे भी प्यार करना पड़ता है। प्यार कर्त्तव्य है, प्यार ही कर्त्तव्य है [**फुसफुसाहट**] प्यार कर्त्तव्य है। देशसे प्यार, धरतीसे

प्यार, इनसानसे प्यार, इनसानके भगवान्से प्यार....यही सब प्यार माँका प्यार है....माँके प्यारकी तरह सबको प्यार करना....सबको...सबको....अपनेको नहीं [विराम]

यह आज मुझे क्या हो गया ? यह कहाँसे सारी बातें याद आ गयीं ? नहीं, नहीं, यह सब ढोंग है, निरा ढोंग है, अपनेको धोखा देना है। माँ बेटेको सच्चा प्यार करती है, माँ बेटेको नहीं छोड़ सकती, मैं अभी जाती हूँ, मैं अपने-आप मोहनके पास जाती हूँ [हँसा] लेकिन यह कौन हँसा, किसने मुझे टोका ? तुम, तुम फिर आ गये। तुम फिर मुसकरा रहे हो। तुम फिर कुछ कह रहे हो। माँ सबसे बड़ी है, माँका प्यार सबसे बड़ा है, माँके प्यारके सहारे बेटा पलता है। माँके प्यारके बलपर वह देशको, दुनियाको, धरतीको, धरतीपर रहनेवालोंको, प्यार करता है। माँका बेटा माँके प्रेमको चारों तरफ़ बाँटता है, इसीमें माँका बड़प्पन है।

माँका बड़प्पन....माँ इसीलिए बड़ी है कि वह त्याग करती है। माँ इसीलिए बड़ी है कि वह अपनेको मिटाकर बेटेको पालती है। माँके प्रेमका भवन खड़ा होता है पुराने बन्धनोंकी नींवपर। नये बन्धन बनाना आदमीका स्वभाव है।

क्या...क्या आदमी पुराने बन्धन तोड़ता है ? नये बनाता है। पुराने तोड़ता है, नये बनाता है। पुराने तोड़ता है, नये बनाता है। [एकदम] यह क्या, यह क्या ? यह कैसी आवाज़ें उठीं; कैसी सूरतें सामने आयीं; यह मेरी माँ जो पीछे छूट गयी; यह मेरी बहन जो कहीं जाकर खो गयी; यह मेरे भाई जिनके लिए मैं कभी मरती थी, वे पराये हो

गये। और मैं···मेरे पति···एक दिन मैं तुम्हें भी भूल गयी···ओह-ओह, यह सब····यह सब···ओह-ओह-ओह [ताँगेकी खड़-खड़] यह क्या····क्या है, ताँगा ! फिर ताँगा आया [ताँगा रुकता है] अरे ताँगा रुका [दौड़ती है] देखूँ कौन है ? अरे, ये तो आवाज़ें आ रही हैं, जोर-ज़ोरकी आवाज़ें। ये तो वे हैं और यह मोहन ! मोहन···मोहन आया। [ज़ोरसे] मोहन ! मोहन, तुम आ गये····तुम आ गये। आओ-आओ मेरे बच्चे, आओ। अब तुम्हें कोई डर नहीं। अब तुम्हें माँसे भागनेकी जरूरत नहीं। तुम्हारी माँकी कमज़ोरी मिट गयी है। तुम्हारी माँ आज बड़ी ताक़तवर है। वह तुम्हें बाँधेगी नहीं, बाँधना मोह है, मोह कमज़ोरी है। वह तुम्हें प्यार करेगी। तुम्हें बल देगी। जिससे तुम अपने फ़र्ज पूरे कर सको। माँका नाम ऊँचा कर सको। माँके प्यारको सब कहीं फैला सको। आओ-आओ, मेरे बच्चे, मेरे गलेसे लग जाओ। [भावावेश] मोहन, मेरे बच्चे, मेरे लाल···

[गहन संगीत—समाप्त]

१९५४]

धुत्र्याँ
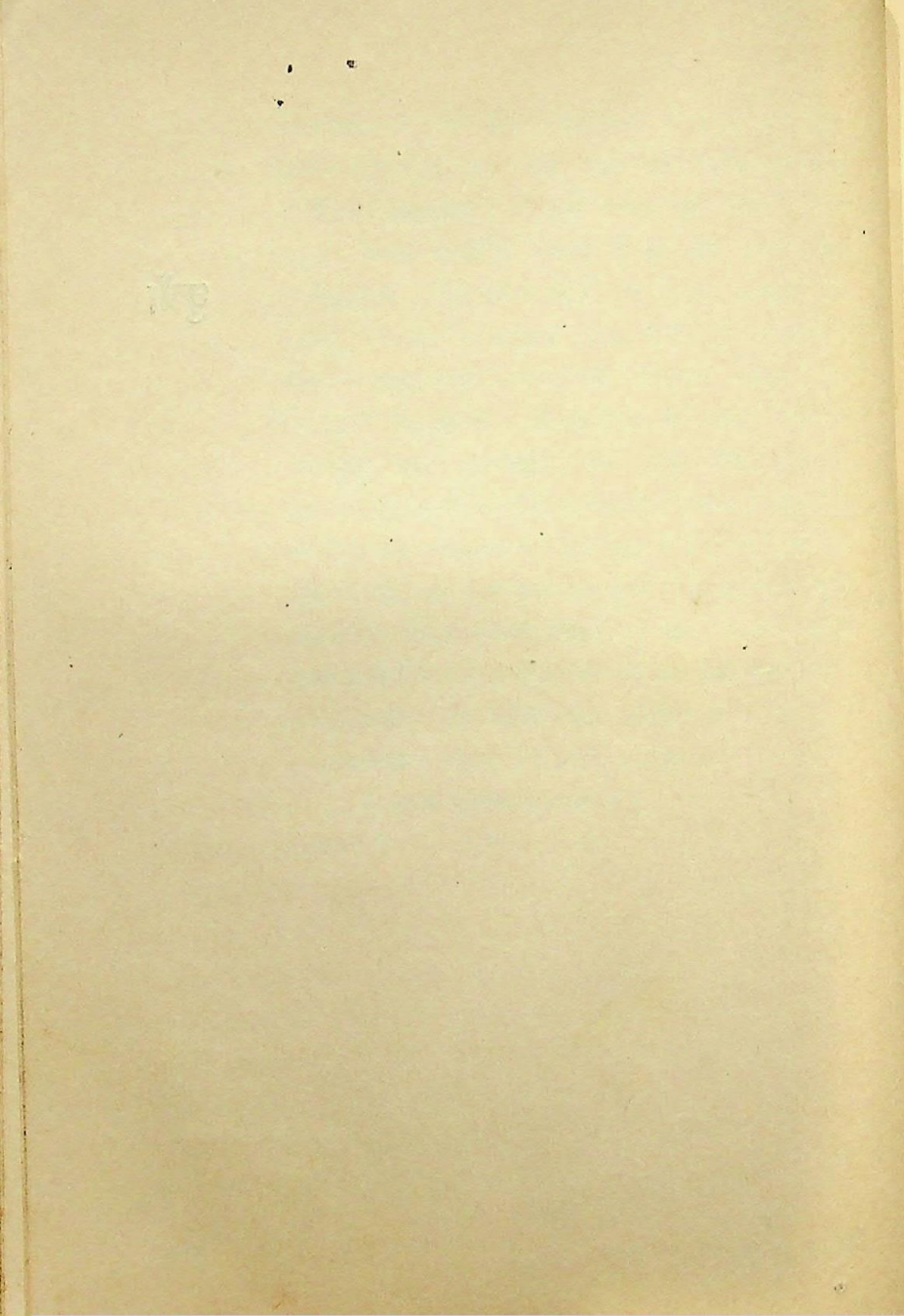
[प्रारम्भिक संगीतके बाद सपनेकी मादक ध्वन । प्रबोधका उच्छ्वासोंके बीच निद्रामें रुक-रुककर बोलना । पृष्ठभूमिमें मधुर स्वप्न-संगीत ।]

प्रबोध : [नींदमें] सुन्दर…अतिसुन्दर….कितनी मीठी है तुम्हारी आवाज़ । मानो दुनिया-भरका प्यार उसमें आकर सिमट गया है । प्यार दुनियाकी सबसे मीठी चीज़ है और तुम्हारी आवाज़ प्यारकी तरह है [पृष्ठभूमिमें युवतीका मधुर हास्य] तुम हँसती हो । [हलकी हँसी उठती रहती है] मानो मोहब्बत हँसती है । तुम हँसे जा रही हो । हँसे जाओ । मेरे प्यारकी तसवीर, हँसे जाओ । इतना हँसो कि तुम्हारी महकसे महकती यह हँसी दुनिया-भरको महका दे । [हलकी हँसी] पर मंजरी ! मंजरी !! तुम दूर क्यों जा रही हो ? [संगीत बन्द होता है] तुम्हारी आवाज़ मेरे कानोंसे दूर जा रही है…तुम्हारी तसवीर धुँधली पड़ रही है । [आकुलतासे] मंजरी, [तड़पकर] मंजरी ! तुम कहाँ चली गयीं ?…कहाँ चली गयीं ? [क्षण-भर संगीतकी मादक हँसीकी खिलखिलाहट] ओ तुम, नटखट कहींकी । बड़ी छलिया हो, मेरे ही पीछे आकर छिप गयी । [हँसी] क्या कहा ? मोहब्बतकी दुनियामें यह खेल रंगीनी पैदा करता है । मंजरी, मोहब्बतकी दुनियामें रंगीनी-के सिवाय और होता ही क्या है ? रंगीन पैमानेकी-सी रंगीनी [हँसी]…तुम मुसकराती हो । मुझे नींद आ रही है । तुम फिर कोई रागिनी छेड़ दो । सितार उठा

लो ! उठा लो ! हाँ, उठा लो, और मेरे पास बैठ जाओ। और पास···और पास, इतने पास कि तुम्हारी सुवासित साँससे मेरा शरीर महक उठे।

[सितारपर मादक संगीत]

सुन्दर···सुन्दर···[निःश्वास] तुम···कितनी प्रिय हो··· कितनी मधुर···

[धीरे-धीरे स्वर समाप्त होकर निःश्वास ही रह जाता है, सितारके संगीतमें गति आती है, फिर वह सहसा रुक जाता है]

प्रबोध : [भ्रममें] मंजरी, [आँखें खोलकर पुकारता है] मंजरी; मंजरी, संगीत क्यों बन्द कर दिया ? कहाँ चली गयी ? क्यों बार-बार छल करती हो ? देखो, रात बीती जा रही है। [प्रातःसंगीत] क्या····यह क्या····[आँख मलता है] क्या सवेरा हो गया ? चिड़िया चहचहाने लगीं ? [चिड़िया चहकती है] पर···पर मंजरी कहाँ है ? [सायरन बजता है] अरे ! सायरन ! हाँ, यह तो सायरन बजने लगा। तो···तो, तो क्या मैं सपना देख रहा था ?···ओह, मैं सपना देख रहा था। [निःश्वास] केवल सपना। हाँ, सायरन-की आवाज़ बताती है कि अब पाँच बज चुके हैं····और यह मेरा बंगला है, नं० ३० हिल रोड। यह मैं हूँ, प्रबोध-कुमार ! यह सामने विशाल नगर धीरे-धीरे नींदके कोहरे-से बाहर निकल रहा है [पृष्ठभूमिमें संगीत]···यमुनाके किनारे पावर-हाउसकी चिमनी धुआँ उगल रही है। काला और कड़वा धुआँ जो साँपके फनकी तरह तेज़ीसे ऊपर उठकर दुनियाको निगलनेके लिए चारों ओर फैलता जा रहा है। और पीछे वह २५ डाउन कितनी तेज़ीसे धुआँ

उगलती भागती आ रही है। वही काला लहराता धुआँ।
[ट्रेनका दूरसे पास और पाससे दूर जानेका स्वर, सीटी]
तो मैं सोकर जागा हूँ। हाँ, मैं सोकर जागा हूँ, [सिगरेट
सुलगाता है] मेरे चारों ओर शोर चुपचाप अँगड़ाई ले
रहा है। चुपचाप रात खिसककर दूर चली गयी है। चुप-
चाप मुसकाती-इठलाती उषा उस पार जा रही है।
लेकिन वह सपना, वह सपना ही तो था न। कहीं मंजरी
सचमुच ही तो नहीं आयी···कहीं दिखाई तो नहीं देती।
[दूरसे इकतारा बजता है, पास आता है] यह क्या···
यह कौन सितार बजाता है?···यह तो वही स्वर है। वही
मादक लय। [पुकारकर] मंजरी, मंजरी। [इकतारेका
स्वर और पास आता है] क्या; यह तो···अरे यह तो
इकतारा है, [ज़ोरसे हँसता है] मैं भी कैसा पागल हूँ।
इकतारेको सितार समझ बैठा। अरे, यह तो अन्धे भिखारी
का इकतारा है। भीख माँगनेका एक साधन। [नेपथ्यमें
भिखारी गाता है] 'जागो मोहन प्यारे', कितना रस
है इस भिखारीकी आवाजमें। सवेरे-सवेरे उसका यह
गीत सुनकर तो नींद आने लगती है। [हँसता है]
वह जगाने आता है और हम सोने लगते हैं। इतना
मीठा क्यों गाता है? सूरदास सभी मीठा गाते हैं।
[पृष्ठभूमिमें संगीत बराबर उठता है] उनकी अन्तरकी
आँखें खुली रहती हैं और शायद अन्तरकी आँखें दुनिया-
की खूबसूरतीको अच्छी तरह देखती हैं। उनके और उनके
प्रेम-पात्रके बीच कोई परदा नहीं रहता···सपनेमें भी तो
यह परदा हट जाता है, लेकिन वह केवल दो घड़ीके लिए
होता है···[दीर्घ निःश्वास] काश कि मेरी भी बाहरी

आँखें जाती रहतीं और मैं···मैं मंजरीसे····[अल्प विराम] नहीं-नहीं, मैं यह क्या सोचने लगा। मुझे यह सोचनेका क्या अधिकार है? मुझे सपने देखनेका क्या अधिकार है? मुझे अपनी पत्नीकी ज़िन्दगीपर अपने बीते कालके काले साये फेंकनेका क्या अधिकार है···? [आवेशके बाद मौन] अधिकार। अधिकारका यहाँ सवाल ही क्या? वह प्यारकी बात है और प्यार अधिकारकी दुनियासे बहुत ऊपर है। मैं अब भी मंजरीको प्यार करता हूँ। मुझे उसे याद करने, उसके सपने देखनेका अधिकार है। [एकदम हँसता है] मुझे सपने देखनेका अधिकार है, क्योंकि मैं उसे प्यार करता हूँ [हँसता हुआ] मूर्ख, सपनेमें वह देखता है जो प्यार नहीं कर पाता, बुझी हुई तमन्नाएँ, घुटी हुई हसरतें, प्यासे अरमान; सपनोंकी हवाई इमारत इसी तरहके मसालेसे तैयार होती है, मिस्टर प्रबोध!···
[पृष्ठभूमिमें संगीत उठता है, फुसफुसाकर] बुझी हुई तमन्नाएँ, घुटी हुई हसरतें, प्यासे अरमान···[गूँज]··· बुझी हुई तमन्नाएँ, घुटी हुई हसरतें, प्यासे अरमान···
[एकदम शान्ति] ठीक है, ठीक है। मैं उसे प्यार कहाँ कर सका? मेरी तमन्नाओंकी दुनिया उजड़ गयी। मेरे अरमान प्यासे रह गये। मैं हसरतोंका जो महल उठा रहा था वह समाजी जिन्दगीके बोझसे भरभराकर गिर पड़ा। मेरी प्रेमकी जोतको बेदर्द दुनियाने बेरहमीसे बुझा दिया। मैं अन्धकारमें डूब गया। निराशाके गहरे अँधेरेमें खो गया। सदा-सदाके लिए खो गया।
[दीर्घ निःश्वास, निराशाका संगीत तेज़ होकर मिट जाता है। फिर क्षणिक मौन।]

प्रबोध : [एक गहरे निःश्वासके बाद नाटकका पात्र कथाकार बन जाता है] मंजरीके मेरे जीवनमें आनेकी एक कहानी है, निर्दोष प्रेमकी एक अधूरी कहानी। वह कहानी जो अब एक नासूर बनकर रह गयी है। हम उसे सुनना चाहते हैं। बड़े निर्दयी हैं आप। मेरे हाथोंसे मेरे ही नासूरको कुरेदवाना चाहते हैं [अल्प विराम] कहते हैं कभी-कभी घावको चीरनेसे ही घाव भरने लगता है। [दीर्घ निःश्वास] तो पाँच वर्ष पहले जब मैं आनन्दके साथ काम करने बम्बई गया तो मुझे सपनेमें भी यह खयाल नहीं आया था कि एक दिन वह प्रेमके मैदानमें मेरा प्रतिद्वन्द्वी बन जायेगा। वह मेरे मित्रका मित्र था, पैसेवाला था। वह पैसेसे खेलता था, वह घुड़दौड़में दावँ लगाकर खेलता था। रंगीन रातोंमें पैमाने और प्यालेसे खेलता था, समाजमें इज़्ज़तसे खेलता था, घरमें मंजरीसे खेलता था। वह खिलाड़ी था और मैं खानाबदोश, आवारा, बे-घरबार, बे-सरोसामान, सोता कहीं तो खाता कहीं। लेकिन मुझे एक शौक़ था, अजीबोग़रीब शौक़। मैं पत्र लिखता था। फ़ुरसतकी हर घड़ीमें न जाने किस-किसको पत्र लिखता था और उनसे मुहब्बत करता था। उसी शिद्दतके साथ, जिस शिद्दतके साथ माँ अपने लख्तेजिगरसे मुहब्बत करती है। खानाबदोश होनेके कारण मैं अपने सभी पत्र आनन्दके घरके पतेपर मँगवाता था। [अल्प विराम] तो मेरे पत्र सबसे पहले आनन्दके घर आते और उसकी घरवाली मंजरी उन्हें देखती और चौंकती। इधर किसी दिन कोई पत्र न आता तो मैं फ़ोन-पर फ़ोन करके आनन्दको तंग कर देता। एक ऐसे ही

मौक़ेपर मैंने फ़ोनके उस ओर किसी रमणीका कोमल मधुर स्वर सुना। [पृष्ठभूमिमें प्रम-संगीत] मुझे याद है, उसने कहा था 'विश्वास रखिए, आपके सभी पत्र आप तक पहुँचानेका ज़िम्मा मेरा है।' और यह आवाज़—यह चन्द अल्फ़ाज़ ही मेरी तूफ़ानी ज़िन्दगीमें एक और तूफ़ानका आग़ाज़ बन गये। न जाने कैसे उस बेजान तारके दोनों ओर बैठे हुए हम दो जानदार एक दूसरेकी ओर खिंचने लगे। विज्ञानका यह भी एक अजीब करिश्मा है। इस मुर्दा तारको बीचमें करके न जाने कितने लजीले अपनी लाज उतारते हैं। बहरहाल वह नित्य नियमसे पूछती—'आपके पत्र मिल गये।' मैं जवाब देता—'शुक्रिया।' बहुत दिन तक इसी तरह चला। न मैंने मिलनेकी कोशिश की न उसने बुलाया। वैसे मैं अकसर उन पत्रोंपर उसकी कोमल उँगलियोंके निशान ढूँढ़ा करता। कभी-कभी मनसे पूछ बैठता—क्या वह मुझसे प्रेम करती है? मन मुझे फटकारकर कहता—तुम पुरुष भी अजीब जानवर होते हो। कोई औरत तुमसे दो मीठे बोल बोल दे तो तुम समझने लगते हो वह तुमपर मरती है....[हँसी, फिर क्षणिक मौन]

प्रबोध : [वही स्वर] एक दिन न ज़ाने कैसे आनन्दने मुझे खानेकी दावत दी। उस दिन आनन्दके खूबसूरत ड्राइंगरूममें मैंने पहलेपहल अपने पत्रोंकी रखवाली करनेवालीको देखा। [पृष्ठभूमिमें सौन्दर्य-संगीत] उसने तब चौड़े पाड़की गुजराती साड़ी पहनी थी। उसके कानोंमें गोल बालियाँ थीं और गोरे माथेपर लाल बिन्दी। उसके गज़-गज़ भरके लम्बे केश पीठपर लहरा रहे थे। वैभव

और विलासके बीच इस सादगीपर मैं मर मिटा। किंचित् मुसकराकर वह बोली, 'बहुत पत्र लिखते हैं।' 'ऐसे ही शग़ल है।', 'इतना क्या लिखते हैं आखिर ?', 'ऐसे ही खुराफ़ात !'

'खुराफ़ात क्या होती है ? सुनूँ तो।' [अल्प विराम] पर मैं उस दिन खुराफ़ातकी व्याख्या नहीं कर सका।

[सहसा यहाँ आकर स्वर पलट जाता है। कथाकार फिर नाटकका पात्र बन जाता है।]

प्रबोध : [आवेग] नहीं कर सका। कैसे नहीं कर सका। उस दिन मैंने सब कुछ तो बता दिया था। मैंने उसे बता दिया था कि मैं सपनोंकी दुनियामें रहता हूँ, कि सपनोंकी दुनियामें रहनेवाले रोमैण्टिक होते हैं। और हर औरत रोमैण्टिक मर्दको प्यार करती है। [काँपकर] क्या, क्या····ऐसा हुआ था ? [धीरेसे] हाँ हुआ तो था। हर एक बोले जानेवाले शब्दके दो अर्थ होते हैं। एक कानोंके लिए, दूसरा दिलके लिए। उस दिन उसने जो कुछ कहा था, मेरे दिलने उसका जो अर्थ लगाया वह यह था—इतने पत्र लिखते हो, मुझे भी लिखा करो न। मैंने उसी भाषामें उत्तर दिया था—लिखूँगा। और मैंने लिखा। एकसे जैसे अनेक पैदा होते हैं, वैसे ही उस एक पत्रसे खत्म न होनेवाला सिलसिला शुरू हो गया, और····[धीरेसे] और उसके साथ शुरू हो गयी दो दिलोंकी प्रेम-कहानी। [उच्छ्‌वास] प्रेम-कहानी। हाँ, वह प्रेम-कहानी थी। [एकदम] नहीं, नहीं, वह प्रेम नहीं था। वह प्रेम हरगिज़ नहीं था वह थी वासना,

ओछे दिलकी छिछली वासना। [हाँफकर] क्या, क्या ?····
[एकदम] क्या-क्या ? यह ठीक है वह दूसरेकी पत्नी थी। वह छिपाकर मेरे पत्र पढ़ा करती थी। वह मुझसे प्रेम नहीं करती थी···[क्षणिक शान्ति] वह मुझसे प्रेम नहीं करती थी ! तो····तो वह खिचाव क्यों था ? [आवेग बढ़ता है] क्यों वह मेरे बिना तड़पती थी ? क्यों उसके पत्रोंमें उसके हृदयकी कराहट छिपी रहती थी ? क्यों····
क्यों आखिर ? [संगीत उभरता है, धीमा पड़ता है]
क्योंका जवाब जानना चाहते हो···सुनो,वह मेरी ओर इसलिए खिच रही थी क्योंकि उसे अपने पतिसे वह कुछ नहीं मिला था जो वह चाहती थी, उसकी इच्छाएँ पूरी न हो पायी थीं और वह उन्हें पूरा करना चाहती थी। वह मुझसे प्रेम नहीं करती थी····वह मुझसे प्रेम नहीं करती थो [उतना ही आवेश] नहीं करती थी।

करती थी।

नहीं करती थी। [संघर्ष-संगीत]

करती थी।

नहीं करती थी।

करती थी। [संगीत तेज़ होकर बन्द होता है। क्षणिक शान्ति। फिर धीरे-धीरे बोलता है] यह मुझे क्या हो गया ? मैं इतना भी नहीं समझता कि वह मुझे प्रेम करती थी या नहीं करती थी। ठीक है, उसके पति थे, पर पति केवल स्वामिनीका स्वामी ही नहीं होता, सखा भी है। वह पहले सखा है। पहले और पीछे क्या ? वह सदा, सब कहीं, सखा है, केवल सखा। जो पति इस बात-

को भूल जाता है वह आदमी नहीं शैतान है और शैतानके साथ शैतानियत करनेमें कोई पाप नहीं है।

[व्यंग्यकी हँसी] यह कौन हँसता है? कौन... ओह, यह तो मैं ही हँस रहा हूँ। मैं ही हारे हुए खिलाड़ी-की तरह हँस रहा हूँ। मैं हार गया...मैं हार गया...मुझे याद है, मेरी कहानी सुनकर मेरे मित्रने कहा था—प्रबोध, यह पतिको छोड़नेका सवाल नहीं है, यह समाजकी मर्यादा-का सवाल है। समाजकी गवाही देनेपर वे पति-पत्नी बने थे। समाजकी गवाही देनेपर वे अलग हो सकते हैं....। [दीर्घ निःश्वास] समाजकी इस गवाहीके लिए मैंने क्या नहीं किया। मंजरीके पतिसे बातें कीं, समाजके वारिसोंका दरवाजा खटखटाया; पर सबने यही कहा [आवेश] मैं शैतान हूँ। मैं बदमाश हूँ।.... [अल्प विराम] हाय रे समाज! जीमें आता है इस समाजका गला घोंट दूँ, आग लगा दूँ, इसको जड़को उखाड़ फेंकूँ। [आवेश] यह समाज गन्दा है, यह साफ़गोईको नहीं मानता। सत्यको नहीं स्वीकार करता। इसे शुद्ध हृदयसे जलन है, यह ईमानदारीका दुश्मन है। मंजरीके उस शैतान पतिने मंजरी-को आज्ञा दी कि उसे मुझसे मिलनेका कोई अधिकार नहीं। वह मुझसे कोई वास्ता नहीं रख सकती [अल्प-विराम] यह कैसी आज़ादी है! यह कैसा आत्माका स्वराज्य है! दो प्रेमी एक दूसरेसे प्रेम नहीं कर सकते। दो बिछुड़ी आत्माओंका मिलन नहीं हो सकता। इसपर मेरे मित्रने कहा था। क्या कहा था? क्या कहा था? कहा था, 'तुम्हें मंजरीसे प्रेम करनेसे कौन रोकता है? कौन रोक सकता है?' 'तुम्हारा समाज रोकता है।' नहीं,

समाज प्रेम करनेसे नहीं रोकता ! क्या, क्या कहा ? समाज प्रेम करनेसे नहीं रोकता ! 'हाँ, समाज प्रेम करनेसे नहीं रोकता । वह रोकता है मिलनेसे !'

मैं मंजरीसे प्रेम कर सकता हूँ, पर उससे मिल नहीं सकता । [व्यंग्य-भरी हँसी] यह कैसा आदर्श है ! कैसा आडम्बर है ! जिसे प्यार करे उसके दर्शन तक न कर सके । [अल्प विरामके बाद गम्भीर स्वर] हाँ, प्रेम तो यही है । प्रेमकी केवल एक कामना होती है····कौन-सी कामना । यही कि प्रेम प्रेमसे भरपूर रहे । और प्रेमीकी कोई कामना नहीं होती । होती है ! कौन-सी ? कि वह अपने प्रेमकी ज्वालामें सदा जलता रहे । हमेशा अपनी खुशीसे, हँस-हँसकर, अपना खून बहाता रहे । [विषादपूर्ण संगीत] ओह····ओह···कैसा है यह प्रेम ! एक दूसरेसे प्रेम करो लेकिन प्रेमको बेड़ी मत बनने दो । किसने कहा था यह···याद नहीं आता, लेकिन मंजरीने अपने अन्तिम पत्रमें मुझे लिखा था—'हमारा प्रेम कसौटीपर कसा जा रहा है । हम दूर हट रहे हैं, लेकिन मनसे नहीं, शरीरसे । आजसे हम एक दूसरेको केवल बन्द आँखोंसे देख सकेंगे । एक दूसरेकी बात केवल बन्द कानोंसे सुन सकेंगे ।'

प्रबोध : [दीर्घ निःश्वास] और वह कहानी खत्म हो गयी । नहीं, नहीं, खत्म नहीं हुई । कथा तो यहींसे शुरू होती है । जो अन्त है वही तो आरम्भ है । हर अन्तमें आरम्भ है । हर आरम्भमें अन्त है । एक दिन धुआँ उगलती हुई तूफ़ान-मेलने मुझे यहाँ ला पटका । यह विज्ञान भी कैसा जादूगर है । उसने इस काले और कड़वे धुएँको कितना ताक़तवर बना दिया है । लेकिन एक दिलका धुआँ होता है जो ज़िन्दगी

को कड़वा कर देता है। मेरी ज़िन्दगीको भी इसने कड़वा कर रखा है। [हलकी हँसी] मेरे दिलमें धुआँ कहाँसे आया? हाँ, वहाँ कहाँसे आया? उसमें तो मंजरीका प्रेम था और प्रेम मीठा होता है, कड़वा नहीं....[फुसफुसाना] प्रेम मीठा होता है, कड़वा नहीं। प्रेम मीठा होता है, कड़वा नहीं....[एकदम] अरे? मैं यह क्या मुहारनी-सी रटने लगा। क्या मुझे प्रेमकी मिठासपर विश्वास नहीं है? नहीं....नहीं, विश्वासकी बात नहीं, प्रेम मीठा ही होता है। [सिगरेट सुलगाता है] धुआँ भी असलमें न कड़वा होता है और न मीठा। सिगरेटका धुआँ है जो साँपकी गेंडुलकी तरह उठता है और सब कहीं कड़वाहट छोड़कर मिट जाता है। अगरबत्तीका धुआँ है जो उसी कड़वाहटको दूर करनेके लिए आहिस्ता-आहिस्ता सारी फ़िज़ाको महका देता है। शस्त्रोंका धुआँ केवल वातावरणको कड़वा करके नहीं रह जाता, महानाशकी लीला भी रचता है। एक धुआँ कजरारी आँखोंका शृंगार बनता है, तो एक दिलको फूँकता है और एक तमाम कायनातको फूँकनेकी तैयारी करता है। लेकिन....लेकिन। मैं धुएँकी फ़िलासफ़ीके पीछे क्यों पड़ गया। कहाँ मंजरीका प्रेम? कहाँ यह धुआँ? यह धुआँ कहाँ-से आया? किसीने कहा है—नारीकी वाणीमें मधु और हृदयमें विष रहता है, कहीं मंजरीके हृदयमें विष हो और...[चीख़कर] मूर्ख पापी, विष भरे फिरते हो अपने हृदयमें और दोष देते हो मंजरीको....[अल्प विराम] दोष देता हूँ मंजरी-को। ठीक तो है, दोष उसीका है। वह मेरे जीवनमें क्यों आयी?....क्यों आयी?...क्यों आयी? [एकदम शान्त] क्यों कि मैंने उसे आने दिया। [तेज़] नहीं, मैंने नहीं आने

दिया। [अल्प विराम] मैं भी कैसा मूर्ख हूँ। बार-बार शब्दोंके आल-जालमें उलझ जाता हूँ। सीधी-सी बात है, वह मेरे पत्रोंसे मेरी ओर खिंची। पतिका खिंचाव ढीला था और जवानीका पागलपन जोशपर। इसलिए वह खिंचाव मजबूत हो गया। ज्योमेट्रीके फ़ारमूलेकी तरह सीधी सरल बात है [अल्प विराम] सीधी सरल बात तो है, लेकिन क्या यह प्रेम नहीं है? नहीं-नहीं—हाँ, नहीं। यह प्रेम होता तो दिलका धुआँ मेरे तन-मनको कड़वा न करता? मेरे प्राणोंको न घोंटता···[अल्प विराम]

क्या मेरे प्राण घुट रहे हैं? हाँ, घुट रहे हैं। तभी तो सपने आते हैं। सपने इसलिए आते हैं कि मेरे प्राण घुट रहे हैं। नहीं-नहीं····सपनोंका कारण यह नहीं है। तो 'क्या है? क्या है' हाँ क्या है? वह है···वह है मेरा विवाह। मैंने विवाह करके अपनेको धोखा दिया। मंजरीको धोखा दिया। अपनी पत्नी नीरजाको धोखा दिया। प्रेमको धोखा दिया। मैं पापी हूँ। मैं अपराधी हूँ। मैं धोखेबाज हूँ। झूठा हूँ। मक्कार हूँ। [विषादपूर्ण संगीत तेज़ होकर धीमा होता है] मैं पापी हूँ, अपराधी हूँ। मैंने धोखा दिया है। [फिर आवेश] नहीं, नहीं, यह सब ग़लत है। मैं पापी हो सकता हूँ, क्योंकि पापका सम्बन्ध आत्मासे है, पर मैं अपराधी नहीं हूँ। मैंने धोखा नहीं दिया है। हाँ, मैंने धोखा नहीं दिया। मुझे यह स्वीकार करनेमें ज़रा भी शर्म नहीं आती कि मैं पुरुष हूँ और पुरुषको सदा नारीका संगतिकी ज़रूरत रहती है। पुरुष और स्त्री·······

यही सृष्टि है, यही सनातन और शास्वत सत्य है।

यही अर्द्धनारीश्वर है। मुझे इस विवाहके लिए कोई दुःख नहीं है....[अल्प विराम]

कोई दुःख नहीं है।

मैं अपनी पत्नीसे प्रेम करता हूँ।

तुम अपनी पत्नीसे प्रेम नहीं करते ?

नहीं कैसे करता, मैं उससे प्रेम करता हूँ।

तुम मंजरीसे प्रेम करते हो ?

हाँ करता हूँ ? मैं मंजरीसे प्रेम करता हूँ।

प्रेम एकसे किया जाता है।

प्रेम एकसे किया जाता है। [एकदम] नहीं, यह ग़लत है। ग़लत है। प्रेम सबसे किया जा सकता है। मैं नीरजासे प्रेम करता हूँ। मैं मंजरीसे प्रेम करता हूँ। मंजरीका प्रेम मुझे दासताकी ज़ंजीरोंमें नहीं बाँधता। वह मुझे आज़ाद रखता है। उसे मैं बहुत प्रेम करता हूँ, क्योंकि मैं उसे पा नहीं सकता। नीरजा....नीरजाको भी मैं कम प्यार नहीं करता, पर उस प्रेममें आवेश नहीं है, क्योंकि प्रेम पात्र सदा पास है।

जो दूर रहता है उसके लिए इच्छा जागती है और उसे पानेके लिए दिल तड़पता है...[व्यंग-भरी हँसी]

मैं भी ख़ूब हूँ। अपनेको बचानेके लिए कैसी फ़लसफ़ा बघारने लगा हूँ। असलमें समय और परिस्थितिने जिस घावपर मरहम लगा दिया था वह आज फिर ताज़ा हो उठा है और उसके ताज़ा होनेके कारण हैं, उनमें सबसे-बड़ा कारण है मेरा मेरी पत्नीसे झगड़ा। यह सपना, यह फ़लसफ़ा, यह आदर्श और यह प्रेम, इन सबकी चर्चा उसी झगड़ेको छिपानेके लिए है। [हँसता

है]। मैं स्वीकार करता हूँ, मेरा नीरजासे झगड़ा हुआ और...और वह चली गयी। मैं आज अकेला हूँ, निपट अकेला। [अल्प विराम, सिगरेट सुलगाकर पीता है] यह कड़वा धुआँ भी कभी-कभी कितनी शान्ति देता है और साँपकी गेंडुलकी तरह उठनेवाले इसके बादलोंमें कितनी तसवीरें उभरती हैं। वह देखो, वह मंजरी मिट रही है और नीरजा आगे बढ़ रही है। मैं जानता हूँ नीरजा आयेगी। वह बड़ी भली है, पर तनिक जल्दी आवेशमें आ जाती है। वह हमेशा इसी तरह जाती और आती है। वह मुझसे प्रेम करती है। [हँसी] वह मुझसे प्रेम करती है, पर प्रेम तो सबसे हो सकता है। वह किसी औरसे भी प्रेम कर सकती है...[काँपकर] क्या...क्या...वह किसी औरसे भी प्रेम कर सकती है? नहीं, नहीं, वह किसीसे प्रेम नहीं करती। वह मुझसे प्रेम करती है, केवल मुझसे। वह मेरी पत्नी है। [हँसी] मंजरी भी आनन्दकी पत्नी है, पर वह मुझसे प्रेम करती है....मंजरी मुझसे प्रेम करती है। ....नहीं-नहीं....नहीं यह तुलना ग़लत है। मंजरी और आनन्दकी आपसमें नहीं बनती....[व्यंग्यसे] मैं और नीरजा भी तो लड़ते हैं। और मंजरीके कारण लड़ते हैं। मैं मंजरीके कारण नीरजासे छुटकारा पानेको उत्सुक हूँ। [चीख़कर] नहीं-नहीं, यह सब ग़लत है, झूठ है, भ्रम है, मैं नीरजासे छुटकारा पाना नहीं चाहता। मैं उससे प्रेम करता हूँ, मैं केवल उसीसे प्रेम करता हूँ। और वह मुझसे प्रेम करती है, केवल मुझसे। वह किसी औरसे प्रेम नहीं करती, नहीं कर सकती। वह मेरी पत्नी है॥

[पृष्ठभूमिमें कारका भोंपू] यह क्या····कार····अरे, यह कार तो मेरे बँगलेमें दाखिल हो रही है। हाँ-हाँ, यह तो अन्दर आ गयी। तो क्या नीरजा आ गयी? [कार रुकती है]····नीरजा आ गयी···। [दरवाज़ा खुलता है] किसी-ने दरवाज़ा खोला। ओह, यह तो नीरजा है। सचमुच नीरजा है। ऊपर आ रही है [ज़ीनेमें चढ़नेका स्वर] नीरजा ऊपर आ रही है। [पुकारकर] ओह नीरजा, तुम कितनी अच्छी हो? कितनी प्रिय हो? कितनी सुन्दर हो? आओ प्रिये, आओ, रात-भर मैं बुरे-बुरे सपने देखता रहा हूँ। शुक्र है तुम आ गयीं। तुम्हारे आते ही धुआँ भी मिट गया। एकदम मिट गया। तुम कितनी अच्छी हो? तुम कितनी अच्छी हो नीरजा, तुम कितनी अच्छी हो? [सुदीर्घ उच्छ्‌वास, फिर किवाड़ खुलने-का स्वर]।

१९५२]
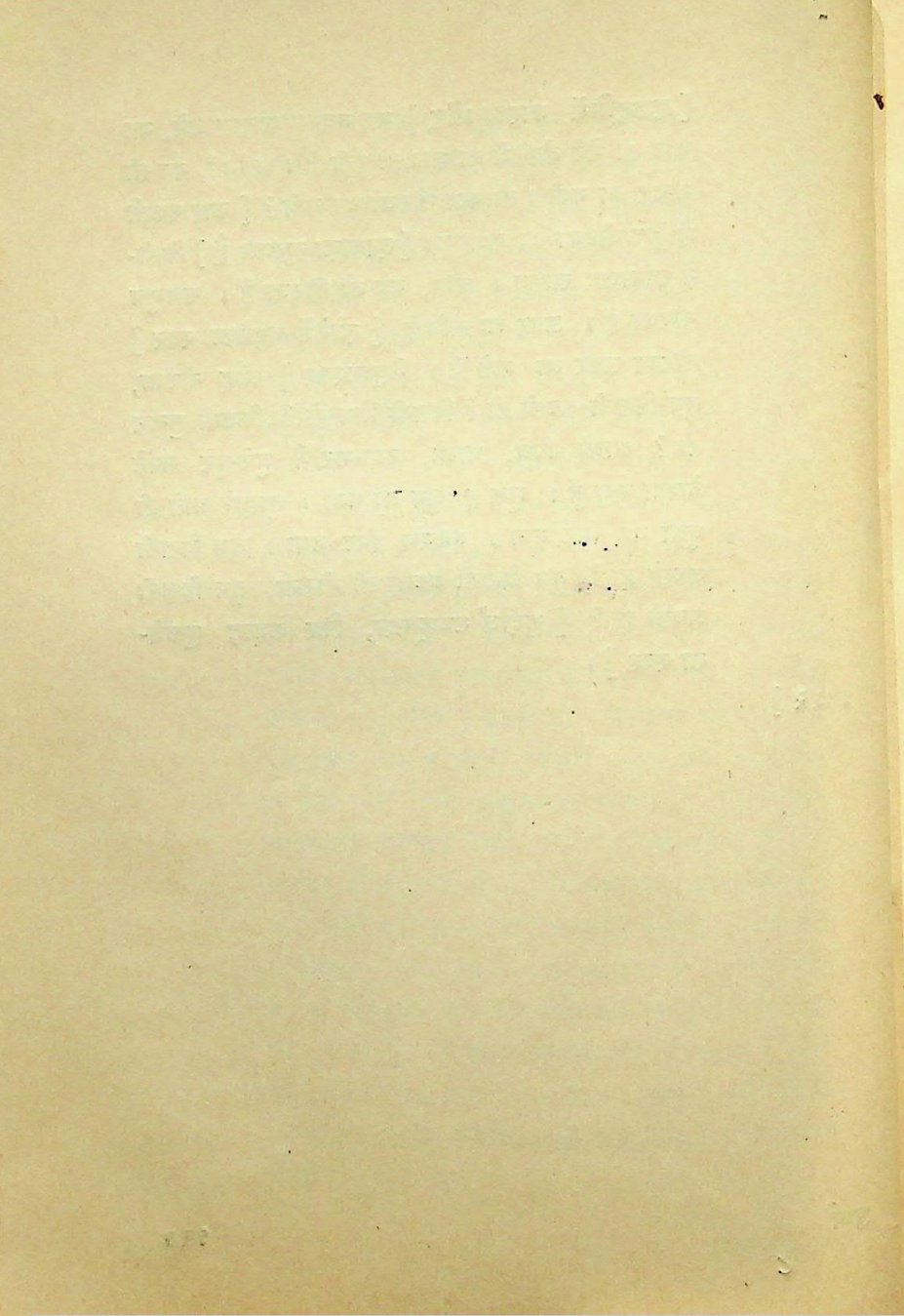
●

ऋौर वह जा न सकी
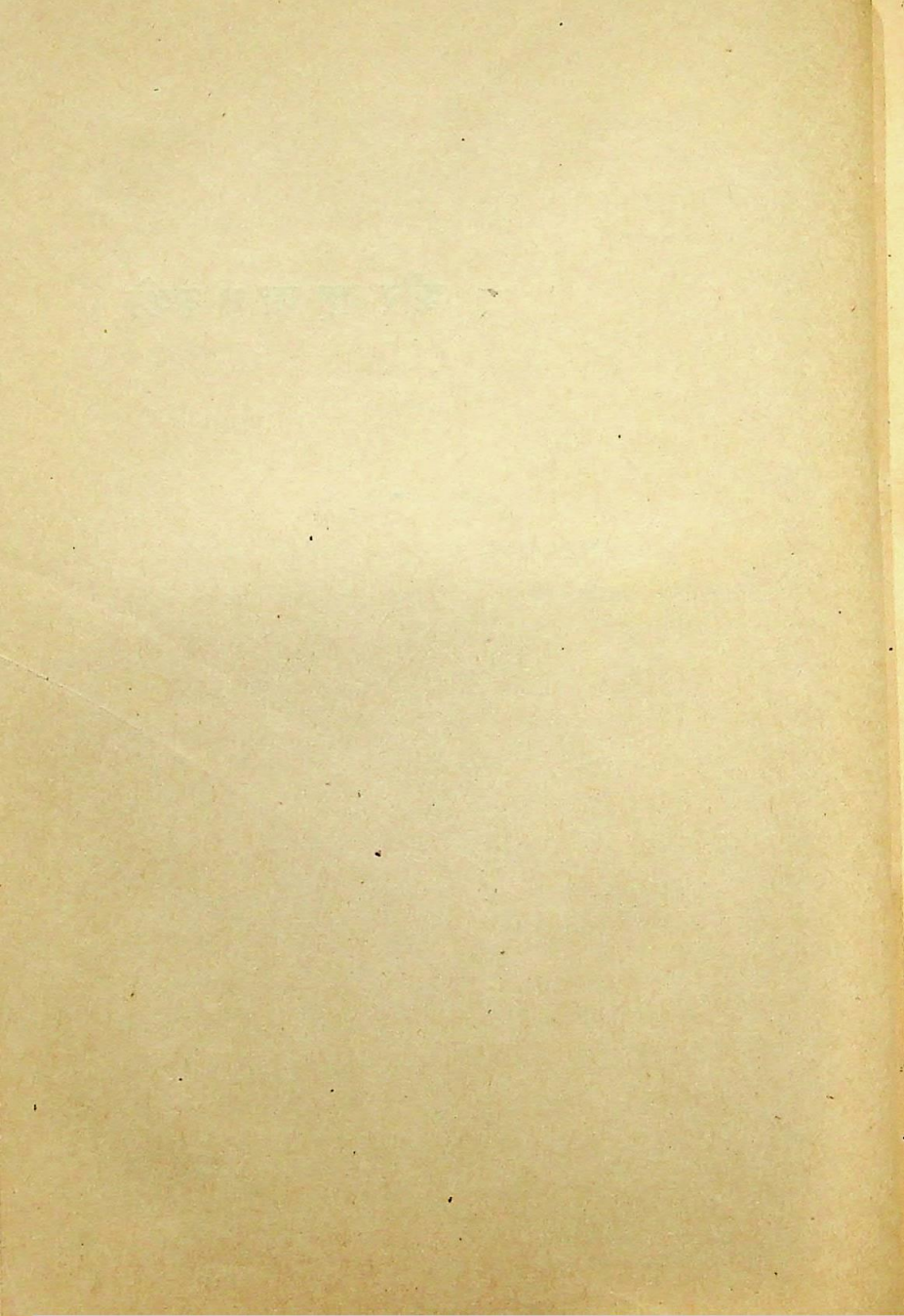
[पात्र : शैलेन्द्र : एक प्रसिद्ध लेखक, शारदा : शैलेन्द्रकी पत्नी, शरत् : उनका पुत्र, शशि : एक पड़ोसिन, श्रीधर : परिवारका एक मित्र, सखी : शारदाकी सखी, शीला : शैलेन्द्रकी प्रशंसक एक महिला, एक अन्य मित्र। शैलेन्द्र कमरेमें लेटा हुआ किताब पढ़ रहा है। पत्नी तेज़ीसे बड़बड़ाती हुई बाहरसे आती है और निकल जाती है। शरत् भड़भड़ाता हुआ कमरेमें दाख़िल होता है]

शरत् : [तख़्तपर चढ़कर] पिताजी, डॉक्टरने कहा है कि अम्माको उँगली कटेगी।

शैलेन्द्र : [धीरेसे] नीचे उतरो।

शरत् : [पूर्ववत्] अम्माकी उँगली कटेगी।

शैलेन्द्र : मैं कहता हूँ, नीचे उतरो, जाओ। जाओ भाई, उतर जाओ।

शरत् : [रुआँसा] हम कहते हैं, अम्माकी उँगली कटेगी!

शैलेन्द्र : ओफ़्फ़ो! तो रोते क्यों हो? कहाँ है अम्मा? क्या हुआ उँगलीको?

शरत् : अम्माकी उँगलीमें फुन्सी निकली है। डॉक्टरने उसे काटनेको कहा है।

शैलेन्द्र : ओहो, यह बात थी! आप अम्माके साथ डॉक्टरके यहाँ गये थे! जाओ, जाओ, मुझे पढ़ने दो। बाहर खेलो, जाओ।

शारदा : [दूरसे आता स्वर] शरत्, जाओ, मैं दूध रख आयी हूँ। जाओ, पियो। [पास आ जाती है] लीजिए।

शैलेन्द्र : क्या है, शारदा?

शारदा : दूध ।

शैलेन्द्र : लाओ ।

शारदा : मैंने कहा कि घरमें आटा नहीं है ।

शैलेन्द्र : [पीते-पीते] तुमने दूध पी लिया, शारदा ?

शारदा : मैंने कहा कि आटा नहीं घरमें ।

शैलेन्द्र : सो तो अन्नपूर्णा जाने ।

शारदा : [तीव्र तलख़ी] अन्नपूर्णा गयी भट्ठीमें ! मुझे आटा चाहिए ।

शैलेन्द्र : शारदा संगीतकी देवी है, उसका स्वर इतना कर्कश नहीं होना चाहिए ।

शारदा : आग लगे संगीतमें ! मैं पूछती हूँ कि आप अपनी काहिली और निकम्मेपनको बातोंके पीछे क्यों छिपाते हैं ? कुछ करते क्यों नहीं ? यदि ऐसे ही जीवन बिताना था तो शादी क्यों की ? क्यों शहरमें आकर बसे ? कहीं जंगलमें जाकर रहते ! कान खोलकर सुन लो, मैं अब इस तरह आपका घर नहीं चला सकती !

शैलेन्द्र : मेरा घर ? किसने कहा कि घर मेरा है ? घर तो घर-वालीका होता है ।

शारदा : मैं अब इन बातोंमें आनेवाली नहीं हूँ । अगर रोटी खानी है तो उठकर बाज़ार जाओ और गेहूँ लेकर आओ ।

शैलेन्द्र : आ जायेंगे गेहूँ । तुम दूध पियो जाकर ।

शारदा : मैं कहती हूँ, इस तरह काम नहीं चलेगा । मुझे आज फ़ैसला करना है ।

शैलेन्द्र : फ़ैसला करना है ? किस बातका ?

शारदा : इस बातका कि आपको काम करना है या नहीं ? आप कभी कुछ सोचते भी हैं कि····

शैलेन्द्र : [बीचमें] यही तो मुसीबत है ! इतना सोचता हूँ कि फ़ुरसत नहीं मिलती।

शारदा : ख़ाक सोचते हो ! कुछ सोचते तो ये दिन देखने पड़ते ? तुम तो एकदम निकम्मे हो गये हो, तुमसे इतना भी नहीं हो सकता कि घरको दियासलाई ही दिखा दो !

शैलेन्द्र : ठीक कहती हो, शारदा ! मैं दियासलाईका भी प्रयोग नहीं जानता। काश कि मैं उसे जला सकता ! जला पाता तो प्रकाश न हो जाता ? अब तो निरे अन्धकारमें भटक रहा हूँ।

शारदा : [तिलमिलाकर] उफ़, उफ़....तुमसे बातें करना सर-दर्द मोल लेना है। मैं तुमसे जवाब नहीं माँगती, बहस नहीं करती। केवल इतना सूचित करती हूँ कि आज जो श्रीमान्‌के कुछ मित्र खाना खाने आनेवाले हैं उनके लिए घरमें आटा नहीं है, बस।

[कहकर शारदा तेज़ीसे धम-धम करती हुई जाती है— बड़बड़ाती रहती है]

बातें ! बातें !! जब देखो, बातें ! जब सुनो, बातें ! [गिलास फेंकती है] जीमें आता है, जिस किसीको खानेको कह देते हैं। यह नहीं सोचते कि खाना आयेगा कहाँसे ? कोई बात है ! मुझे दर-दर भटकना पड़ता है। बाज़ार जाऊँ तो मैं ! अस्पताल जाऊँ तो मैं ! घरको देखूँ तो मैं ! और आप हैं कि आरामसे लेटे-लेटे ज़मीन आस-मानके कुलाबे मिलाते रहते हैं ! दोस्तोंके साथ वे क़हक़हे लगाते हैं कि आसमान फटने लगता है, पर मुझसे यह भी नहीं पूछ सकते कि तुम्हारी उँगलीमें क्या हुआ है ?....

[ठिठकती है]

ओह, यह क्या ? यह दूध किसने बखेरा है ? [कड़ककर] शरत्, ओ शरत् ! आखिर अपने बापका बेटा है ! निकम्मा, उजाड़ू ! क्यों रे, दूध क्यों बखेरा है ?

शरत् : [रुआँसा] हम तो आ रहे थे। गिलासमें पैर लग गया।

शारदा : [चिल्लाकर] पैर लग गया ! क्यों लग गया ? देखकर नहीं चला जाता ? बड़ी नदी बह रही है न दूधकी ! कल को यह भी नहीं मिलेगा। इन लच्छनोंसे दूध क्या, पानीकी बूँदको तरसोगे ! तुमने जन्म ही ऐसे घरमें लिया है। [स्वर भर्राता है] पिछले जन्ममें ज़रूर पाप किये होंगे। उठा गिलास !""देख क्या रहा है ? कुछ खाये-पियेगा भी ? ले, यह दूध ले। [दूध उलटती है] पहले ही सींक-सा है। हड्डी-हड्डी गिन लो। बड़ा होगा तो कहेगा, 'माँ-बाप हमारा पेट भरने लायक़ नहीं थे, तो हमें पैदा क्यों किया था ?' मैं कहती हूँ, देख क्या रहा है ? जल्दीसे पीकर गिलास मुझे दे।

शरत् : [झिझकता है] अम्मा, तुम....

शारदा : मैं कहती हूँ, दूध पी ! फिर शशिके घर जाना है।

शरत् : शशि चाचीके घर ? क्यों अम्मा ?

शारदा : आटा लाने। घरमें भिखारीके लिए भी मुट्ठी-भर आटा नहीं है। कोई खाने आयेगा। मैं चली जाती पर मुझे अभी बरतन माँजने हैं, दाल बीननी है [बरतन खटकते हैं] उससे कहना, दो सेर आटा दे दे। मैं तब तक बरतन माँजती हूँ।

शरत् : [धीरेसे] अम्मा !

शारदा : हाँ।

शरत् : तुम बरतन न माँजो।

शारदा : मैं बरतन न माँजू ? क्यों, और कौन माँजेगा ?

शरत् : हम माजेंगे ।

शारदा : [चकित] तू....

शरत् : हाँ । तुम्हारे हाथमें फुन्सी निकल रही है, दुखेगी ।

शारदा : [एकदम काँपती है, फिर प्यारसे हँसती है] जा, जा, आटा ले आ ! बरतन माँजेगा ! बापने निहाल कर रखा है, जो बेटा करेगा ! जा बेटा !

[शरत् जाता है । बैठकमें-से आवाज़ आती है]

शैलेन्द्र : अरे भई, पानी भेजना !

शारदा : [स्वगत] लो शुरू हो गये हुक्म ! अब पानी दो, अब पान दो ! इतना भी नहीं कि उठकर ले जायें ।

शैलेन्द्र : शरत्...शरत्...ओ शरत्...

शारदा : [कुछ ज़ोरसे] वह यहाँ नहीं है । पड़ोसमें गया है ।

शैलेन्द्र : तो दो गिलास पानी भेज दो, और पान भी...

शारदा : [तिनककर] भेज दो ! भेजनेको कौन नौकर बैठा है ? यह भी नहीं कहा जाता कि दे जाओ ! एक मुसीबत है ! अब हाथ धोओ, धोती बदलो । न जाने कौन आया है । [पानी उलटाती है] कोई हो, मैं तो ऐसे ही जाती हूँ ।

[जाती है]

शैलेन्द्र : अरे भई, शारदा...

शारदा : लीजिए !

शैलेन्द्र : लाओ, और पान भी भिजवा दो ।

शारदा : लाती हूँ ।

[लौटती है कि शरत् भागा आता है]

शरत् : अम्मा [हाँफते हुए] चाचीने आटा नहीं दिया ।

शारदा : नहीं दिया ! क्यों ?

शरत् : कहा है कि तीसरे दिन आटा माँगने आ जाते हैं? कहाँसे दें।

शारदा : [तड़पकर] क्या कहा, 'तीसरे दिन आ जाते हैं?' कौन मरा जाता है तीसरे दिन! और लाती हूँ तो क्या कभी रखा है? तूने कहा नहीं?

शरत् : [मौन रहता है]

शारदा : [तीव्र होकर] हाय राम, तूने कुछ नहीं कहा! बिलकुल अपने निकम्मे बापपर गया है। घरमें ज़बान क़ैंचीकी तरह चलती है—बाहर निकलते ही गला बैठ जाता है। अरे, तुझसे मुँह फाड़कर नहीं कहा गया कि चाची, बता तो कौन-सा आटा रख लिया है तेरा! ले जाते हैं, तो दूसरे दिन दे भी जाते हैं।

[शरत्, फिर भी मौन ही रहता है]

शारदा : [तीव्र स्वर] अब बुतकी तरह क्या खड़ा है? जा, अपने बापको पान दे आ। मैं शशिको देखती हूँ। [जाते-जाते] क्या समझा है उसने? कभी कुछ माँग लेती हूँ तो उसने भिखमंगा ही समझ लिया है....

शशि : [दूरसे आता स्वर] शरत्! ओ शरत्!

[शशिका प्रवेश]

शारदा : कौन है? ओहो, शशि है! क्या और कुछ कहना है, जो यहाँ आयी हो? मैं कहती हूँ, शशि, तुझे ताना मारते शर्म तो नहीं आयी। आटा नहीं देना था तो मना कर देती, पर बड़े बोल क्यों बोली? बता तो, किस दिन तेरा आटा नहीं लौटाया और कौन-कौन-सी चीजें रह गयी हैं, बता।

शशि : देख भाभी, इतना तड़कने-भड़कनेकी ज़रूरत नहीं है। आटेको मैंने मना नहीं किया। निकाला हुआ रखा है।

मैं तो कह रही थी कि भाई साहबको हाथ, पाँव चलाने चाहिए। इस तरह....

शारदा : [तड़पकर] बस-बस, शशि रहने दे ! उन तक न जा। उन्हें तू खिला रही है क्या ? तेरा इतना साहस कि तू उन्हें निकम्मा कहे ! तेरे तो इनके पैर धोने लायक़ भी नहीं हैं; दुनिया पूजती है इन्हें। दूसरे दर-दर मारे फिरते हैं तो कोई नहीं पूछता, यहाँ घर बैठे पूजने आते हैं। कोई दिन जाता होगा जो पाँच-सातका खाना न बनाती हूँ। बनाती हूँ तो मैं, मुसीबत है तो मेरी, तुझे क्या दर्द उठा जो लगी उनका अपमान करने ?

शशि : इसमें अपमानकी क्या बात है, तू ही तो कहा करती है....

शारदा : अपमानको और क्या गोली मारती ! दो बातमें आबरू मिट्टीमें मिलती है। दो पैसे हो गये हैं तो लाडोका दिमाग़ फिर गया है ! पैसेकी यही माया है। अभिमान फूलता है, आदमियत सिसकती है। यहाँ तो तन खपाना पड़ता है, तब दो टुकड़े नसीब होते हैं पर कोई बता दे कभी किसीका कुछ खाया है, किसीसे भीख माँगी है। उधार तो करोड़पति तकको लेना पड़ता है।

शशि : भाभी, तूने तो बातका बतंगड़ बना दिया। ले भेज, कहाँ है शरत् ? आटा ले आयेगा।

शारदा : नहीं शशि, अब मैं कभी तेरी देहलीपर चढ़ूँ तो मुझ-सा बुरा कोई नहीं। मुझे अब तेरा आटा नहीं चाहिए। कुछ नहीं चाहिए [कण्ठ भीगता है] तुझे अपना समझती थी, तभी तेरे पास आ जाती थी। नहीं तो और बहुत-से घर हैं। घर-गिरस्तीमें लेना-देना चलता ही रहता है।

शशि : मैं कब कहती हूँ कि लेना-देना नहीं चलता ? मैं कब कहती हूँ कि तू मुझे अपना नहीं समझती ? समझती है, तभी तो इतनी बात कह दी। पर तेरी तो माया ही निराली है ! हर समय खीझो रहती है। तेरे भलेके लिए करो....

शारदा : [एकदम] मेरे भलेके लिए ! शशि, तू कहना चाहती है कि तूने मेरे भलेके लिए इनका अपमान किया है ? तू इन्हें समझती क्या है ? दुनिया इनसे सलाह माँगती है, इनकी ओर देखती है। दिन-भर भीड़ लगी रहती है। अब भी दस लोग बैठे हैं....

[बैठकमें कोलाहल उठता है—पास आता है]

शैलेन्द्र : [गम्भीर स्वर] सो भाई, मूल बात अकिंचन बननेकी है। शेष राजनीति ऊपरी है। भोजन उसे जड़से मिलता है। जड़में अकिंचनता है तो राजनीति मनुष्यकी दासी है। वैसे आज तो वह उसकी गरदनपर सवार है।

मित्र : [तीव्र होकर] यह सब शब्दोंका मायाजाल है, धोखा है। अकिंचनताका अर्थ है अपनेको नष्ट करना। मैं पूछता हूँ कि क्या नष्ट हो जानेमें ही कल्याण है ?

शैलेन्द्र : मेरी नीतिमें नष्ट होनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता, पर जो दूसरोंको नष्ट करनेका दावा करते हैं वे सबसे पहले अपना नाश करते हैं।

मित्र : आप शायद निर्माण करते हैं।

शैलेन्द्र : निस्सन्देह। लेकिन क्षण-भरके लिए मैं आपकी बात मान लेता हूँ कि अकिंचन बननेमें हमारा नाश हो जाता है। मैं पूछता हूँ, इससे संसारका क्या बिगड़ता है। और बिगड़ भी जाये, कोई इस रास्ते आकर देखे तो सही। लोग तो

पहले ही काल्पनिक भयके कारण जान दिये दे रहे हैं। मेरे भाई, भय मनुष्यका सबसे बड़ा शत्रु है। आजकी यह सारी शक्ति इसी काल्पनिक भयकी नींवपर खड़ी है। [ये शब्द दूर जाते हैं। शारदाका उच्छ्वसित स्वर उठता है]।

शारदा : भय ! हाँ, सब एक-दूसरेसे भय खाते हैं। इसीलिए एक-दूसरेसे घृणा और द्वेष करते हैं। इसीलिए एक दूसरेके शत्रु हैं। कितनी ठीक बात कही उन्होंने, कितनी ठीक ! इसका कोई क्या जवाब दे सकता है ? मैं कहती हूँ, शशि, इनके सामने आकर सब चुप हो जाते हैं।''''अरे, शशि तो चली गयी !

शरत् : [दूरसे आता स्वर] अम्मा, तुम यहाँ खड़ी हो ? उधर चूल्हेमें आग जल रही है। आओ न, आओ न।

शारदा : [एकदम जाती हुई] ओह ! मैं तो भूल ही गयी थी कि मुझे रोटी पकानी है। कौन जाने, इन्हींमें कोई खाने-वाला हो, और वे अभी कहला भेजें। कोई भरोसा थोड़े ही है उनका [शरत्से] शरत् बेटा, मैं आटा लाती हूँ, तू···

शरत् : आटा तो शशि चाची रख गयी।

शारदा : [काँपकर] रख गयी ?

शरत् : हाँ।

शारदा : ओह, शशि भी बस···[गहरा निःश्वास] शरत्, तू बैठकमें जाकर पूछ कि खानेवाले आ गये क्या ?

शरत् : अभी जाता हूँ, अम्मा !

शारदा : और देख धीरेसे पूछना।

शरत् : अच्छा, अम्मा !

शारदा : [स्वगत उच्छ्वसित स्वर] कितना समझदार लड़का है। इतनी उमरमें दूसरे बच्चोंको मुँह धोने तकका शऊर नहीं होता। पर इसे कितना ध्यान रहता है मेरा ! मेरी उँगली-की फुन्सीसे कितना दुःखी है ! मुझे बरतन माँजते देखकर इसने कितने प्रेमसे कहा था...

[संगीतके साथ पिछला दृश्य मस्तिष्कपर उभर आता है]।

शरत् : अम्मा !

शारदा : हाँ !

शरत् : तुम बरतन न माँजो !

शारदा : मैं बरतन् न माँजू ? क्यों, और कौन माँजेगा ?

शरत् : हम माँजेंगे।

शारदा : [चकित] तू ?

शरत् : हाँ, तुम्हारे हाथमें फुन्सी निकल रही है, दुखेगी।

[पिछला दृश्य मिटता है। शारदा फिर वर्तमानमें लौटती है।]

शारदा : और एक वे हैं ! माना, वे विद्वान् हैं, दुनिया उन्हें पूजती है। पर वे किसीका ख़याल क्यों नहीं रखते ? इतनी सुन्दर बातें करते हैं, इतना सुन्दर लिखते हैं, पर वे यह क्यों नहीं सोचते कि दूसरे भी मनुष्य हैं ? कई दिनसे मेरी उँगलीमें पीड़ा है, पर उन्हें इस बातकी चिन्ता नहीं कि काम कैसे होगा ? कौन करेगा ? [गहरा निःश्वास] पिछले मास मैं तेज़ बुखारमें तड़पती रही, पर उन्होंने दवा लाकर नहीं दी। दो मिनिटसे अधिक पास नहीं बैठे। आये, हँसे और चले गये। यह तो श्रीधर था। बिचारेने दिन देखा,

न रात; पट्टोसे लगकर मेरी सेवा को। इनके भरोसे तो मैं मर जाती! मर जाती, उन्हें क्या; और किसीसे शादी कर लेते।

शरत् : [दूरसे] अम्मा !

शारदा : [काँपकर] क्या है ?

शरत् : अम्मा, पिताजी कहते हैं कि खाना पाँच आदमियोंके लिए बनाना।

शारदा : [स्तम्भित] पाँच आदमियोंके लिए !

शरत् : हाँ, अम्मा !

शारदा : [एकदम उबलकर] कह दे जाकर कि यहाँ होटल नहीं खुला है, और न कोई सदाबर्त लगा है ! क्या समझ लिया है मुझे ? कह दिया, पाँच आदमियोंके लिए खाना बनाना है, जैसे घरमें कामधेनु बँधी हुई है ! वाह जी, वाह ! कुछ करना, न धरना। दिनभर तख्तपर पड़े हुए हुक्म चलाते रहते हैं। करना पड़े तो पता लगे ! भला कोई बात है ! पाँच आदमियोंको क्या अपना सिर खिलाऊँगी ? ज़रा बुलाकर तो ला।

शरत् : अम्मा, वहाँ तो बहुत-से आदमी बैठे हैं।

शारदा : तू जायेगा भी, या यहीं खड़ा-खड़ा ज़बान चलाये जायेगा ? आख़िर है तो उसी बापका बेटा !

शरत् : [रुआँसा] अम्मा....

शारदा : न जा ! मैं कुछ नहीं करती। कुछ नहीं करूँगी। एक दिनकी बात हो तो भुगती जाये, पर यह तो रोज़-रोज़की दाँता-किलकिल है। जो यहाँ आयेगा, वह कुछ-न-कुछ खाकर जायेगा, पर वह खाना कहाँसे आयेगा ? इसकी

चिन्ता नहीं है। [तेज़ीसे बोलती और काम करती रहती है]। मैं देखूँगी कि आज क्या होता है। आज फ़ैसला न किया तो मेरा नाम शारदा नहीं। न जाने, पिछले जन्ममें कौनसे पाप किये थे, जो ऐसे निकम्मेके पल्ले बँधी, पर···पर मैं क्या अपंग-अपाहिज हूँ ? दस काम कर सकती हूँ। पढ़ा सकती हूँ और····तब क्या-क्या सोचा था, क्या हो गया···

[किसीके आनेकी आहट]

श्रीधर : भाभी, नमस्ते !

शारदा : कौन ? ओहो, श्रीधर ! नमस्ते !

श्रीधर : भोजन बन रहा है। बैठकमें भी बड़ी भीड़ है। जान पड़ता है कि आज फिर दावत है।

शारदा : [उबलकर] यहाँ तो रोज़ दावत होती है ! वही बात है कि घरमें नहीं दाने, अम्मा चली भुनाने। भीड़ कब नहीं लगती ? और लगेगी तो खायेगी ही। हुक्म आया है कि पाँच आदमियोंके लिए खाना तैयार करो। अब तुम बताओ कि मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूँ ? इन्होंने तो मेरा जीना दूभर कर दिया।

श्रीधर : हूँ, तो आज पाँच आदमी खाना खायेंगे।

शारदा : आज क्या, अभी। अभी कहला भेजा है।

श्रीधर : पहले नहीं कहा था ?

शारदा : पहले तो एकका कहा था और घरमें एकके लिए भी बन्दोबस्त नहीं। हो कहाँसे ! कोई हिले तब तो ?

श्रीधर : [चकित-स्वर] ना बाबा ! यह तो अत्याचार है। कोई बात है, किसी भली औरतको इस प्रकार सताना ! भाभी

सच कहता हूँ, तुम हो, नहीं तो इस घरमें कोई टिक सकता है ? घरमे दाने नहीं, लानेकी हिम्मत नहीं, दिल इतना बड़ा कि दावत देंगे शहर-भरको ! खून किसीका बहे, शहीद कोई बने !

शारदा : तू ही देख ले ।

श्रीधर : इसका तो कुछ प्रबन्ध करना होगा भाभी !

शारदा : प्रबन्ध कुछ हो सके तो रोना ही क्या है ?

श्रीधर : वह तो सीधी-सी बात है । मैं बताता हूँ ।

शारदा : क्या ?

श्रीधर : तुम आज खाना न बनाओ । देखते हैं, क्या होता है ? आखिर एक दिन इस बातका फ़ैसला तो होना ही है ।

शारदा : होना तो है ।

श्रीधर : तो बस आज होने दो । सबसे अच्छा तो यह है कि तुम ग़ायब हो जाओ ।

शारदा : क्या ?

श्रीधर : मैं सच कहता हूँ कि तुम ग़ायब हो जाओ ।

शारदा : [स्फुट स्वर] मैं ग़ायब हो जाऊँ ? ग़ायब····

श्रीधर : हाँ, इससे अच्छा और कोई उपाय नहीं है । जब तुम चली जाओगी तब उन्हें आटे-दालका भाव मालूम होगा । पता लग जायेगा कि साहित्य क्या होता है, उसकी सृष्टि कैसे होती है ?

शारदा : [जैसे खो जाती है] क्या कह रहा है, श्रीधर ?

श्रीधर : वही जो ठीक है ।

शारदा : [फुसफुसाहट] 'वही जो ठीक है' ?····मेरा ग़ायब होना ठीक है ? [एक दम पुकारकर] शरत्, शरत् !

शरत् : [पास आता हुआ] आया अम्मा ! [आकर] क्या है अम्मा ?

शारदा : आलमारीमें मेरी सन्दूक़ची है न ? उसके नीचेके ख़ानेमें एक रूमाल है । उसमें तीन रुपये बँधे हैं । वे ले आ ।

शरत् : लाता हूँ, अम्मा ! [जाता है]

श्रीधर : रुपयोंकी तुम क्यों चिन्ता करती हो ? मेरे साथ चलो ।

शारदा : श्रीधर, तुम्हारी बात मैंने सुन ली है । सोचूँगी, आज फ़ैसला करके रहूँगी, पर····

श्रीधर : पर क्या ?

शारदा : पर जो खाना खाने आये हैं, उन्हें खाना तो खिलाना ही होगा । यह उनकी और मेरी बात नहीं है, घरकी बात है ।

शरत् : [आकर] लो अम्मा, ये रहे रुपये ।

शारदा : लाओ, बेटा [मुड़कर] श्रीधर, तुम्हें कष्ट तो होगा, भइया ! पर ज़रा बाज़ार चले जाओ । पासमें ही चाटवाले-की दूकान है । एक रुपयेकी चाट शरत्को ले देना । हल-वाईकी दूकानपर शायद दूध भी मिल जाये । गरम, ठण्डा, कैसा भी हो, डेढ़ सेर ले लेना । सावकके चावल पड़े हैं, खीर बना दूँगी, और हाँ····

श्रीधर : [चकित] भाभी !

शारदा : एक दर्जन पके केले भी लिवा देना । तुम्हीं दे जाना । तुम्हें कष्ट तो होगा ही । उनका क्या है, दस दिन खाना न मिले । पर जो लोग आशा लगाकर बैठे हैं, वे क्या कहेंगे ।

श्रीधर : [और भी चकित] पर भाभी !····

शारदा : जल्दी कर भाई, देर हो जायेगी ।

श्रीधर : [चौंककर] जाता हूँ, अभी जाता हूँ।

शारदा : अरे, बरतन तो लेता जा।

श्रीधर : [मुड़कर] लाओ, पर भाभी…[झिझकता है]

शारदा : क्या है ?

श्रीधर : भाभी, आज जो कुछ भी हो। आगे ऐसे नहीं चलेगा। तुम्हें सोचना चाहिए।

शारदा : जरूर सोचूँगी। पर अब तू जा।

[अन्तर-सूचक संगीत]

शारदा : [फुसफुसाती है] 'आज जो कुछ भी हो। आगे ऐसे नहीं चलेगा। तुम्हें सोचना चाहिए'…मुझे सोचना चाहिए ? आगे ऐसे नहीं चलेगा ?….नहीं चलेगा…हाँ, नहीं चलेगा [सहसा गिलास गिरता है]। कौन शरत् ? कहाँ जाता है, खाता क्यों नहीं ?

शरत् : अम्मा, खाया नहीं जाता।

शारदा : खाया नहीं जाता ? शरत्, तेरी तो कोई बात मेरी समझमें नहीं आती। बाप ही बहुत हैं झिकानेको ! तू भी उसी रास्ते चलने लगा है। नहीं खाया जाता ! पहले ही बहुत मिलता है, जो लिये बैठा रहता है ! कबतक तेरे लिए रुकी रहूँगी ? चल, बैठ ! खबरदार जो कुछ छोड़ा।

शरत् : [रोता हुआ, क्रोधसे] अम्मा, तुमने अपने लिये तो कुछ रखा ही नहीं। सब हमें ही दे दिया है।

शारदा : मैं कहती हूँ, तू खाता है या बहस करता है ? बड़ा आया चिन्ता करनेवाला ! सब हमें दे दिया ! सूरत तो देखे कोई—सींक-सलाई हो रहा है ! नहीं तो तेरी उमरके बच्चे कोई देखे तो देखता रह जाये। जल्दी कर ! मैं

इतनेमें अन्दर ठीक कर लूँ। जितना खाया जाये, खा ले। बाक़ी शामके लिए रख दे।

[शारदा जाती है : शैलेन्द्र आता है]

शैलेन्द्र : शरत् !

शरत् : जी, पिताजी !

शैलेन्द्र : खाना खा रहा है ? अच्छा लगा न ?

शरत् : बहुत अच्छा है पिताजी; पर खाया नहीं जाता। अम्माने सब कुछ हमें ही दे दिया।

शैलेन्द्र : सब कुछ तुम्हें ही दे दिया ?

शरत् : हाँ, पिताजी ! अपने लिए कुछ नहीं रखा।

शैलेन्द्र : कुछ नहीं ?

शरत् : नहीं।

शैलेन्द्र : क्यों ?

शरत् : पता नहीं।

शैलेन्द्र : खैर, कुछ बात होगी। पेटमें दर्द होगा। तुम खाओ। न खाया जाये तो रख दो। हाँ, तुम्हारी अम्मा है कहाँ ?

शरत् : अन्दर काम कर रही है।

शैलेन्द्र : [पुकारता हुआ जाता है] शारदा !

शारदा : [मौन]

शैलेन्द्र : [पास जाकर] शारदा !

शारदा : [उखड़े स्वरमें] हाँ।

शैलेन्द्र : सुनो, शारदा !

शारदा : [कर्कश स्वर] क्या कहना है ? कहो !

शैलेन्द्र : तुमने कुछ नहीं खाया ?

शारदा : तुम्हें क्या मतलब ?

शैलेन्द्र : मतलब तो कुछ नहीं है।

शारदा : तो जाइए, यहाँ पूछने क्यों आये हैं ?

शैलेन्द्र : वैसे ही चला आया।

शारदा : [उबलकर] वैसे ही चला आया ! 'वैसे ही' क्या होता है ? कोई देखे तो समझे, जैसे बड़ा ध्यान रखनेवाले हैं। मैं कहती हूँ, कान खोलकर सुन लो। मैं अब इन दिखावटी बातोंमें आनेवाली नहीं हूँ। मैंने तय कर लिया है···

शैलेन्द्र : क्या तय कर लिया है ? मैं भी तो सुनूँ।

शारदा : तुम्हें सुननेकी क्या ज़रूरत है ? तुम अपना काम करो। मुझे जो कुछ करना होगा, कर लूँगी। आजतक तुमने क्या सुना है, जो अब सुनोगे ?

शैलेन्द्र : शारदा, तुम्हें क्या हो गया है ? पहले तो ऐसी नहीं थी। बात-बातपर तेज हो जाती हो और भई, वे लोग आ गये तो क्या करूँ ? तुम्हीं बताओ, मना कर देता ? सब अपने-अपने भाग्यका खाते हैं। दाने-दानेपर मोहर है। और सच कहता हूँ, शारदा, आज तो खाना इतना स्वादिष्ट बना था कि वे सब तुम्हारी तारीफ़ करते नहीं अघाते थे।

शारदा : मुझे नहीं चाहिए किसीकी तारीफ़ ! उसे आप गठरीमें बाँधकर अपने सिरपर रख लीजिए ! ओढ़िए, बिछाइए, पर मुझे तंग मत कीजिए ! मैं जा रही हूँ।

शैलेन्द्र : जानेको मैं नहीं रोक सकता, पर एक बात निश्चित है कि तुम्हारे बिना मुझे तारीफ़ मिलनेवाली नहीं है।

शारदा : [क्रोध] मैंने कह दिया न कि मेरा इन बातोंसे कोई मतलब नहीं। क्यों मुझे जलाने आ गये हो ? मैं अब नहीं रहूँगी, नहीं रहूँगी ! मेरा-तुम्हारा निबाह नहीं हो सकेगा।

शैलेन्द्र : निबाह तो हो रहा है; पर जा कहाँ रही हो ?

शारदा : कहीं भी जाऊँ।

शैलेन्द्र : पर मैं जानूँ तो सही।

शारदा : फिर वे ही दिखावटी बातें ! तुम चले जाओ, नहीं तो मैं अभी कूद पड़ूँगी !

शैलेन्द्र : [कुछ क्रुद्ध] कूद पड़ोगी तो कूद पड़ो। तुम तो हमेशा ही ऐसी धमकियाँ देती रहती हो।

शारदा : क्या कहा ? मैं धमकियाँ देती हूँ ? अच्छी बात है ! देख लेना, इस क्षणके बाद इस घरका एक बूँद पानी भी पिऊँ तो शारदा न कहना !

शैलेन्द्र : तुम्हारे जो जीमें आये, करो। मैं तो चला।
[जाता है]

शारदा : तुम क्या चले, चल तो मैं रही हूँ ! आज मैं इस घरमें किसी शर्तपर नहीं रह सकती। चाहे मुझे सड़कपर पड़ना पड़े, पर यहाँ नहीं रहूँगी। मुझे न जाने क्या समझ लिया गया है ! नौकरानी भी अच्छी होती है···

शरत् : [दूरसे] अम्मा, हम नीचे जा रहे हैं।

शारदा : [न सुनती हुई] श्रीधर ठीक कहता था। आगे ऐसे नहीं चलेगा। मुझे सोचना चाहिए।

शरत् : [पास आकर] जायें अम्मा ?

शारदा : [क्रोधसे] कहाँ जाता है ?

शरत् : नीचे अम्मा, खेलने।

शारदा : नीचे ! जब देखो, तब नीचे ! तूने अलग जान खा ली, आखिर····

शरत् : अम्मा, न जायें····

शारदा : [सँभल कर] जा बाबा ! मैं कब मना करती हूँ ? जा,

जल्दी आ जाना !

शरत् : अच्छा, अम्मा ! जल्दी आऊँगा ।

[शरत् भाग जाता है । क्षणिक शान्ति]

शारदा : [गहरी साँस] क्यासे क्या हो गया ! क्या सोचा था ! उन दिनों मैं इनकी कलापर मुग्ध थी । इनकी लेखनीने मेरे दिलको पकड़ लिया था । दिन-रात सपने देखती थी । दोनों मिलकर कलाकी सेवा करेंगे । दोनों मिलकर संसारका भ्रमण करेंगे । पर…पर वे स्वप्न तो स्वप्न ही रह गये । इन्होंने मेरी और मेरी भावनाओंकी ओर देखा तक नहीं । मेरे अरमानोंकी चिन्ता तक नहीं की ।

[संगीतके साथ फ़्लैश-बैक]

शशि : ओहो, भाभी ! ख़ूब सजी बैठी हो ! भई, सचमुझ सुन्दर लगती हो ।

शारदा : सच ?

शशि : घरमें दर्पण तो होगा रानी, देख लो न ।

शारदा : दर्पणमें तो अपनी आँखें देखती हैं, शशि ! उनकी रायका क्या मूल्य ?

शशि : तो भाई साहबसे पूछा होता !

शारदा : उनकी आँखें तो बिक गयीं ।

शशि : बिक गयीं ? क्या मतलब ?

शारदा : मतलब भी समझाना पड़ेगा शशि ? कबसे राह देख रही हूँ । पाँच बजे आनेको कह गये थे, और अब साढ़े सात बजे हैं, हर बार यही होता है । हर बार वे कहीं रुक जाते हैं । आकर कहते हैं, 'अरे भूल गया ! क्या करूँ, मित्र मिल गये थे' घर रहते हैं तो…

[संगीत उभरता है]

शैलेन्द्र : शारदा ! ओह, बस अब किताब खत्म होनेवाली है। अभी चलता हूँ।

शारदा : अब····अब तो आठ बज गये···

शैलेन्द्र : आठ ! अब तो कहीं नहीं जा सकेंगे। अच्छा, फिर किसी दिन चलेंगे। साड़ी कहीं उड़ी थोड़े जाती है। अब तो तुम चाय बना लो। शायद एक दो मित्र आ जायें। कुछ खानेको भी चाहिए।

शारदा : घरमें न चाय है, और न····

शैलेन्द्र : अरे, बाज़ारमें तो है, ले आओ।

शारदा : पर····

शैलेन्द्र : शारदा, मैं ले आता, पर लेख पूरा होनेवाला है। और मैं उठा तो बस विचारोंका क्रम टूट जायेगा। [मुसकराकर] वैसे तुम कहो तो छोड़ दूँ।

शारदा : [एकदम] नहीं, नहीं ! आप लिखिए। मैं जाती हूँ।
[संगीत समाप्त। वर्तमान काल]

शारदा : [उच्छ्वास] और इस तरह धीरे-धीरे मेरी इच्छाएँ बुझ गयीं। मैं एक भार ढोनेवाली मुर्दा मशीनकी तरह बन गयी, पर कभी वे दिन भी थे जब मैं सदा उन्हें आँखोंमें बसाये रखती थी। काश कि मैं उन क्षणोंको फिर पा सकूँ ! काश कि मैं उनकी तसवीरको फिर ललचायी आँखोंसे देख सकूँ !

[मादक संगीत उभरता है। फ्लैश-बैक]

सखी : शारदा, ओ शारदा ! क्या कर रही है, लाड़ो ? ···ओहो, पढ़ रही है ! देखूँ तो, क्या है।

शारदा : ऊँ हूँ ! रहने दो।

सखी : रहने कैसे दूँ ? पहले मुझे दिखा क्या है ? ओहो, यह तो तसवीर है ! ऐं री, किसकी तसवीर है ?

शारदा : तेरे सिरकी ।

सखी : मेरे सिरको लेकर तू क्या करेगी ? वह तो बिक गया। तू बता, तू अपना सिर कहाँ बेचनेका इरादा रखती है ?

शारदा : भाड़में !

सखी : [हँसकर] भाड़में ! हाय रे, इतना तेज़ बुखार चढ़ा है मेरी लाड़लीको ! देखूँ नब्ज़ । ओहो, तापमान ११० से ऊपर जा रहा है, पर···पर कोई डर नहीं, यह प्रेमका ताप है। जितना बढ़ता है, सौन्दर्य उतना ही निखरता है, कविता उतनी ही प्रखर होती है, उन्माद उतना ही मादक होता है। चित्रोंमें रुचि बढ़ती है, कहानियोंके दो अक्षर पढ़कर उन्हें छातीसे लगाकर, नाना-रूप स्वप्नोंमें विचरने-को मन करता है और···

शारदा : मैं कहती हूँ, मैं तुझे मार दूँगी····

सखी : और किसीको मारनेको जी करता है ।

शारदा : चली जा मेरे सामनेसे, नहीं तो····

सखी : और एकान्त प्रिय होता है····

शारदा : उफ़···उफ़····

सखी : और जब तापकी अग्नि असह्य हो उठती है तो बेचारी पिंजरेकी पंछीकी तरह 'उफ़-उफ़' पुकारती है। [हँस पड़ती है]

शारदा : [चिढ़कर] ही···ही···ही···लाड़ोका विवाह हो गया है तो किसीको कुछ समझती ही नहीं। हमेशा नशेमें चूर रहती है !

सखी : नशा ? हाँ, शारदा वह नशा ही है। मैं उसी नशेमें चूर हूँ और····

शारदा : [मौन]

सखी : पूछती नहीं, 'और' क्या ?

शारदा : नशेबाज़ोंसे बातें करना हमें अच्छा नहीं लगता।

सखी : पर नशेबाज़ोंको बातें करना ही अच्छा लगता है। यही नहीं जिनको अभी वह नशा नहीं चढ़ा है, उनको भी वह नशा चढ़ानेको वे आतुर रहते हैं। सो शारदा, इधर देख।

शारदा : क्या ?

सखी : यह चित्र····देख गठीला बदन, गुलाबी वर्ण, विशाल वक्ष-स्थल, आजानु बाहु, मदिर नयन, इन्हीं नयनोंसे बहती मदिरा पीकर····

शारदा : परे हट, क्या अंटसंट बक रही है !

सखी : पहली प्रतिक्रिया इसी प्रकार होती है, शारदा ! पर तू सुन तो ले। इसका नाम है श्रीधर। दिल्लीके प्रसिद्ध सुधारक घरानेका सुशिक्षित युवक है। एम० ए० पास है····अरे यह क्या, तू सुनती क्यों नहीं ?

शारदा : सब सुन चुकी हूँ।

सखी : तो ?

शारदा : [चुप है]

सखी : फिर वही मौन ? तू उधर क्या देख रही है ? पढ़ फिर लेना····ओः यह क्या ? देखूँ····

शारदा : न···न····

सखी : न····न····की रानी। देख तो लेने दे ! [पढ़ती है] 'रातकी रानी' लेखक, शैलेन्द्र। और यह चित्र किसका है ? ओह, श्री शैलेन्द्रका है ?····तो यह बात है ! सिर

नीचा क्यों कर लिया ? शारदा, शारदा मुझसे भी परदा !

शारदा : नहीं ।

सखी : तो क्या ?

शारदा : [मौन]

सखी : समझी, तो यह बात है ! तूने देखा है····

शारदा : [मौन]

सखी : अब तोड़ दे मौनको ! मुझे ग़लत न समझ । तूने देखा है ?

शारदा : हाँ ।

सखी : कहाँ ?

शारदा : साहित्य-परिषद्की गोष्ठियोंमें ।

सखी : गोष्ठियोंमें ? यानी एकसे अधिक बार, यानी अनेक बार ! कभी बात भी की है ?

शारदा : हाँ ।

सखी : जानती है, वह भिखारी है, अकेला है ?

शारदा : होंगे । मैं तो इतना ही जानती हूँ कि दुनिया उनको घेरे रहती है, उनकी पूजा करती है ।

सखी : समझी, पुजारिनका दिल बिक चुका है ।

शारदा : [मौन]

सखी : पर, शारदा ! तूने बुरी जगह सौदा किया । बुआको मनाना टेढ़ी खीर है, लेकिन मनाना होगा !

शारदा : [भावुकतासे] सखी, मेरी सखी !

सखी : पर अभी समय है । तू भी सोच-समझ ले । कहानियाँ लिखनेवाले स्वप्नदर्शी होते हैं, और स्वप्नदर्शियोंसे प्रेम हो सकता है, पर निबाह होना कठिन है ।

[संगीत उठता है । शारदा वर्तमानमें लौटती है ।]

शारदा : [गहरा निःश्वास] उसने कितना ठीक कहा था ! कितना ठीक ! स्वप्नदर्शियोंसे प्रेम हो सकता है, पर निबाह होना कठिन है··· निबाह होना कठिन है····कठिन है···हाँ, कठिन है ! बहुत कठिन है !···असम्भव है ! स्वप्नदर्शीको पत्नीकी नहीं, पुजारिनकी ज़रूरत है। उस पुजारिनकी, जो माँका हृदय रखती है, जो अपनेको मिटाना चाहती है, जिसके अरमान पूरे हो चुके हैं, जिसकी लालसाएँ तृप्त हो चुकी हैं। पर मैं···मैं····तो अभी प्यासी हूँ। वे भी तो अपना स्वार्थ पूरा करना जानते हैं। फिर वे दूसरोंके स्वार्थकी चिन्ता क्यों नहीं करते ? क्यों वे एक बार भी मेरे लिए कुछ लेकर नहीं आये ? क्यों उन्होंने नहीं सोचा कि मैं भी कुछ चाहती हूँ····

[शरत् पुकारता हुआ आता है]

शरत् : अम्मा, अम्मा, तुम कहाँ हो ?

शारदा : [सँभल कर] यह रही, यह रही, शरत्। क्या बात है ?

शरत् : [पास आकर] अम्मा, अम्मा ! तुम कपड़े क्यों बाँध रही हो ? कहीं जा रही हो क्या ?

शारदा : कहीं नहीं, मैं कहीं नहीं जा रही। कपड़े ठीक कर रही थी, बेटा ! तू क्या करता फिर रहा है ?

शरत् : कुछ नहीं, अम्मा ! नीचे खेल रहे थे। लाओ, मैं भी कपड़े ठीक करता हूँ। तुम्हारी उँगली दुख रही है। तुम अकेले कैसे करोगी ? क्यों अम्मा, डॉक्टर उँगली काटेगा ?

शारदा : नहीं रे ! वह तो फुन्सी चीरकर उसकी गन्दगी निकालेगा।

शरत् : फिर ?

शारदा : फिर मेरी उँगली ठीक हो जायेगी।

शरत् : अच्छा। [क्षणिक मौन] अम्मा !

शारदा : हाँ।

शरत् : वे अन्दर क्यों नहीं आतीं ?

शारदा : वे···वे कौन ?

शरत् : वे ही जो पिताजीके पास बैठी हैं।

शारदा : पिताजीके पास !···कौन बैठी हैं ?

शरत् : वे ही, जो उलटी साड़ी पहनती हैं। सफ़ेद जूतेवाली, सिर पर कुछ नहीं ओढ़तीं। कई दिनसे रोज़ ही आती हैं।

शारदा : ओहो, वे छोटी-सी, चुलबुली-सी, चश्मा लगाती हैं ?

शरत् : हाँ, मुझे बड़ा प्यार करती हैं। पिताजीसे बहुत बातें करती हैं। पर तुमसे क्यों नहीं करतीं ?

शारदा : मुझसे ?····ओह ! हाँ, वे कहानी लिखना सीखती हैं, बेटा ! तेरे पिताजी कहानी लिखना जानते हैं, मैं नहीं जानती। इसलिए मेरे पास नहीं आतीं।

शरत् : अच्छा, यह बात है ! पर, अम्मा, तुमसे तो वे कभी भी बात नहीं करतीं। अन्दर आती ही नहीं।

शारदा : नहीं आतीं तो न सही। हाँ, तू ज़रा मनोरमा चाचीके पास तो चला जा। उसका अटेरन माँग ला। जो सूत पड़ा है, अटेरकर तेरे लिए कुरतोंकी खादी बुनवानी है। जा, जल्दी जा।

शरत् : अभी जाता हूँ [जाता है]

शारदा : [कटुतासे] तो शीलाजी फिर आयी हैं। जान पड़ता है, बात आगे बढ़ गयी है। मेरी ओर उन्हें दृष्टि डालनेकी फ़ुरसत नहीं। घरका काम करना सूलीपर चढ़ने-जैसा लगता है। पर उससे घुट-घुटकर घण्टों बातें

होती हैं। रोमान्स लड़ाया जाता है। रंगीन सपने देखे जाते हैं। हूँ…तभी आजकल उखड़े-उखड़े-से रहते हैं। पर मैं भी आसानीसे छोड़नेवाली नहीं हूँ। ऐसा बदला लूँगी कि याद रखेंगे। दुनिया-भरमें बदनाम न किया, तो मुझे शारदा न कहना। दूसरेका घर उजाड़ना हँसी-खेल नहीं है। और न किसी विवाहिताको आसानीसे धोखा दिया जा सकता है। मैं आज ही जाऊँगी, आज ही। वह तो शरत्‌के कारण रुकी थी, नहीं तो कभी की चली जाती। शरत् मेरा है, मेरे साथ रहेगा। मैं उसे यहाँ नहीं छोड़ सकती। नहीं छोड़ सकती। [क्षणिक मौन, जिसमें सामान उठानेका स्वर] न जाने क्या बातें कर रहे हैं। चलूँ, दो बातें मैं भी कर लूँ। और जान लूँ कि आखिर वे क्या सोचते हैं, कहाँ जाना चाहते हैं? फिर पूँछूँगा….[फुसफुसाहटके स्वर पास आते हैं] हूँ, तो घुट-घुटकर बातें हो रही हैं! सुनूँ तो….

[चलती रहती है। शैलेन्द्र और शीलाके स्वर पास आते हैं।]

शैलेन्द्र : तो बात यहाँ तक पहुँच गयी है?

शीला : जी। ऐसी हालतमें, मैं आपसे पूछती हूँ, क्या मुझे अपने पतिके पास रहना चाहिए?

शैलेन्द्र : आपको उनके पास रहना चाहिए, या नहीं रहना चाहिए, यह तो आपके निश्चय करनेकी बात है। मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं है।

शीला : पर आप सलाह तो दे सकते हैं?

शैलेन्द्र : मुझे किसीको सलाह देनेका अधिकार नहीं है।

शीला : मार्ग सुझानेका भी नहीं ?

शैलेन्द्र : नहीं शीलाजी ! इस बारेमें मुझे कोई अधिकार नहीं है। यह तो केवल आपके निश्चय करनेकी बात है। इसका प्रभाव आपपर पड़ेगा, मुझपर नहीं।

शीला : [एकदम] पर····शैलेन !

शैलेन्द्र : जी,

शीला : [सँभलकर] कुछ नहीं, कुछ नहीं, [सन्नाटा] यदि मुझे ही निश्चय करना है तो मैंने निश्चय कर लिया है।

शैलेन्द्र : कर लिया, तो ठीक है।

शीला : पर क्या आप उसे जानना नहीं चाहेंगे ?

शैलेन्द्र : आवश्यकता तो नहीं है, पर चाहो तो सुन सकता हूँ।

शीला : [झिझकती हुई] मैं अब उनके साथ नहीं रहूँगी।

शैलेन्द्र : हूँ···

शीला : मैं कल ही वहाँसे चली आऊँगी।

शैलेन्द्र : कहाँ ?

शीला : आपके पास।

शैलेन्द्र : मेरे पास ?

शीला : जी हाँ।

शैलेन्द्र : मेरे पाससे आपका मतलब मेरे घरसे है न ?

शीला : मैं घर-वर कुछ नहीं जानती। मैं आपको जानती हूँ।

शैलेन्द्र : पर मैं तो कुछ नहीं हूँ, जो कुछ है, घर है।

शीला : कुछ भी हो।

शैलेन्द्र : कुछ भी कैसे ? उसमें अन्तर है। मैं कुछ नहीं हूँ, जो कुछ है, घर है। और घरसे मतलब है शारदा। सो मेरे घर आओगी, तो उससे पूछना पड़ेगा। मैं तो उससे कह

ही सकता हूँ कि जब तक तुम ठहरो, तुम्हारा प्रबन्ध कर दे। करना काम शारदाका है। मैं शारदाके बिना कुछ नहीं हूँ, शीलाजी !

शीला : क्या, क्या मतलब ? आप शारदाके बिना कुछ नहीं हैं ?

शैलेन्द्र : हाँ, वह तो स्पष्ट है।

शीला : पर, पर, जहाँतक मुझे मालूम है, आपका गृहस्थ-जीवन सुखी नहीं है; आपलोग…

शैलेन्द्र : [शीघ्रतासे] ठहरिए ! यह आपकी राय है, मेरी नहीं। मैं जो कुछ हूँ, उसीके बलपर हूँ। वस्तुतः मैं हूँ ही नहीं, वही है।

शीला : [काँपकर] लेकिन आपमें और शारदामें प्रेम नहीं है; आप लोग….

शैलेन्द्र : [शान्त स्वरसे] अपनोंसे प्रेमका प्रदर्शन नहीं किया जाता, शीलाजी ! अच्छा है, हमलोग शारदाकी बातें न करें।

शीला : ओह !

[शारदाका उच्छ्वसित होकर पागलके समान भागना। क्षण-भर बाद वह रुदन-भरे स्वरमें बोलती है।]

शारदा : ओह, ओह…यह क्या हुआ ! उन्होंने क्या कहा ! मैं शारदाके बिना कुछ नहीं हूँ। जो कुछ है शारदा है। जो कुछ है शारदा है। [धीरे-धीरे रो पड़ती है] ओह, ओह….। ओह ?….[शरत् भागकर आता है]

शरत् : अम्मा….अम्मा ! ले, अटेरन ले आया। [पास आकर] और अम्मा, डाकिया आया है। और वे तो चली गयीं। नीचे जा रही थीं। मुझसे बोलीं तक नहीं। और अम्मा, वे रो रही थीं। और अम्मा….तू भी रो रही है !

शारदा : [एक दम हसकर] नहीं, मैं नहीं रो रही। वह तो आँखमें कुछ पड़ गया था।

शैलेन्द्र : [पुकारता है] शारद ! शारदा ! [पास आकर] लो यह मनीआर्डर आया है। एक चेक भी है। दस्तखत कर दिये हैं। किसीको देकर पैसे ले आना।

शारदा : जी, अच्छा।

शैलेन्द्र : [धीरेसे] गुस्सा उतर गया दीखता है। अरे भई, हम निकम्मोंपर गुस्सा करके क्यों खून जलाया करती हो ! हम क्या ठीक होंगे। निभा लो !

[हँसता है]

शारदा : हटो, हटो, क्या अण्टसण्ट बोलते हो ! बैठकमें जाकर अपना काम करो।

[हँस पड़ती है। दोनों हँस पड़ते हैं]

१९५१]

ह्यून्त्सान चुन्त्साङ्
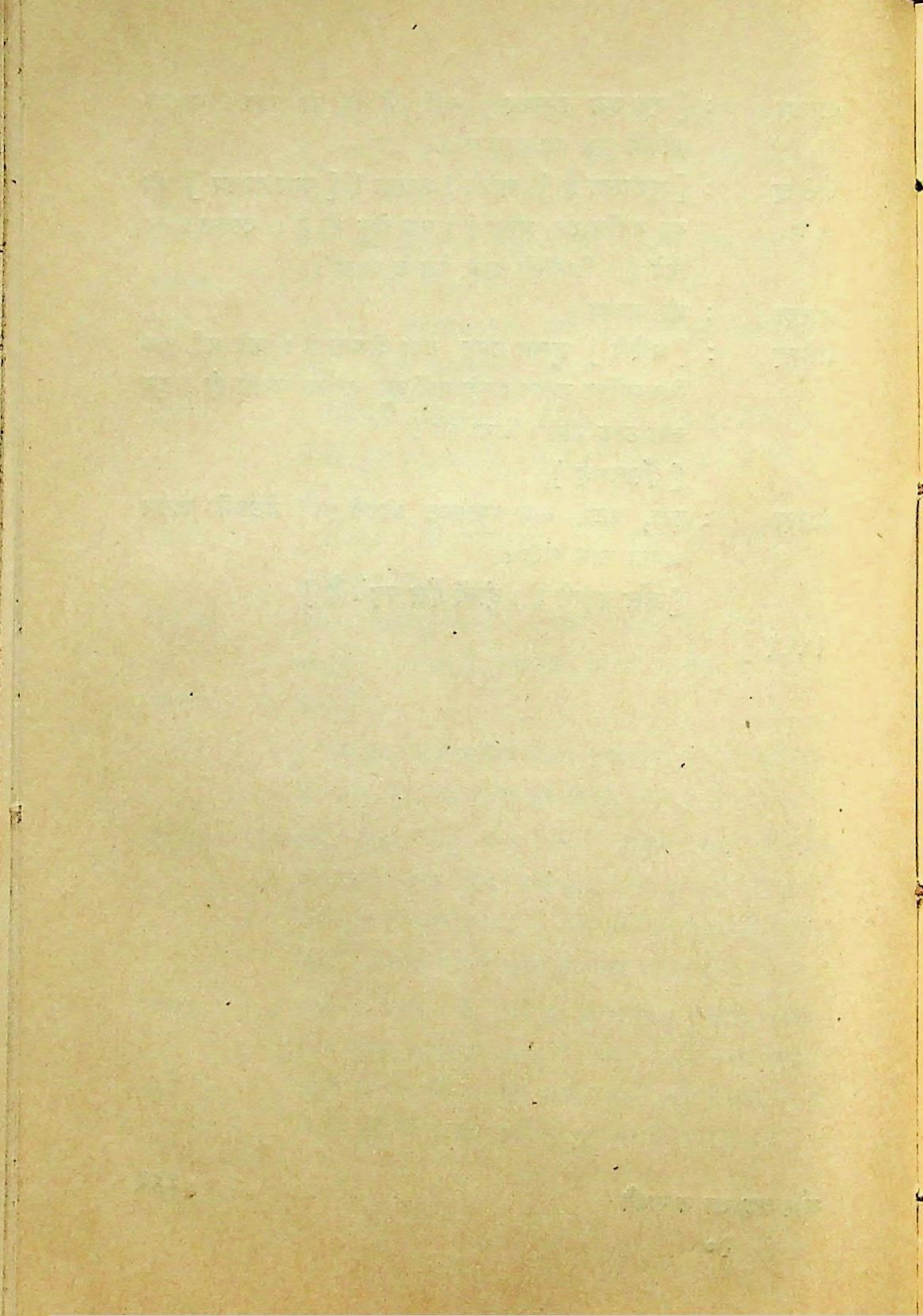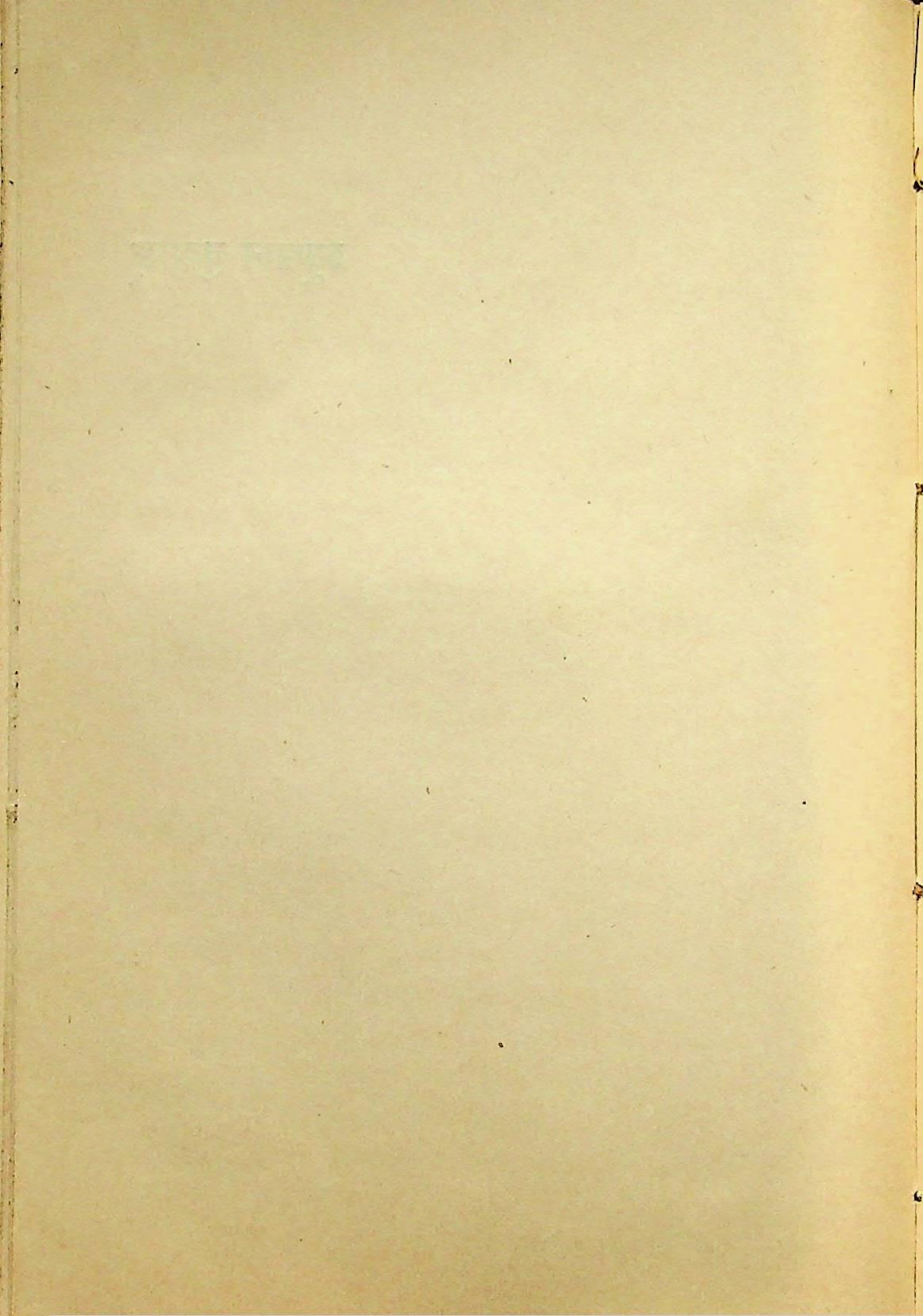
[पात्र : श्यूआन चुआङ् : प्रसिद्ध चीनी यात्री, हर्ष शिलादित्य : भारत-सम्राट्, महास्थविर शीलभद्र : नालन्दाके महास्थविर, ली चांग : चीन देशका एक प्रान्तीय शासक, डाकूसरदार, वज्र, अमात्य तथा कुछ भिक्षु । प्रारम्भिक संगीत, संघर्ष, घोड़ोंकी टाप, विलीन, रातका सन्नाटा, श्यूआन चुआङ्का धीमा स्वर उठता है ।]

श्यू० चु० : बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि ।

[कई बार बोले, किसीके आनेका स्वर, मौन ।]

ली चांग : आचार्य !

श्यू० चु० : ली चांग ! क्या बात है ? इस समय कैसे आना हुआ ?

ली चांग : आचार्य, क्षमा करें । मैं कुछ जानना चाहता हूँ ।

श्यू० चु० : क्या जानना चाहते हो ?

ली चांग : आप शायद जानते हैं कि हमारे सम्राट्ने एक आज्ञा निकाली है ।

श्यू० चु० : मैं कुछ नहीं जानता ।

ली चांग : तो अब जान लीजिए । चीन-सम्राट्की आज्ञा है कि श्यूआन चुआङ् नामक एक भिक्षु भारत देश जानेका विचार कर रहा है । सब प्रान्तोंके शासकोंको आज्ञा दी जाती है कि वे उसे रोक लें [संगीत] ।

श्यू० चु० : तो फिर····मैं इसमें क्या करूँ ?

ली चांग : मैं जानना चाहता हूँ कि क्या आप ही वह व्यक्ति हैं ?

श्यू० चु० : मैं···।

ली चांग : जी हाँ ··बोलिए [संगीत] आप मौन क्यों हैं ? आचार्य-को सत्य बोलना चाहिए। आपका शिष्य आपके यहाँसे जानेका कोई-न-कोई उपाय कर देगा।

श्यू० चु० : ली चांग, तुमने ठीक समझा। मैं ही श्यूआन चुआङ् हूँ। [संगीत]

ली चांग : [चकित] आचार्य !

श्यू० चु० : मैंने सत्य ही कहा है, ली चांग !

ली चांग : आप भारत जा रहे हैं ?

श्यू० चु० : हाँ, मैं तथागतकी जन्मभूमिके दर्शन करने जा रहा हूँ। मैं धर्मकी जिज्ञासाके कारण भारत जा रहा हूँ।

ली चांग : आचार्य, आप क्या कर रहे हैं ? वहाँका मार्ग भयानक है। यात्रा लम्बी है। रास्तेमें पानी नहीं है। चारों ओर रेत उड़ती है। भूत-प्रेत और लूसे बचना कठिन है। इसपर सम्राट् बौद्धोंका शत्रु है। आप रातको चलेंगे, डाकू पग-पगपर आपपर हमला करेंगे। आप अपने संकल्पमें सफल नहीं हो सकते।

श्यू० चु० : इन बातोंकी चिन्ता करना मेरा काम नहीं है, ली चांग !

ली चांग : तो किसका है ?

श्यू० चु० : भगवान् मैत्रेयका। अवलोकितेश्वर सब ठीक करेंगे।

ली चांग : भगवन् ! एक बार फिर सोच लीजिए।

श्यू० चु० : एक बार सोचनेके बाद ही घरसे रवाना हुआ था, ली चांग ! बार-बार क्या सोचूँ ? मैं भारत भले ही न पहुँच सकूँ, पर लौटूँगा नहीं। प्राण दे दूँगा।

ली चांग : आचार्य····आचार्य ! मैं आपको प्रणाम करता हूँ। आपका

संकल्प सचमुच दृढ़ है। आपके लिए मैं इस आज्ञापत्रको फाड़ता हूँ [फाड़ता है] अब आप कृपा कर यहाँसे शीघ्र चलें। शीघ्र।

[अन्तराल संगीत]

[घोर संघर्षमय संगीत, तीव्र आँधी, भयानक साँय-साँय, व्यक्तिकी गरम उच्छ्वास, आकाशवाणीका स्वर]

आकाश० : डरना नहीं ! डरना नहीं !!

[फिर साँय-साँय, आँधी, किसीके हाँफ-हाँफ कर चलनेका स्वर]

श्यू० चु० : पानी···पानी···अब नहीं चला जाता···नहीं चला जाता। पाँच दिनसे पानीकी एक बूँद कण्ठसे नहीं उतरी। पेटमें आग भभक रही है। ओठ जल रहे हैं। मार्गका पता नहीं। तो···तो लौट चलूँ···लौट चलूँ···[क्षणिक विराम पर साँय-साँयका स्वर पूर्ववत्, साथ ही घोड़े और व्यक्तिकी उसाँसें] यह क्या मैं सचमुच लौट रहा हूँ। मैं लौट रहा हूँ, मैं, जिसने यह प्रण किया था कि यदि मैं भारत न पहुँचा तो एक पग भी पीछे न लौटूँगा। मैं अब क्या कर रहा हूँ। पीछे लौट रहा हूँ। नहीं, नहीं, मैं नहीं लौटूँगा। मैं आगे बढ़ूँगा। पश्चिम जानेकी कोशिशमें मर जाना अच्छा है। पूरबकी ओर जाकर जीते रहना भी अच्छा नहीं···मैत्रेय मुझे क्षमा करें, क्षमा करें।

बुद्धं सरणं गच्छामि
धम्मं सरणं गच्छामि
संघं सरणं गच्छामि

[आँधीका ज़ोर फिर बढ़ता है—संघर्ष, साँसका ज़ोर-ज़ोरसे चलना] पानी···पानी···पानी···अब तो एक

क़दम नहीं चला जाता। नहीं•••नहीं•••नहीं•••चला जा•••ता•••ओह, यह तपती बालू••••मैं अब इसीपर पड़ा रहूँगा, इसीपर, लेकिन लौटूँगा नहीं•••मैत्रेय, मैत्रेय, आप महान् हैं। आप परम तत्त्व हैं। आप जानते हैं••• कि श्यूआन चुआङ् यह यात्रा इसलिए नहीं कर रहा कि उसे दौलत मिले••••यश मिले। वह तो केवल धर्मके लिए, सच्चे उपदेशके लिए यह यात्रा कर रहा है। बोधिसत्त्व दीन-दुःखियोंकी रक्षा करनेवाले हैं। क्या वे श्यूआन चुआङ्के दुःखोंका अन्त न करेंगे। क्या वे श्यूआन चुआङ्की अभिलाषा पूरी न करेंगे•••बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि••••[दो क्षण **प्रार्थना करता है। संगीत सहसा उल्लासमय होने लगता है। श्यूआन चुआङ् चौंकता है**] यह क्या, एकाएक यह शीतलवायु कहाँसे चल पड़ी ? अहा हा, यह तो शीतल जलमें स्नान करने-जैसा है, अरे, घोड़ा भी चेतन हो गया। [**घोड़ेकी हिनहिनाहट**] अहा हा, आँखोंमें ज्योति आ गयी। अब तो नींद आ रही है। इतने दिन बाद नींद आ रही है। तो सो जाऊँ [**एक क्षण, सोनेका आभास। फिर स्वप्नमें एक स्वर उठता है**]

स्वर : तुम अभीतक पड़े सो रहे हो ? तुम्हें तो अपनी शक्ति-भर आगे बढ़ना चाहिए। बराबर आगे बढ़ना चाहिए।

श्यू० चु० : [**जागकर**] कौन, कौन था जो आगे बढ़नेकी प्रेरणा दे रहा था, बोधिसत्त्व, भगवान् मैत्रेय ! क्षमा करो अवलोकि-तेश्वर, क्षमा करो, श्यूआन चुआङ्को क्षमा करो। वह आगे बढ़ेगा, निरन्तर आगे बढ़ेगा। वह विपदाओंको गले लगायेगा, वह आपदाओंको स्वीकार करेगा। वह भारत

अवश्य पहुँचेगा। अवश्य !! नमो बुद्धाय, नमो बुद्धाय।

[अन्तराल संगीत—फिर नदीमें नाव चलनेका आभास। क्षण-भर संगीत—फिर दो व्यक्तियोंका धीरे-धीरे बात करना।]

प० यात्री : बन्धु ! एक बात जानना चाहता हूँ।

दू० यात्री : हाँ, हाँ, पूछो।

प० यात्री : जिनसे आप बातें कर रहे थे वे विदेशी भिक्षु कौन हैं ?

दू० यात्री : उनको नहीं जानते ? चीन देशके आचार्य श्यूआन चुआङ्का नाम नहीं सुना ? इनकी विद्वत्ताकी धाक तो चारों ओर फैली हुई है।

प० यात्री : हाँ, हाँ, सुना है। क्या यही हैं वह महात्मा ? इतनी दूरसे इतने भयंकर मार्गोंको पार करके आये हैं। आश्चर्य करता हूँ कैसे इन्होंने मार्गकी कठिनाइयों और विघ्न-बाधाओंको झेला, तपती हुई मरुभूमिको पार किया, पहाड़ोंको लाँघा, डाकुओंसे मुठभेड़ की ? अहा, कितने सुन्दर, कितने तेजस्वी, कितने गम्भीर····।

दू० यात्री : ठीक कहते हो बन्धु, इनमें जहाँ एक ओर पृथ्वीको घेरे रहनेवाले समुद्रकी-सी गम्भीरता है, वहाँ दूसरी ओर जलमें पैदा होनेवाले कमलके समान शान्ति और सुषमा भी है।

प० यात्री : और धर्मके प्रति अपार जिज्ञासाने इन्हें पण्डित बना दिया है। वही पाण्डित्य इनके नेत्रोंमें झलक रहा है।

दू० यात्री : सुदूर चीनसे भारत तकके सारे देश इन्होंने देख डाले हैं। काश्मीरके मार्गसे भारतमें प्रवेश किया और गान्धार पुष्कलवती, तक्षशिला, उरश, जालन्धर, मथुरा, कान्यकुब्ज होकर अब अयोध्यासे पूर्वको ओर जा रहे हैं।

[सहसा अनेक नावोंके आनेका आभास] लेकिन यह क्या····

प० यात्री : नावें। ये किनकी नावें हैं ?

दू० यात्री : डाकू, ये तो डाकू हैं। [ज़ोरसे] डाकू, डाकू, डाकू, भागो। [भगदड़, जलमें कूदना, डाकू सरदारका पास आना]

श्यू० चु० : शान्त बन्धुओ, शान्त। मैत्रेय सबकी रक्षा करेंगे।

डाकू सर० : मैत्रेयके चेलो ! सावधान। जहाँ हो वहीं रुको। सब अपने वस्त्र उतार दो, दुर्गाके उपासको ! सबकी तलाशी लो····! [हँसता है] और उस श्रमणको पकड़ लो। हमारे पूजाके दिन निकले जा रहे हैं। इससे सुन्दर और विद्वान् श्रमण नहीं मिलेगा। हम इसकी बलि चढ़ायेंगे। ऐसी सुन्दर भेंट पाकर दुर्गा हमपर बहुत प्रसन्न होगी।

श्यू० चु० : यदि मेरा तुच्छ शरीर देवीके योग्य है तो निश्चय ही मुझे बलि चढ़ा दो। मुझे कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु मैं एक बात कहता हूँ।

डाकू सर० : क्या कहते हो, कहो ?

श्यू० चु० : मैं इतनी दूर यात्रा करके इसलिए आया था कि बोधि वृक्ष और गृद्धकूट पर्वतके दर्शन करूँगा और ग्रन्थोंका अध्ययन करूँगा। वह काम अभी पूरा नहीं हुआ है। इसलिए मुझपर दया करो, मुझे छोड़ दो, नहीं तो भगवान् मैत्रेय तुमपर क्रुद्ध होंगे।

प० यात्री : हाँ, हाँ, इन्हें छोड़ दो। ये महादेश चीनके महात्मा हैं। हमारे देशके अतिथि हैं।

दू० यात्री : अतिथिकी हत्या पाप है। यह पाप मत करो। इनके स्थानपर मुझे देवीकी भेंट चढ़ा दो।

डाकू सर० : [हँसकर] तुम्हें भेंट चढ़ा दूँ। हूँ, हूँ, हूँ, तुम अपनेको इस विदेशी भिक्षुके बराबर मानते हो ! तुम अपनेको इसके समान सुन्दर और तेजस्वी समझते हो ! नहीं, यह नहीं होगा। दुर्गाके उपासको ! नाव रोक दो और फूलोंसे लदे वनमें एक वेदी तैयार करो। इस भिक्षुको बाँधकर वेदीपर खड़ा कर दो और स्वयं नंगी तलवार लेकर मेरी आज्ञाकी राह देखो।

ह्यू० चु० : तुम मुझे छोड़ना नहीं चाहते, न छोड़ो लेकिन इतना अवश्य करो कि कुछ क्षण मुझे एकान्तमें रहने दो, जिससे मैं शान्तिपूर्वक मृत्युका सामना कर सकूँ।

डाकू सर० : कुछ क्षण एकान्त चाहते हो।...अच्छा। दुर्गाके उपासको, इसे यहीं रहने दो पर सावधान। यह भागने न पावे। [धीमा स्वर] आश्चर्य है, मौतके सामने भी यह कितना शान्त है। [जानेका स्वर, मौन, आचार्यका प्रार्थनामय स्वर] बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि। मैत्रेय, मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि मैं तुषित स्वर्गमें जन्म लूँ। मैं बोधिसत्त्वके दर्शन करूँ, उनसे योगाचार्य भूमिशास्त्रकी शिक्षा ग्रहण करूँ। उनका उपदेश सुनूँ। बोधिज्ञान प्राप्त कर फिर इस संसारमें जन्म लूँ और इन लोगोंको उपदेश देकर सन्मार्गपर लाऊँ। धर्मका प्रचार कर संसारको शान्ति प्रदान करूँ...

[सहसा तेज़ आँधी आती है, तूफ़ान, बवण्डर, पेड़ उखड़ते हैं, नाव डगमगाती है। त्राहि-त्राहि मचती है, पृष्ठभूमिमें प्रार्थनाका स्वर उठता है।]

प० यात्री : ओफ़, यह कैसा भयंकर तूफ़ान आया है ! मानो प्रलय होनेवाली है।

दू० यात्री : यह इन डाकुओंके पापका परिणाम है। [ज़ोरसे] दुष्टो, तुमने महान् चीन देशके श्रमणको सताया है। तुमने भारतके विद्वान् अतिथिपर ज़ुल्म किया है। तुम्हारा पाप प्रलय बन गया है।

प० यात्री : क्षमा, क्षमा माँगो। पश्चात्ताप करो। नहीं तो तुम नष्ट हो जाओगे।

डाकू सर० : हम सब नष्ट हो जायेंगे? सचमुच यह तो इन्हींका प्रताप जान पड़ता है। ओह, तूफ़ानमें कैसी भयंकरता है और ये कैसे शान्त हैं।

श्यू० चु० : [जैसे जागते हैं] क्या है? यह शोर कैसा है? क्या बलिदानका समय हो गया?

डाकू सर० : भगवन्! हमें क्षमा करें। हम पापी हैं। हम आपको छू नहीं सकते। हमपर दया करें, दया करें।

श्यू० चु० : नमो बुद्धाय। भगवान् मैत्रेय आप सबको क्षमा करें। हत्या, लूट, धर्मके विरुद्ध हैं। ऐसे काम करनेवाले पापी सबसे भयंकर अवीची नरकमें जाते हैं। तुम लोग इस क्षण-भंगुर शरीरके लिए क्यों असंख्य कल्प तक नरककी यातना मोल लेते हो?

डाकू सर० : हम लोग मूर्ख हैं। अज्ञानके कारण बुरे काम करते हैं! यदि आपके दर्शन न होते तो कौन हमें मार्ग दिखाता? हम प्रतिज्ञा करते हैं कि आजसे बुरे काम न करेंगे। आप साक्षी हैं। हम सब हथियार अभी नदीमें फेंकते हैं। सबका माल लौटाते हैं। पंचशील ग्रहण करते हैं। [नदीमें फेंकनेका आभास। फिर प्रार्थनाका स्वर जो सामूहिक स्वरमें पलट जाता है]

सामू० स्वर : बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि ।

[आँधी-पानी शान्त होता है, प्रार्थनाका स्वर बढ़ता है । अन्तराल संगीत—फिर श्यूआन चुआङ्का स्वगत स्वर उठता है]

श्यू० चु० : [स्वगत] कैसा सुन्दर, कैसा पवित्र देश है भारत ? यहाँके लोग सत्यवादी और प्रतिष्ठित हैं ? विनयी और मृदुभाषी हैं । जो कह देते हैं उसे करना जानते हैं । यहाँ सब किसीको घूमने-फिरनेकी स्वतन्त्रता है । धर्म-पालनकी स्वतन्त्रता है । राज्य कर्मचारी सीधे-सादे हैं । सारा देश तीर्थोंसे भरा है । प्रयाग, कौशाम्बी, श्रावस्ती, जेतवन, पवित्र कपिलवस्तु और कुशीनगर, वाराणसी, वैशाली और मगध-सब जगह घूमा हूँ और सब तीर्थोंके दर्शन किये हैं । सब जगह भगवान् बुद्धकी उपस्थितिको अनुभव किया । यहाँ बुद्ध गयामें तो मैं उन्हें स्पष्ट देख रहा हूँ । इसी वृक्षके नीचे तो भगवान्ने बोधित्व प्राप्त किया था । अहा, कैसा सुन्दर वृक्ष है ? इसका पीला वल्कल कैसा चमकता है । इसकी पत्तियाँ शरद और वसन्तमें नहीं गिरतीं । केवल उसी दिन गिरती हैं जिस दिन भगवान्के निर्वाणका दिन आता है । फिर तुरन्त दूसरी निकल आती हैं । भक्त लोग श्रद्धासे गद्गद होकर उन पत्तियोंको ले जाते हैं । अहा, वह प्रभुकी मूर्ति है । बोधिज्ञान प्राप्त करनेकी अवस्था । कितनी भव्य ! कितनी पवित्र ! कितने उदात्त ! मेरा मन कैसा हो रहा है । मैं विह्वल हो रहा हूँ । मुझे रोमांच हो रहा है । जिस समय भगवान्को बोध हुआ था, मालूम नहीं मैं आवागमनके किस फन्देमें था । परन्तु इस समय

तो भगवान्‌की प्रतिमाका दर्शन कर और अपने पापोंके बोझ और भयंकरताका स्मरण कर मेरे मनको बड़ा कष्ट हो रहा है। मेरी आँखें भरी जाती हैं। क्षमा करो, भगवन्! क्षमा करो, मुझे क्षमा करो। मैं आपकी शरणमें हूँ··· [भावावेश] मैं आपकी शरणमें हूँ।

प० भिक्षु : देखो, देखो, चीन देशके उन महात्माको देखो, कैसे आत्मविभोर हो रहे हैं।

दू० भिक्षु : अहा हा, वह तो तथागतके चरणोंमें लोट गये। धन्य हो, धन्य हो।

प० भिक्षु : ये इतने विद्वान्। इनकी श्रद्धा इतनी अद्‌भुत। इनके दर्शन कर हम धन्य हुए।

दू० भिक्षु : हमारे महास्थविर शीलभद्रने इनको इसी विद्वत्ता और श्रद्धाके कारण तो नालन्दामें बुलाया है।

प० भिक्षु : आओ, आओ, इनको महास्थविरका सन्देश दें।

दू० भिक्षु : और इन्हें नालन्दा ले चलें।

[अन्तराल संगीतके बाद ह्यूआन चुआङ्का गम्भीर स्वर]

ह्यू० चु० : [स्वगत] पाँच वर्ष। नालन्दामें पाँच वर्ष रहकर भी मन नहीं भरा। तीन बार मैंने योगशास्त्रकी व्याख्या सुनी। महास्थविर शीलभद्रका अपार प्रेम पाया। अनेक शास्त्रार्थोंमें विजय पायी। दक्षिण भारतके अनेक भागोंमें घूम-घूमकर तीर्थ-दर्शन किये। अब फिर लौटकर नालन्दा आ गया हूँ। कितना प्रेम हो गया है मुझे यहाँके लोगोंसे। नालन्दाके भिक्खु तो जैसे मेरे प्राण बन गये हैं। उनसे बिछुड़ते दुःख होता है, पर मैं यहाँ हमेशा कैसे रह सकूँगा। कैसे···मेरा देश मुझे पुकार रहा है। मानो वह कह रहा है कि सद्धर्मका जो प्रकाश तुमने पाया

है वह हमें भी दो। उस दिन स्वप्नमें देखा था कि हर्षके बाद भारतमें उपद्रव मचेगा। मानो बोधिसत्त्वने मुझे चेतावनी दी थी कि शीघ्र यहाँसे चले जाओ···

[भिक्षुओंका प्रवेश]

प० भिक्षु : आचार्य ! यह क्या बात है ? आप बार-बार जानेकी चर्चा क्यों करते हैं ?

दू० भिक्षु : नहीं, नहीं, आप नहीं जा सकते।

प० भिक्षु : भारत भगवान्की जन्मभूमि है। तथागत आज स्वयं नहीं हैं पर उनके अनेक चिह्न यहाँ वर्तमान हैं।

दू० भिक्षु : इनके दर्शन-पूजनसे बढ़कर जीवनमें और क्या सुख हो सकता है ?

प० भिक्षु : चीन तो म्लेच्छ देश है। वहाँ छोटे लोग रहते हैं। उनकी बुद्धि मन्द है। उन्हें धर्मका ज्ञान नहीं है।

दू० भिक्षु : इसीलिए कोई भिक्षु या महात्मा वहाँ नहीं जाते। इसी लिए भगवान् वहाँ भी अवतार नहीं लेते।

श्यू० चु० : [हँसकर] आपके प्रेमको समझता हूँ परन्तु सोचो तो, भगवान् बुद्धने धर्मका उपदेश सारे संसारके लिए किया था तो, क्या यह उचित है कि जो उसका लाभ उठा चुके हैं, वे उन्हें धर्मसे वंचित रखें जो अभी अज्ञानमें पड़े हैं। चीनमें भी विद्वान् लोग हैं, आचारवान् हैं, धार्मिक हैं। वे संगीतके प्रेमी हैं। जिज्ञासु हैं। निर्वाण-प्राप्तिकी चेष्टा करते हैं। भगवान् कब क्या करेंगे ? कौन जानता है ? सो आप कैसे कह सकते हैं कि भगवान् हमारे देशको क्षुद्र समझ वहाँ कभी जन्म नहीं लेंगे। आप मुझे जानेसे क्यों रोकते हैं ?

प० भिक्षु : इसलिए कि भारत भगवान्‌की जन्मभूमि है । और बाहरके देश विधर्मी हैं ।

श्यू० चु० : बन्धु ! अन्धकारका नाश करनेके लिए सूर्य भारतके ऊपर चमकता है, इसीलिए मैं भी अपने देश जाना चाहता हूँ ।

दू० भिक्षु : आप माननेवाले नहीं हैं । चलिए वह सामने महास्थविर विराजमान हैं । उनसे पूछिए ।

[पदचाप]

श्यू० चु० : महास्थविर, प्रणाम करता हूँ । आपने मुझे स्मरण किया ।

शीलभद्र : हाँ आचार्य, आप भारतसे जाना चाहते हैं, क्यों ?

श्यू० चु० : महास्थविर ! आपने कृपा कर मुझे योगशास्त्र पढ़ाया । मेरी शंकाएँ निवृत्त कीं । मैंने तीर्थोंका दर्शन किया, मैंने धर्मग्रन्थोंका अध्ययन किया, किसलिए ?

[क्षणिक संगीत]

श्यू० चु० : इसलिए कि मैं धर्मग्रन्थोंका अपनी मातृभाषामें अनुवाद कर सकूँ । इसलिए कि मेरे देशवासी उन्हें समझ सकें । मेरी तरह आपके कृतज्ञ हो सकें ।

शीलभद्र : आचार्य ! आपके विचार बोधिसत्त्वके विचारोंके समान हैं । मै आपको जानेसे नहीं रोक सकता ।

प० भिक्षु : महास्थविर !

दू० भिक्षु : महास्थविर ! आपने क्या कहा ?

शीलभद्र : तुम लोग इन्हें न रोको । जाने दो, चीनमें सद्धर्मका प्रकाश फैलने दो । आचार्य ! मैं हृदयसे आशीर्वाद देता हूँ कि आपकी मनोकामना पूर्ण हो । पूर्ण हो···· ।

श्यू० चु० : महास्थविर ! मैं उपकृत हुआ । भगवान्‌की हम सबपर कृपा है । नमो बुद्धाय । नमो बुद्धाय ।

[स्वर दूर जाता है, पर तभी एक और स्वर उठता है]

वज्र : ठहरो आचार्य !

श्यू० चु० : ओह, आप ! आपने कहा था कि मैं रुक सकूँ तो अच्छा है ।

वज्र : मैंने ठीक ही कहा था । देखा आपने कितना प्रेम है यहाँ आपके प्रति । आप अभी नहीं जा सकते । कुमार राजाका दूत आपको बुलानेके लिए आ रहा है । उनसे मिलनेके बाद आपको कुमार हर्ष शिलादित्यसे मिलना है ।

श्यू० चु० : सच । पर मैं तो उनको जानता भी नहीं ।

वज्र : लेकिन वे आपको जानते हैं । आपके जानेका अवसर अभी नहीं आया । आपको अभी रुकना ही होगा । इसीमें भारतका, आपका, आपके महादेश चीनका कल्याण है ।

[स्वर दूर जाते-जाते विलीन हो जाते हैं ।]

श्यू० चु० : सुनो तो, सुनो····गये । तो मुझे अभी भारतमें रहना पड़ेगा । अभी मैं अपनी मातृभूमि, अपने देश चीनको न लौट सकूँगा । भगवान् मैत्रेय···· ।

प० भिक्षु : [जाता हुआ] आचार्य, आचार्य, महास्थविर आपको याद कर रहे हैं । कामरूपके राजाका दूत आया है । वे आपको बुलाते हैं । उधर महास्थविरने निश्चय किया है कि आपको हीनयान वालोंसे शास्त्रार्थ करनेके लिए महाराज हर्षके पास भेजा जाये ।

श्यू० चु० : [स्वगत] भगवान् मैत्रेय, अभी मुझे और रहना पड़ेगा । अभी और रहना पड़ेगा । आपकी यही इच्छा है ? यही हो, यही हो । [प्रकट] चलो बन्धु, चलो ।

[अन्तराल संगीत]

स्वर : सुनो, सुनो, नागरिको ! कुमार हर्ष शिलादित्यकी घोषणा सुनो ।

स्वर दूसरा : चीन देशके आचार्य जिनकी अध्यात्मशक्ति बढ़ी-चढ़ी है, जिनकी व्याख्या करनेकी प्रतिभा अद्‌भुत और गम्भीर है, लोगोंके मिथ्या ज्ञानका खण्डन करनेके लिए यहाँ आये हैं । जिससे धर्मका सच्चा स्वरूप स्थापित हो और मूर्खता और मिथ्या ज्ञानमें पड़े हुए लोगोंकी रक्षा हो, परन्तु मिथ्या और भ्रमात्मक सिद्धान्तोंके मनानेवाले अपने अज्ञानपर पश्चात्ताप न कर उनके विरुद्ध षड्‌यन्त्र रच रहे हैं और उनके प्राण लेना चाहते हैं ।...यदि कोई आचार्यको छूने तकका साहस करेगा तो उसका सिर काट लिया जायेगा । जो उनके विरुद्ध बातें करेगा उसकी जिह्वा काट ली जायेगी परन्तु जो कोई इनकी शिक्षाओसे लाभ उठाना चाहता है उसे, मैं विश्वास दिलाता हूँ, कोई भय न होगा ।

श्यू० चु० : कुमार हर्ष शिलादित्यसे मिलकर तो मैं जैसे खो गया हूँ । कितना सम्मान करता है वह मेरा ? कितनी भक्ति है उसकी सद्धर्ममें । महायानके सिद्धान्तोंकी श्रेष्ठता प्रमाणित करनेके लिए उसने मुझे अवसर दिया । कितने विद्वान् उपस्थित थे उस परिषद्‌में । देश-देशके विद्वान्, विचित्र पहनावे, शरद्‌के बादलके समान चारों ओर फैले हुए, भीड़ इतनी मानो समुद्र उमड़ रहा हो, शानदार जलूस, शानदार चढ़ावे, पूजा, लेकिन कोई भी तो मेरे साथ शास्त्रार्थ करने नहीं आया । [किसीके आनेका आभास] यह क्या, कुमार शिलादित्य इधर आ रहे हैं ।

हर्ष : आचार्य पधारिए ! अट्ठारह दिन बीत जानेपर भी कोई विरोधी आपसे शास्त्रार्थ करने नहीं आया । जिन विरोधियों-

ने आपके विरुद्ध षड्यन्त्र रचनेकी चेष्टा की थी वे भी भाग गये। आपकी कृपासे सद्धर्मकी जय हुई। इस उपलक्ष्यमें मेरी तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिए। अमात्य! आचार्यकी पूजाके पश्चात् जलूसका प्रबन्ध हो।

अमात्य : प्रबन्ध हो चुका है महाराज, अट्ठारह देशोंके राजाओंने आचार्यकी सेवामें बहुमूल्य रत्न भेंट किये हैं।

श्यू० चु० : कुमार! मुझे रत्न नहीं चाहिए। मुझे बहुमूल्य वस्त्र नहीं चाहिए। मैं जलूस निकालना भी उचित नहीं समझता।

हर्ष : लेकिन यह हमारे देशकी प्राचीन प्रथा रही है आचार्य। इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। जो शास्त्रार्थमें जीतता है उसका जलूस निकलता ही है।

श्यू० चु० : लेकिन जो सदासे होता आया है वह क्या सदा होना ही चाहिए।

हर्ष : आचार्य, क्षमा करें। सद्धर्मके प्रचारके लिए....

श्यू० चु० : सद्धर्मके प्रचारके लिए, सद्धर्मके लिए! अच्छा, लेकिन मैं मणि-मुक्ताएँ किसी भी शर्तपर स्वीकार नहीं करूँगा।

[जलूसका स्वर—हाथीकी घण्टियाँ-भीड़—स्वर]

स्वर : [स्वर ऊँचा उठता है] आचार्यने सद्धर्मकी पताका फहरायी है! किसीको उनका विरोध करनेका साहस नहीं हुआ। [यह घोषणा कई बार होती है उसीमें सामूहिक स्वर उठता है]

सा० स्वर : चीन देशके आचार्यने महायानके सिद्धान्तोंको स्थापित किया है और हीनयानका खण्डन किया है। अट्ठारह दिन तक कोई उनसे शास्त्रार्थ करने नहीं आया। यह सब लोगोंको सर्वत्र मालूम होना चाहिए।

[हर्ष-सूचक स्वर—नमो बुद्धाय, नमो बुद्धाय]

प० भिक्षु : इस जीतके उपलक्ष्यमें महायान-संघ उन्हें महायानदेवकी उपाधिसे विभूषित करता है।

दू० भिक्षु : हम हीनयान-संघके भिक्षु पराजित होकर भी आचार्यका सम्मान करते हैं और उन्हें 'मोक्षदेव'की उपाधि प्रदान करते हैं।

[हर्षसूचक स्वर—नमो बुद्धाय, नमो बुद्धाय]

श्यू० चु० : [तरल गम्भीर स्वर] आपकी इस अपार श्रद्धाका, कृपाका मैं कैसे बखान करूँ। मेरी किसीसे शत्रुता नहीं है। सद्धर्मकी जय हो, महायानसे बढ़कर अन्य कुछ नहीं है। उसीका प्रकाश फैले। श्रावस्तीके जैतवनमें जिस धर्मका आविर्भाव हुआ था उसीका यह प्रकाश है। आपका कल्याण हो। भगवान् मैत्रेय, आप सबपर अमृतकी वर्षा करें। नमो बुद्धाय। नमो बुद्धाय। बुद्ध सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि।

[यही स्वर सामूहिक बन जाता है। अन्तराल—उसके बाद विदाका मार्मिक संगीत]

हर्ष : आचार्य ! आप इतनी जल्दी क्यों कर रहे हैं ? मैं भी आपकी तरह भगवान्के धर्मका प्रचार करना चाहता हूँ।

श्यू० चु० : कुमार ! मेरा देश दूर है। उन लोगोंने अभी धर्मको पूर्णरूपसे ग्रहण नहीं किया है। आपने मुझे प्रयागकी परिषद् तक रोका, मैं रुक गया। आपने मुझे फिर दस दिन रोका, मैं रुक गया। अब तो मुझे जाने ही दीजिए।

हर्ष : लेकिन आचार्य ! कुमार राजा कहते हैं···।

श्यू० चु० : वह मैं जानता हूँ। कुमार राजाके, आपके, सारे देशके मेरे प्रति प्रेमको मैं स्वीकार करता हूँ पर आप मेरे देशके

विद्वानोंकी बात भी तो सोचिए। वे मुझसे अपनी शंकाएँ निवारण करनेको उत्सुक होंगे। वे मेरी राह देख रहे होंगे।

हर्ष : आचार्य, ठीक कहते हैं। हम लोगोंको उनके मार्गमें बाधक नहीं होना चाहिए, पर....

श्यू० चु० : पर, मन नहीं मानता। क्या आप नहीं जानते कि जो धर्मके अध्ययनमें बाधा डालता है वह जन्म-जन्म अन्धा पैदा होता है।

हर्ष : जानता हूँ, आचार्य!

श्यू० चु० : तो फिर तुम अन्धे होना चाहते हो। नहीं, मुझे जाने दो।

हर्ष : आचार्य! क्षमा करें, भूल हुई, आप जैसा चाहें करें। रहें या जायें।

श्यू० चु० : मैं जाना चाहूँगा, कुमार!

हर्ष : अच्छी बात है।....आप कृपाकर मुझे यह बतलाइए कि आपको किन-किन वस्तुओंकी आवश्यकता है?

श्यू० चु० : मुझे किसी वस्तुकी आवश्यकता नहीं है, कुमार! मैं बहुत कुछ पा चुका हूँ।

हर्ष : आचार्य, यह आपकी महानता है। अमात्य, आचार्यके लिए स्वर्ण मुद्रा और दूसरी वस्तुएँ लायी जायें।

अमात्य : उपस्थित है महाराज! कुमार राजा भी भेंट लेकर आये हैं। और लोग भी...

श्यू० चु० : कुमार शिलादित्य, कुमार राजा, नागरिको, बन्धुओ! मैं आपके प्रेमसे आपका बन्दी बन गया हूँ। पर मुझे जाना है। मेरे देशमें भी आप-जैसे बन्धु हैं। उन्हें भी सद्धर्मकी आवश्यकता है। सो मुझे जाने दो। ये वस्तुएँ मैं क्या

करूँगा ? सद्धर्मका ज्ञान ही मेरी बहुमूल्य सम्पत्ति है। धर्म-ग्रन्थ ही मेरे लिए मणि-मुक्ता हैं।

हर्ष : फिर भी आचार्य....

ह्यू० चु० : अच्छा कुमार! नहीं मानते तो मैं चमड़ेका यह अचकन लेता हूँ। मार्गमें वर्षासे यह मेरी रक्षा करेगी। बस, अब तो आप सब प्रसन्न हैं।

हर्ष : हम आचार्यके कृतज्ञ हैं। अमात्य, दो हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ और एक हज़ार चाँदीके टुकड़े हाथीपर लदवाकर सैनिकों-को सौंप दो। मार्गमें काम आयेंगे और तीन मार्गप्रदर्शक भी साथ कर दो।

अमात्य : कुमार पहले ही आज्ञा दे चुके हैं। सब प्रबन्ध हो चुका है।

हर्ष : और मार्गमें पड़नेवाले राजाओंके नाम पत्र भेज दिये हैं?

अमात्य : कुमार स्वयं उन्हें भिजवा चुके हैं।

ह्यू० चु० : कुमार शिलादित्य, कुमार राजा, बन्धुओ, आपको भूलना चाहकर भी न भूल सकूँगा। मैं भिक्षु हूँ फिर भी...

हर्ष : [एकदम] आचार्य! मैं कुछ दूर आपके साथ चलूँगा.... हम सब चलेंगे।

[हाथी-घोड़ोंके चलनेका स्वर तेज़ होकर दूर जाता है, फिर पास आता है, ह्यूआन चुआङ्का स्वर उठता है।]

ह्यू० चु० : [स्वगत] जा तो रहा हूँ पर मन न जाने कैसा हो रहा है। कैसे प्यारे, कैसे धर्मभीरु, कैसे विद्वान् हैं यहाँके लोग। कुमार शिलादित्य, कुमार राजा, महास्थविर शीलभद्र, प्रज्ञादेव, ज्ञानप्रभ ये तो मुझे रह-रहकर याद आयेंगे। उनके गुणोंका मैं सदा स्मरण करूँगा। इनकी कृपाके लिए मेरे मनमें बड़ा सम्मान है। कुमार हर्ष सेना सहित दूर तक साथ आये थे। बड़ी कठिनतासे लौटे!

पन्द्रह वर्ष पूर्व जब मैं छिपकर भागा था तो कौन जानता था कि एक दिन तथागतकी भूमिसे मैं अबुध सद्धर्मका इतना ज्ञान लेकर लौटूँगा। भगवान् मैत्रेयने श्यूआन चुआङ्पर कितनी कृपा की। भगवान् अवलोकितेश्वर श्यूआन चुआङ्का मार्ग प्रदर्शन करें। वह अब शेष जीवन इन ग्रन्थोंका अपनी मातृभाषामें अनुवाद करनेमें, सद्धर्मके प्रकाशसे देशवासियोंकी शंका निवारण करनेमें बितायेगा। नमो बुद्धाय। बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि। [घोड़ोंकी तेज़ टाप] कौन आ रहा है ? ओ कुमार शिलादित्य ! [टाप पास आती है] कुमार शिलादित्य फिर आ गये, क्यों ?

हर्ष : कुमार शिलादित्य आचार्यके चरणोंमें प्रणाम करता है।

श्यू० चु० : भगवान् मैत्रेय आपका कल्याण करें। नमो बुद्धाय। कुमारने अब कैसे कष्ट किया ?

हर्ष : मन नहीं माना आचार्य, दर्शन करने और बिदा लेने चला आया।

श्यू० चु० : कुमार ! इस प्रकार मनके वशमें होनेसे कैसे होगा ? तथागतका मार्ग आसक्तिका मार्ग नहीं है। वह बन्धन-मुक्तिका मार्ग है।

हर्ष : जानता हूँ आचार्य, लेकिन…

श्यू० चु० : लौट जाओ कुमार ! इस मार्गपर लेकिन-वेकिनका कोई स्थान नहीं।

हर्ष : [एक दम] क्षमा करें आचार्य, अब ऐसा न होगा। बिदा, अन्तिम बार बिदा ! आचार्य बिदा !

[कण्ठ अवरुद्ध]

श्यू० चु० : [काँपता स्वर] भगवान् मैत्रेय आपका कल्याण करें। नमो बुद्धाय, नमो बुद्धाय। सद्धर्मका प्रकाश सबका मार्ग प्रदर्शन करे।

हर्ष : [रुँधा स्वर] विदा...

श्यू० चु० : नमो बुद्धाय...बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि।

[घोड़ोंकी टाप उठती है, दूर जाती है, स्वर तेज़ होता है—समाप्त]

१९५६]

जजका फ़ैसला
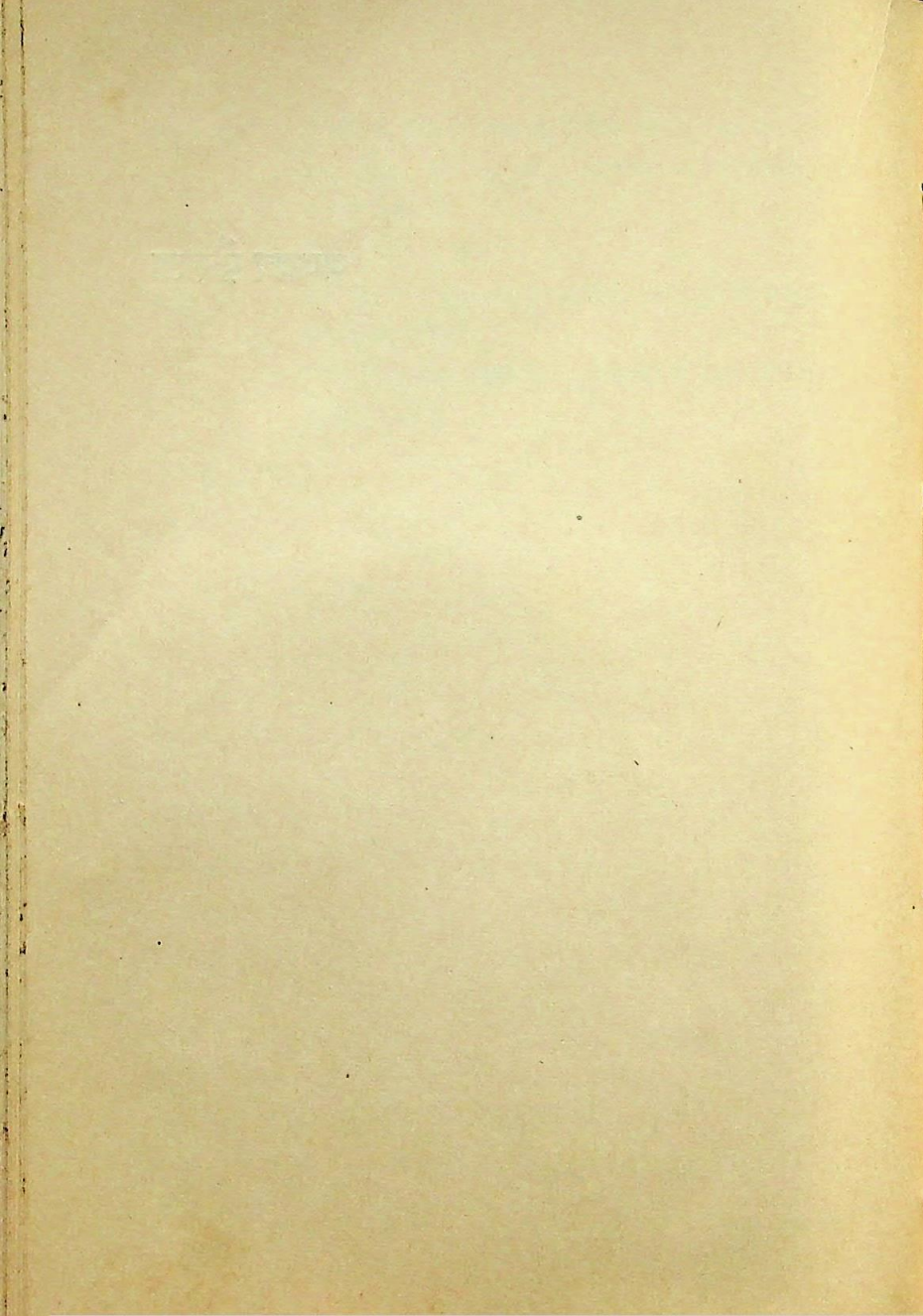
[पात्र : जजसाहब, प्रोफ़ेसर, नर्स, प्रकाश, इंजिनियर, डॉक्टर, विमला। प्रारम्भिक संगीतके बाद रेलके तेज़ीसे आनेका स्वर, कुछ क्षण बाद यह स्वर धीमा पड़ता है, फिर धीरे-धीरे बिलकुल रुक जाता है। सीटीकी आवाज़ उठती है, फिर यात्रियोंके स्वर उठते हैं— "क्या हो गया ?", "गाड़ी क्यों रुक गयी ?", "जंगलमें गाड़ी कैसे खड़ी हो गयी ?" फिर खिड़कियाँ खुलती हैं और एक सेकेण्ड क्लासके डिब्बेमें स्वर तेज़ होते हैं।]

इंजिनियर : यह तो गाड़ी रुक गयी ! क्या बात है ? [खिड़की खोलता है]

प्रोफ़ेसर : हाँ, गाड़ी यहाँ कहाँ रुक गयी ? [जैसे कोई दूर देखता हो] कोई स्टेशन तो नहीं दिखाई देता।

जज : स्टेशन नहीं है, तो और क्या है ?

इंजिनियर : जंगल ! एकदम जंगल है ! गाड़ी पहाड़ियोंमें-से गुज़र रही है। आगे सतपुड़ाका ढलान है।

प्रोफ़ेसर : तब तो स्टेशन अभी दूर है।

जज : प्रोफ़ेसर, आप नौजवान हैं। ज़रा देखिए तो, क्या बात है ? कहीं कोई एक्सीडैण्ट तो नहीं हो गया !

इंजिनियर : नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं दिखाई देती। हाँ, वक़्त बड़ा खराब है। अँधेरा गहरा होता जा रहा है। पहाड़ियाँ भूत-सी जान पड़ती हैं।

जज : [हँसकर] और इन भूत-सी पहाड़ियोंमें जिन्दा भूत भी रहते हैं।

प्रोफ़ेसर : क्या मतलब ? क्या आप कहना चाहते हैं कि····

जज : नहीं-नहीं, मैं ऐसा कुछ नहीं कहना चाहता। लूट-मारका ज़माना अब बीत गया। यह शान्तिका युग है। इंजनमें कुछ गड़बड़ हो गयी होगी।

प्रोफ़ेसर : मैं अभी देखता हूँ। [कूदता है] लोग इंजनकी ओर जा रहे हैं। [दूर जाता स्वर] अभी पता लग जाता है।

इंजिनियर : आप ठीक कहते हैं। ट्रेन रोक लेनेवाले डाकुओंका अब कोई डर नहीं है। हाँ, कभी-कभी पहले या दूसरे दर्जेके डिब्बोंमें कोई दुर्घटना हो जाती है, पर उसके लिए गाड़ी रोकनेकी बेवक़ूफ़ी कौन करेगा ? [हँसता है]

जज : [हँसकर] इंजिनियर साहब ! आप भी कहाँ पहुँच गये ! अरे, कोई भैंस या ऐसा ही कोई बड़ा जानवर लाइनपर आ गया होगा।

इंजिनियर : और शायद कट गया होगा। हाँ, बस यही बात है। लेकिन उसको हटानेमें काफ़ी देर लग सकती है। देखूँ, प्रोफ़ेसर कहाँ पहुँच गये। [विराम] दिखाई नहीं देते। सब लोग लौट रहे हैं। सबके मुँह लटके हुए हैं। क्या बात है ?

जज : किसीसे पूछो न ! अपना डिब्बा भी सबसे पीछे पड़ गया।

इंजिनियर : लो, वे प्रोफ़ेसर आ गये [पुकारकर] हलो प्रोफ़ेसर ! क्या खबर है ?

प्रोफ़ेसर : [दूरसे] खबर तो कुछ अच्छी नहीं है ! [पास आकर] आगे कहीं स्टेशनसे इस ओर मालगाड़ीका डीरेलमेण्ट हो गया है। उससे लाइनमें कुछ खराबी हो गयी है। ठीक करनेमें देर लगेगी।

इंजिनियर : देरका मतलब कि कुछ घण्टे लगेंगे।

प्रोफ़ेसर : लग सकते हैं। कुछ भरोसा थोड़े ही है। मेरे साथ पहले भी एक-दो बार ऐसा हो चुका है। अभी पिछले वर्षको बात है, बम्बई जाते हुए कोटा जंकशनपर छह घण्टे पड़े रहना पड़ा था।

जज : छह घण्टे ! तब तो सवेरा हो जायेगा।

इंजिनियर : अब कुछ भी हो। जो होगा, वह भुगतना पड़ेगा। ख़ुशी इस बातकी है कि कोई दुर्घटना नहीं हुई। शायद आपको याद होगा, एक बार इसी स्थानपर भयंकर रेल-दुर्घटना हो गयी थी।

जज : मुझे मालूम है। उसमें लगभग सौ व्यक्तियोंको जानसे हाथ धोना पड़ा था।

इंजिनियर : बेशक ! मैंने वह सब अपनी आँखोंसे देखा था।

प्रोफ़ेसर : क्या मतलब ? क्या आप भी उस ट्रेनसे सफ़र कर रहे थे ?

इंजिनियर : जी हाँ !

जज : तब तो आप ख़ुशक़िस्मत हैं। वह तो समूची ट्रेन खड्डेमें जा गिरी थी। आप कैसे बचे ?

इंजिनियर : कैसे बचा ? यह तो मैं भी नहीं जानता। बस बच गया, इतना मालूम है।

प्रोफ़ेसर : उतना तो हमको भी मालूम है। आप हमारे सामने बैठे हैं।

इंजिनियर : [हँसकर] आप कहें, तो इसका एक और प्रमाण दे सकता हूँ।

प्रोफ़ेसर : वह क्या ?

इंजिनियर : वह यह कि मैंने बीमा कम्पनीसे रुपये वसूल किये थे।

प्रोफ़ेसर : भई ख़ूब ! आपने एक ओर तो मौतको छकाया, दूसरी ओर रुपया भी वसूल किया। कैसी अद्भुत बात है !

जज : यह क्या अद्भुत बात है ! अद्भुत बात मैं जानता हूँ !

प्रोफ़ेसर : आप जानते हैं ! यानी आप भी इस दुर्घटनाके गवाह हैं ?

जज : जी नहीं, मैं किसी दुर्घटनाका गवाह नहीं हूँ, पर एक भयंकर रेल-दुर्घटनासे सम्बन्ध रखनेवाले एक अजीबो-ग़रीब मामलेका फ़ैसला मैंने अवश्य किया है ।

प्रोफ़ेसर : आपका मतलब शायद रेलको गिराने या लूटनेवाले किसी षड्यन्त्रसे है !

जज : नहीं दोस्त ! मैं किस चोर, डाकू या षड्यन्त्रकी बात नहीं कह रहा । वह साधारण इनसानकी बात है । पर बड़ी अनोखी बात है ।

इंजिनियर : अनोखी बात है, तो सुनाइए । वक़्त ही कटेगा ।

जज : सुनानेके लिए ही तो मैंने बात शुरू की । [विराम] जिस दुर्घटनाका मैंने अभी जिक्र किया है, उसमें तबाह होनेवाली ट्रेनमें जो यात्री सफ़र कर रहे थे, उसमें एक महिला भी थी । उसकी शादी हुए कुछ दिन भी नहीं बीते थे, वह अपने पतिके साथ दक्षिणकी यात्रापर निकली थी । वह निहायत खूबसूरत थी । उसके लम्बे-पतले, नील-नयन, तिलके फूल-से नासा-पुट, गुलाब-सा खिला हुआ मुखड़ा, किंचित् भूरे-सघन-केश देखकर भूख मिटती थी । उनके डिब्बेमें केवल दो यात्री और थे । इसलिए उनकी मोहब्बतकी दुनियामें चैन ही चैन था । उन्हें नहीं मालूम था कि गाड़ी तेज़ीसे उड़ी जा रही है, कि दिनका देवता थकान महसूस करने लगा है । प्रेमकी दुनियामें न जरा है, न मरण और न थकान । पर क़ुदरतका क़ानून मोहब्बतकी बन्दिशसे भी ऊपर है । धीरे-धीरे रातकी देवीने चारों ओर अपनी मोहिनी डालनी शुरू की । डिब्बेके शेष

दोनों यात्री ऊँघने लगे, पर प्यारकी दुनियामें खोये हुए उन दो प्रेमियोंपर रातकी वह मोहिनी कुछ प्रभाव न डाल सकी। वे बराबर प्रेमालापमें मशग़ूल रहे। पत्नीने कई बार कहा—

[फ़ेड-इन, पति-पत्नी, चलती ट्रेन, सीटीका स्वर प्रेमालाप]

विमला : अब तो आप सो जाइए ! बहुत रात बीत गयी है।

प्रकाश : रात तो सदा आती रहती है, परन्तु प्रेमके ये क्षण बार-बार नहीं आते, विमला ! आज मुझपर नींदकी परियोंका जादू नहीं चलेगा।

विमला : [हँसकर] मुझे नहीं मालूम था कि आप कवि भी हैं।

प्रकाश : [हँसकर] था तो नहीं, पर अब हो गया हूँ। तुम्हारा परस ही ऐसा होता है। देखो न, तुम्हारा संग पाकर लोहेकी ट्रेन भी कैसा गाना गा रही है ? कितनी समरसता है उसके ताल-लय और स्वरमें ?

विमला : जैसी पक्के गानेमें होती है। [खिलखिलाती है] या फिर जैसी शिवके ताण्डवमें होती है !

प्रकाश : नहीं प्रिये ! इसमें वही समरसता है, जो पार्वतीके लास्यमें होती है।

विमला : [और भी तेज़ हँसी] पार्वतीका लास्य ? प्रियतम, आप सपनोंकी दुनियामें हैं !

प्रकाश : सपनोंकी दुनिया ? हाँ, यह सपना ही तो है ! तुम स्वयं एक सपना हो ! यह रात भी एक सपना है—एक मधुर मादक संगीतसे पूर्ण सपना ! रातका संगीत हमेशा सपने-का संगीत होता है। बाहर झाँको ! देखो ! समुद्रकी लहरोंमें चंचलता भर देनेवाला यह चाँद अपनी मौन

मुसकानसे धरतीपर अमृत उँड़ेल रहा है। उसमें स्नान कर प्रकृति मस्त हो उठी है। पहाड़ियाँ एकटक आसमानके रूपको निहार रही हैं।

विमला : [प्रभावित होकर] वैसे ही, जैसे मैं अपने प्रियतमको निहारा करती हूँ।

प्रकाश : [शरारत] कौन है तुम्हारा प्रियतम, विमला !

विमला : [शरारत] कोई है, तुम्हें क्यों बताऊँ ?

प्रकाश : क्योंकि मैं ही वह प्रियतम हूँ।

विमला : ऊँ हुँ; तुम तो प्रकाश हो !

प्रकाश : मेरी आँखोंमें झाँको और बताओ !

विमला : वहाँ तो मैं हूँ।

प्रकाश : मेरे हृदयमें देखो।

विमला : उसकी प्रत्येक धड़कनमें मेरा स्वर है, प्रकाश !

प्रकाश : तो फिर अपना हृदय टटोलो, विमल !

विमला : [हँसकर] वहाँ रहता है मेरा प्रियतम !

प्रकाश : [हँसकर] तो फिर मुझे अपनी आँखोंमें झाँकने दो !

विमला : [ज़ोरसे हँसकर] हटो, हटो, अब सो जाओ ! मुझे भी सोने दो ! सपनोंमें अपने प्रियतमसे बातें करूँगी।

प्रकाश : अब जो कुछ है, वह क्या सपनेसे कुछ भिन्न है, विमल ?

विमला : अब जो कुछ है, वह सब सत्य है, प्रकाश !

प्रकाश : तो फिर मुझे सपने नहीं चाहिए। मैं सत्य चाहता हूँ। मैं तुम्हें चाहता हूँ।

विमला : ओह, मेरे प्रियतम ! मेरे प्रकाश !

प्रकाश : मेरी विमला !

[फ़ेड-आउट, फ़ेड-इन जज साहब]

जज : और इस तरह उनकी बातें चलती रहीं। दो प्रेमियोंकी बेमायना, बेसिर-पैरकी बातें। उन बेमायना लगनेवाली बातोंमें एक ऐसी सुगन्ध थी, जिससे सारा संसार महकता रहता है। पर कुछ भी क्यों न हो, समय किसीके लिए नहीं रुकता। शाहो-गदा, मोहब्बत और नफ़रत वह किसी-की परवाह नहीं करता। आखिर मोहब्बतके उन दीवानों-की पलकें भारी होने लगीं। नींदकी परियाँ उन्हें सपनोंकी दुनियामें ले जानेके लिए आ पहुँचीं। लेकिन इससे पहले कि वे उन्हें उठा सकें, गाड़ी एक झटकेके साथ हिल उठी। फिर बड़े ज़ोरसे लड़खड़ायी और उसके बाद तो आनन-फाननमें चारों ओरसे धमाके उठने लगे, जैसे पहाड़ टूटकर गिर पड़ा हो।

[फ़ेड-आउट, फ़ेड-इन, ट्रेन]

[गाड़ीके हिलने और गिरनेका स्वर, इंजनकी चीख़, भयकी पुकार, जैसे समय और गतिमें टक्कर हो गयी हो। जज साहबका स्वर भी तेज़ हो गया, जैसे शड़ाक्छ-शड़ाक्छकी बराबर उठनेवाली आवाज़ भयंकर तेज़ीसे चीख़ उठी हो।

'ओह'.....'यह क्या'.....'या ख़ुदा'....'हे भगवान्।' 'माँ'.....'काका'...रुदनके स्वर, सहायताकी पुकार। इसी बीचमें साथ-साथ दोनों प्रेमियोंकी पुकार]

प्रकाश : [नींदसे जागकर ख़ौफ़नाक आवाज़में] यह क्या...यह कैसी आवाज! ओह, गाड़ी हिलती है! विमल...विमल ओह...यह तो...यह तो विमल [चीख़]

विमला : [भयाक्रान्त] प्रकाश....प्रकाश...[चीख़] आ... आ...प्र....का....श...

प्रकाश : वि…म…ल !

[भयंकर चीत्कार और उथल-पुथलके बीच ये स्वर खो जाते हैं]

[फ़ेड-आउट]

इंजिनियर : ऊफ़, जज साहब। आपने मुझे भी उस भयंकर दृश्यकी याद दिला दी। मेरा दिल कैसा धड़क रहा है ! मुझे लगता है, जैसे दुर्घटना अभी घट रही है। लगभग इसी समय और इसी स्थानपर तो वह दुर्घटना घटी थी।

प्रोफ़ेसर : सचमुच, यह निर्जन, यह रात और वह भयंकर दुर्घटना ! कल्पना-मात्रसे रोंगटे खड़े होते हैं, और वे दोनों प्रेमी ! उनके नये जीवनकी उमंगें खिलनेसे पूर्व ही मुरझा गयी। सपना आनेसे पहले ही नींद खुल गयी ! दोनों अकालमें ही मर गये !

जज : नहीं, मेरे दोस्त ! वे दोनों मरे नहीं !

प्रोफ़ेसर : दोनों नहीं मरे तो क्या एक मरा ?

जज : एक भी नहीं !

प्रोफ़ेसर : [चकित] एक भी नहीं मरा ?

जज : हाँ, वे दोनों बच गये, जैसे इंजिनियर साहब बच गये थे।

प्रोफ़ेसर : [प्रसन्न होकर] तो वे दोनों खुशक़िस्मत थे !

जज : वे खुशक़िस्मत थे या बदक़िस्मत, यह कहानी पूरी होनेके बाद ही कहा जा सकता है। हाँ, वे बच गये थे। उनकी गिनती मुरदोंमें न होकर, घायलोंमें हुई थी। मिस्टर प्रकाशके शरीरपर अनेक घाव थे और वे सब साधारण थे, लेकिन श्रीमती विमलाके ज़ख्म बहुत गहरे थे। उसके दाहिने पैरकी हड्डी टूट गयी थी। उसके मुखपर बायीं ओर सिरसे लेकर ठोड़ी तक एक बड़ी दरार पड़ गयी थी।

प्रोफ़ेसर : दरार ? उफ़ !

जज : केवल दरार नहीं, उसका सारा चेहरा घावोंसे भरा हुआ था। दो दिन तक उसे होश नहीं आया। जब आया, तब वह देख नहीं सकती थी। उसके सारे मुखपर पट्टियाँ बँधी हुई थीं। वह न हिल सकती थी, न डुल सकती थी। नीम-बेहोशीमें वह बस यही पुकारती रहती थी।

[फ़ेड-इन, विमला]

विमला : [फुसफुसाहट] प्रकाश···प्रकाश··तुम कहाँ हो···तुम कहाँ हो ? [रुँधा स्वर] प्रकाश ! तुम बोलते क्यों नहीं, बोलते क्यों नहीं ? कहाँ हो तुम ?

नर्स : न, न, मिसेज़ विमला ! रोओ मत। प्रकाश ठीक हैं, पर अभी उठ नहीं सकते; बस एक-दो दिनमें यहीं आ रहे हैं।

विमला : [धीमी सुबकी] कहाँ हो तुम···प्रकाश ! प्रकाश !!

नर्स : [प्यारसे] बस, अब आनेवाले हैं। आने ही वाले हैं।

विमला : [धीमा होता स्वर] प्र···का····श····[शान्ति]

नर्स : [स्वगत] फिर बेहोशी। उफ़ ! क्या जिन्दगी है ? क्यासे क्या हो गया ? वह आकर देखेगा; तो क्या बीतेगी उस-पर ! कितनी खूबसूरत थी और अब····काश ! यह मर जाती।

[डॉक्टरका प्रवेश]

डॉक्टर : नर्स ! क्या हाल है मरीज़का ?

नर्स : वही अँधेरे और रोशनीका खेल है। जागती है, तो बस प्रकाशको पुकारती है और उसका नाम रटती-रटती फिर बेहोश हो जाती है।

डॉक्टर : [पॉज] तो प्रकाशको बुलाना पड़ेगा।

नर्स : [काँपकर] डॉक्टर !

डॉक्टर : बुलाना ही पड़ेगा ! डॉक्टरका काम मरीज़को ज़िन्दा रखना है, नर्स !

नर्स : लेकिन डॉक्टर ! वह इसे देखेगा, तो ?

डॉक्टर : [गम्भीर] तो उसके दिलको ठेस लगेगी। मैं सब कुछ समझता हूँ, नर्स ! पर इससे बचनेका कोई रास्ता भी तो नहीं है। [पॉज] प्रकाश ठीक है, मैं उसे समझा दूँगा।

नर्स : डॉक्टर ! क्या तुम्हें विश्वास है कि वह समझ जायेगा ?

डॉक्टर : नर्स ! हमारा काम प्रयत्न करना है। [पॉज] और यह दुर्घटना तो जैसे हमारी परीक्षा लेनेके लिए हुई है। उफ़ ! इतनी तबाही ! इतना खौफ़नाक हादसा ! बहुत-कुछ देखा है, पर इसका तो ध्यान आते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यह कराहट ! यह ज़िन्दगीका तड़पना। बीमारी सही जा सकती है, पर अपनोंकी याद और उनपर पड़ता मौतका साया....उफ़ ! उफ़ ! वह नहीं सहा जा सकता।

नर्स : आप ठीक कहते हैं, डॉक्टर !

डॉक्टर : [एकदम] अच्छा नर्स ! तुम उसकी देख-भाल करो ? हमारा काम इसे ज़िन्दा रखना है। [हँस पड़ता है] हमारा काम सबको ठीक करना है [तेज़ हँसी]

[फ़ेड-आउट]

जज : [गहरा निःश्वास] इधर त्रिमलाकी यह अवस्था थी, उधर प्रकाशकी बेचैनी बढ़ रही थी। वह प्रतिक्षण उसके पास आनेको तड़फड़ाता रहता था। डॉक्टर नहीं चाहते थे कि वह अभी अपनी पत्नीको देखे, पर कबतक ? वे उसे कबतक रोक सकते थे।

प्रोफ़ेसर : जहाँ इतना प्रेम हो, वहाँ तो क्षणोंका वियोग भी भारी हो जाता है, फिर वे तो ऐसी हालतमें जुदा हुए थे !

इंजिनियर : वह हालत ! जज साहब ! उस रात मैंने जो चीख़-पुकार सुनी थी, अस्पतालमें पीड़ाको जिस तरह कराहते देखा था, उससे मैं उनकी हालतका कुछ अनुमान कर सकता हूँ। उफ़ ! वह ख़ौफ़नाक अँधेरा, वह मौतकी भयानक हँसी, इनसानका वह आर्तनाद !

जज : मैं जानता हूँ, मैं जानता हूँ, पर प्रकाशके घाव बहुत गहरे नहीं थे। उसे विमलाके पास ले जाया जा सकता था और उसे ले जाया भी गया। लेकिन विमलाके डॉक्टरने एकाएक उसे विमलाके पास जानेकी आज्ञा नहीं दी।

[फ़ेड-इन, डॉक्टर]

डॉक्टर : मि० प्रकाश, तुम समझदार हो ! तुम्हें कुछ और सब्र करना चाहिए ! विमलाकी हालत अभी ठीक नहीं है।

प्रकाश : ठीक नहीं है ! यह तो मैं भी जानता हूँ। पर क्या अभी-तक उसे होश भी नहीं आया ?

डॉक्टर : होश तो आ गया है, पर···

प्रकाश : परकी चिन्ता आप मुझपर छोड़ दीजिए ! मुझे उसके पास ले चलिए !

डॉक्टर : ले तो चलता पर···

प्रकाश : [भावावेश] फिर वही पर ! डॉक्टर, वह मेरी पत्नी है !

डॉक्टर : [मुसकरा कर] जानता हूँ, मि० प्रकाश !

प्रकाश : तो फिर क्या बात है ? क्या उसकी हालत इतनी खराब है कि···

डॉक्टर : इतनी खराब होती, तो आपको ज़रूर ले चलता। उनके अच्छे होनेकी पूरी आशा है, पर···

प्रकाश : [एकदम] फिर वही पर ! आखिर आप कहना क्या चाहते हैं ?

डॉक्टर : यही कि आपको देखकर उनकी हालत खराब होनेका डर है !

प्रकाश : [चीख़कर] डॉक्टर !

डॉक्टर : मैं ठीक कहता हूँ, प्रकाश बाबू !

प्रकाश : [रुआँसा] मुझे देखकर उसकी हालत खराब होनेका डर है ! मुझे, जो उसका पति है, जो····[एकदम] पर डॉक्टर ! क्या वह मुझे पहचान सकेगी ?

डॉक्टर : प्रकाश बाबू ! [पॉज] प्रकाश बाबू ! आपको सब-कुछ बताना होगा ?

प्रकाश : क्या····क्या बताना चाहते हैं, आप ? जल्दी बताइए !

डॉक्टर : तो सुनिए, प्रकाश बाबू ! आपकी पत्नीके मुखपर बड़े जख्म हैं । अभी कई दिन पट्टी नहीं खुल सकती ।

प्रकाश : [चकित] मुखपर गहरे जख्म हैं ? कई दिन पट्टी नहीं खुल सकती ?

डॉक्टर : हाँ, प्रकाश बाबू !

प्रकाश : [एकदम] लेकिन डॉक्टर ! मैं उसका मुँह नहीं देखना चाहता । मैं उसे देखना चाहता हूँ । उसे, जो मेरी पत्नी है ! डॉक्टर, मैं विमलासे प्रेम करता हूँ, मुखसे नहीं, [स्वर रुँध जाता है] डॉक्टर ! आप भी मनुष्य हैं ! आप भी किसीको प्यार करते हैं । आपको भी वे दिन याद होंगे जब····जब [सहसा रो पड़ता है] ।

डॉक्टर : [कोमल सान्त्वनाके स्वरमें] प्रकाश बाबू ! प्रकाश बाबू ! न, न, रोइए नहीं, आप पुरुष हैं ।

प्रकाश : पुरुष हूँ, तो क्या पत्थर हूँ, डॉक्टर ? क्या मैं कुछ अनुभव नहीं करता ?

डॉक्टर : मैं यह नहीं कहता, मैं यह नहीं कहता !

प्रकाश : तो क्या कहते हैं ?
डॉक्टर : यही कि मैं आपको वहाँ ले चलूँगा ।
प्रकाश : [एकदम] डॉक्टर !
डॉक्टर : हाँ, मैं आपको वहाँ ले चलूँगा, पर एक शर्तके साथ !
प्रकाश : उसे देखनेके लिए मैं कोई भी शर्त माननेको तैयार हूँ ।
डॉक्टर : तो सुनिए, मिस्टर प्रकाश ! आप अपनी पत्नीको देख तो सकेंगे, परन्तु बात नहीं कर सकेंगे !
प्रकाश : [ठगा-सा] बात नहीं कर सकूँगा ?
डॉक्टर : जी नहीं, उसे यह भी नहीं पता लगेगा कि आप उसके पास हैं ।
प्रकाश : यह भी पता नहीं लगेगा ?
डॉक्टर : नहीं; वह देख ही नहीं सकती !
प्रकाश : [काँपकर] डॉक्टर !
डॉक्टर : अभी तो यही बात है, पर मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ, वह ठीक हो जायेगी ।
प्रकाश : [थका-सा] अच्छा, डॉक्टर ! अच्छा ! मुझे सब कुछ मंज़ूर है ।
डॉक्टर : तो आइए ।
[पॉज, कई क्षण दोनोंका चलना, बातें करना]
डॉक्टर : वह सामने उसीका कमरा है । एक नर्स उसके पास है । बराबर पास रहती है ।
प्रकाश : वह मुझे पुकारती है, डॉक्टर ?
डॉक्टर : आपको ही पुकारती है, पर आप अपनी शर्त याद रखिए ! उसीके भलेके लिए मैं आपसे यह सब कह रहा हूँ ।
प्रकाश : सब समझता हूँ, डॉक्टर ! मैं सब-कुछ समझता हूँ । मैं उसे पता भी नहीं लगने दूँगा ।

डॉक्टर : मुझे यही आशा है। लो हम आ गये। [पुकारकर] नर्स !

नर्स : [पास आकर] यस, डॉक्टर !

डॉक्टर : नर्स ! आप हैं प्रकाश बाबू। विमलाको देखने आये हैं।

नर्स : लेकिन····

डॉक्टर : ये सब-कुछ जानते हैं। उसे पता भी नहीं लगने देंगे। जाइए प्रकाश बाबू ! अन्दर आपकी पत्नी है, केवल आपकी पत्नी !

[पॉज, पद-चाप, पॉज]

प्रकाश : [उच्छ्वसित स्वर] वि····म····ल····

नर्स : [मना करती हुई] शी····शी····शी····बोलिए नहीं !

प्रकाश : [संघर्ष करता हुआ] विमल···[सिसकी] वि···वि····

नर्स : नहीं, नहीं, प्रकाश बाबू ! सँभालिए अपनेको, सँभालिए !

प्रकाश : [हाँफता-सा] वि···म····ल ! वि···म···ल अ···

[शब्द मिटते-मिटते वह गिर पड़ता है]

नर्स : [काँपकर] ओह ! डॉक्टर····डॉक्टर····

डॉक्टर : क्या····क्या प्रकाश बाबू बेहोश हो गये····ओह !

विमला : [धीरेसे] कौन···कौन गिरा ?

नर्स : कोई नहीं····कोई नहीं····मैं गिर गयी थी।

विमला : लेकिन अभी किसीने कहा था प्रकाश····उन्हें बुला दो। उन्हें बुला दो। वे आये हैं !

नर्स : वे आने ही वाले हैं। बस दो-चार दिनमें आने ही वाले हैं।

[पॉज, अन्तर-सूचक संगीत]

डॉक्टर : प्रकाश बाबू, प्रकाश बाबू ! आँखें खोलिए !

प्रकाश : [निःश्वास, चकित स्वर] मैं कहाँ हूँ ?

डॉक्टर : अस्पतालमें !

प्रकाश : ओह, डॉक्टर ! आप···समझा····मैं बेहोश हो गया था ।

डॉक्टर : ऐसा हो ही जाता है, प्रकाश बाबू ! ऐसा हो ही जाता है । आप अपनेको सँभालिए ।

प्रकाश : मैं ठीक हूँ, डॉक्टर ! लेकिन····लेकिन डॉक्टर । क्या आप समझते हैं कि मेरी पत्नी ठीक हो जायेगी ?

डॉक्टर : ठीक क्यों न होगी !

प्रकाश : नहीं-नहीं, ऐसे नहीं; आप मुझे साफ़ बताइए। मुझे बहलाइए मत !

डॉक्टर : [पॉज़, फिर सहानुभूतिपूर्ण स्वर] प्रकाश बाबू ! मैं ग़लत नहीं कह रहा । आपकी पत्नीके प्राण तो बच जायेंगे पर····[पॉज]

प्रकाश : [उतावला] पर···पर क्या डॉक्टर ! [पॉज] बताइए, डॉक्टर !

डॉक्टर : [गम्भीर स्वर] पर प्रकाश बाबू ! उनका एक पैर कट गया है । शायद एक आँख भी जाती रहेगी और···

प्रकाश : [भय] और····

डॉक्टर : और मुँह टेढ़ा हो जायेगा ?

प्रकाश : [दर्द और फुसफुसाहट] पैर कट गया ! एक आँख जाती रही ! मुँह कुछ टेढ़ा हो जायेगा !

डॉक्टर : मुझे बहुत अफ़सोस है, प्रकाश बाबू ! बहुत अफ़सोस है ! [पॉज] चार दिन पहले आपकी पत्नी कितनी सुन्दर थी, पर अब····अब आपको सब्र करना होगा । और कोई चारा नहीं !

प्रकाश : [पागल-सा] और कोई चारा नहीं । कोई चारा नहीं ?

डॉक्टर : नहीं, प्रकाश बाबू ! और कोई चारा नहीं ! मैं जानता हूँ; आप उससे मोहब्बत करते हैं। आप बहादुर हैं ? आप अपनेको सँभालिए ! अच्छा, मैं चला। गुड नाइट !

प्रकाश : गुड नाइट ! [पॉज़, निःश्वास, फिर बड़बड़ाता है] कोई चारा नहीं, सब्र करना चाहिए। आपकी पत्नी कितनी सुन्दर थीं। एक पैर कट गया, एक आँख जाती रही, मुँह कुछ टेढ़ा हो जायेगा। ख़ूबसूरत, सुन्दर, घाव, टेढ़ा मुख, एक पैर, एक आँख, घाव ! [हँसता है] सुन्दर, घाव, सुन्दर, टेढ़ा मुख [हँसी धीरे-धीरे तेज़ होती है] सुन्दर, घाव, टेढ़ा मुख। [सहसा रोने लगता है] विमल कितनी सुन्दर ! एक पैर कट गया, एक आँख जाती रही, मुख टेढ़ा हो गया !

[धीरे-धीरे स्वर फुसफुसाहटमें परिवर्तित होता है, फिर फेड आउट।]

[फेड-इन, जज साहब]

जज : वह रातभर इसी तरह बड़बड़ाता रहा और रोता रहा। उसने किसीसे कुछ नहीं कहा, पर उसकी हरकतें पागलोंकी-सी होने लगीं। वह डॉक्टरोंके लिए एक समस्या बन गया; क्योंकि वह वास्तवमें पागल नहीं था। आखिर उन लोगोंने उसे घर भेजनेका निश्चय किया। जब उसे यह बात बतायी गयी, तो उसने भी कोई एतराज़ नहीं किया। सिर्फ़ जानेसे पहले एक बार अपनी पत्नीको देखनेकी इच्छा प्रकट की।

प्रोफ़ेसर : और उसकी यह इच्छा मान ली गयी ?

जज : हाँ, दोस्त ! वह मान ली गयी। और डॉक्टरने उसे पत्नीके पास ले जानेका वह अवसर चुना, जब वह गहरी नींदमें

सो रही थी। उसे कुछ नहीं मालूम था। वह उस दिन न काँपा, न गिरा, बल्कि निहायत संजीदगीसे उसके बिलकुल पास जा खड़ा हुआ। कई क्षण मौन, बिना हिले, बिना डोले, वह एक-टक उस अस्पन्दित लोथको देखता रहा, फिर सहसा उसने हाथ उठाये।

[फेड-इन, नर्स]

[पॉज, फिर नर्सका व्यग्रतासे बोलना]

नर्स : [धीमा स्वर] न, न, प्रकाश बाबू ! छुइए नहीं ?

प्रकाश : नहीं छुऊँ ? अच्छा, नहीं छुऊँगा ?

[पॉज, फिर नर्सका व्यग्रतासे बोलना]

नर्स : प्रकाश बाबू ! आप फिर छू रहे हैं ! नहीं-नहीं, वह जाग जायेगी !

प्रकाश : वह जाग जायेगी, वह जाग जायेगी, वह जाग जायेगी ! तो''''तो क्या डर है ? मैं आया हूँ, मैं ! [एकदम] नहीं-नहीं वह सो रही है; उसे सोने दो, उसे सोना चाहिए ! सोना चाहिए !

नर्स : [व्यग्रता] शी'''शी'''शी'''आप ज़ोरसे न बोलें ! प्रकाश बाबू, आप उसपर झुकें नहीं !

प्रकाश : केवल एक बार उसे छू लूँ ?

नर्स : नहीं-नहीं, अब नहीं, चलिए, आगे न बढ़िए, क्या करते हैं ? [आगे बढ़ती है]

प्रकाश : [पागल-सा] रुको, नर्स ! मैं उसे सुलाना चाहता हूँ। वह सुन्दर है, उसका एक पैर, एक आँख, सुन्दर घाव, सुन्दर मुख [तेज़ीसे हँसकर] नर्स, उसका मुख बहुत सुन्दर है, बहुत सुन्दर ! [दाँत भींच कर] तुमने देखा है, उसका मुख ? नहीं देखा, नहीं देखा नर्स, देखो !

[अट्टहास, नर्स चीख़ती है]

नर्स : क्या करते हो, पीछे हटो, पीछे हटो, डॉक्टर···डॉक्टर !

प्रकाश : [वही अट्टहास] सुन्दर टेढ़ा मुख, सुन्दर घाव, हा-हा-हा !

[भयानक हँसी, संघर्ष, पत्नीकी चीख़]

नर्स : डॉक्टर, डॉक्टर, अरे कोई दौड़ो ! प्रकाशने विमलाका गला घोंट दिया ! दौड़ो !

डॉक्टर : [भागता आता है] क्या है ? क्या हुआ ? [भीड़का कोलाहल]

प्रकाश : [हाँफता-सा] अब ठीक है, तुम्हारी वेदना ख़त्म हो गयी, तुम्हारी सुन्दरता अमर हो गयी ! [कुछ शान्त होकर] डॉक्टर ! अब मैं कहीं भी चलनेको तैयार हूँ, कहीं भी !

[दुःखान्त संगीतके बाद फेड-आउट]

जज : [वेदना-मिश्रित स्वर] और अपनी पत्नीकी हत्याके अपराधमें वह गिरफ़्तार कर लिया गया। उसपर मुक़दमा चला, एक लम्बा मुक़दमा, एक विचित्र मुक़दमा !

इंजिनियर : विचित्र···उफ़ ! वह भयानक मुक़दमा होगा !

प्रोफ़ेसर : भयानक ! उफ़ ! कितना जटिल है मानव-चरित्र !

इंजिनियर : और इसी जटिल केसका आपने फ़ैसला किया ?

जज : जी हाँ !

प्रोफ़ेसर : मुझे विश्वास है कि अन्तमें आपने उसे छोड़ दिया होगा।

जज : मेरे नवयुवक दोस्त ! मैं आपसे पूछना चाहूँगा कि अगर आपको इस मुक़दमेका फ़ैसला करना पड़ता तो···

प्रोफ़ेसर : तो मैं उसे छोड़ देता। बिलकुल छोड़ देता। मैं उसके साथ अन्याय नहीं कर सकता था !

जज : मैंने भी नहीं किया, मेरे दोस्त ! मैं अन्याय कर ही नहीं सका। मैंने उसे फाँसीकी सजा दी !

प्रोफ़ेसर : [काँपकर] फाँसी !

इंजिनियर : फाँसी ! आपने उसे फाँसी दी ? [गाड़ीकी सीटी, पृष्ठभूमि में शोर, "गाड़ी चल पड़ी, गाड़ी चल पड़ी" !]

जज : [वही गम्भीर स्वर] हाँ, मैंने उसे फाँसीकी सज़ा दी। इसलिए दी, कि वह ज़िन्दगी-भर अपने ख़ूनी हाथोंको देख-देख कर तड़पता न रहे, दोस्तो ! उसे ज़िन्दा रखना उसकी पवित्र भावनाका अपमान होता !

[फिर सीटी होती है। और गाड़ी चल पड़ती है, शब्द उस शोरमें खो जाते हैं।]

●

साँप और सीढ़ी

९

[पात्र, श्यामलाल, रत्नी : श्यामलालकी बहन, नीली : रत्नीकी सखी, हरीश : एक समय नीलीका सम्भावित पति, पुरुषोत्तम : श्यामलालका पुराना साथी, तस्कर व्यापारी, शैला : पुरुषोत्तमकी साथिन । प्रारम्भिक संगीतके बाद रत्नी और नीली बड़ी गम्भीरतासे बातें करती पास आती हैं]

रत्नी : तो यह बात है । बदलेमें वह तुमको चाहता है !

नीली : हाँ जीजी, वह मुझको खरीदना चाहता है ।

रत्नी : तो तुम्हारा क्या खयाल है ? तुम अपनी और अपने खान्दानकी इज्ज़त बचाना चाहती हो या अपने-आपको ?

नीली : जीजी !

रत्न : तुम्हें दोनोंमें-से एकको चुनना है, नीली ?

नीली : लेकिन····

रत्नी : लेकिन तुम दोनोंको बचाना चाहती हो ? नहीं, यह सम्भव नहीं ।

नीली : जीजी, तुम क्या कह रही हो ?

रत्नी : मैं ठीक कह रही हूँ ।

नीली : ओह, जीजी ! मैं क्या करूँ ?

रत्नी : करनेको काम कम नहीं हैं । एक गज़ रस्सी कहीं भी मिल सकती है । फिर पेड़ हो, खूँटी हो, कड़ा हो, कहीं भी लटका जा सकता है । परिणाम सबका समान होगा ।

नीली : उस परिणामको मैं जानती हूँ, पर उससे तो मैं न अपने-आपको बचा सकूँगी और न अपने कुलकी मर्यादाको ।

रत्नी : प्राण निकल जानेके बाद भी क्या कुलकी मर्यादाका कोई

मूल्य रह जाता है ?

नीली : रह जाता है, जीजो।

रत्नी : रह जाता है, तो तुम्हें इस बातका विचार उसी समय करना चाहिए था, जब तुम उसके हाथोंमें खेल रही थी।

नीली : [काँपकर] जीजो !

रत्नी : [मौन]

नीली : मैं नहीं जानती थी कि तुम भी इतनी बेरहम हो ! उस दिन समझ पाती, तो क्या आज तुम्हारे पास आती ?

रत्नी : तो क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारे स्थानपर मैं अपने-आपको उस दुष्टके हवाले कर दूँ ?

नीली : [चीख़कर] जीजी, जीजी, यह तुमने क्या कहा ?
[क्षणिक सन्नाटा जिसमें नीली लम्बे साँस खींचती है]
मैं जानती हूँ, मैंने पाप किया है, मैं पापी हूँ, पर····पर····

रत्नी : [एकदम] पर पापके परिणामको स्वीकार नहीं करना चाहतीं !

नीली : [पागल-सी] जीजी बस, अब आगे कुछ न कहना ! मैं हाथ जोड़ती हूँ। मैं अब यहाँ नहीं आऊँगी ! कभी भी यह गन्दी सूरत तुम्हें न दिखाऊँगी ?

रत्नी : तो तुम समझ गयी कि तुम्हारी सूरत गन्दी है ! देरसे सही, पर कोई हर्ज नहीं। देर आयद दुरुस्त आयद। लेकिन जाती कहाँ हो ?

नीली : [मुड़ती है] कहीं भी जाऊँ, तुम्हें क्या ?

रत्नी : नीली। [कड़ककर] नीली ! ख़बरदार जो एक क़दम भी आगे बढ़ाया। देख, मुझसे बुरी न होगी !

नीली : [रोकर] नहीं, नहीं, जीजी, मैं अब तुम्हारी कुछ नहीं। कभी कुछ नहीं थी। मैं अब तुम्हारे पास न आऊँगी, कभी

न आऊँगी। [दूर जाते स्वर]

रत्नी : [पीछे जाती है] नीली, नीली, नीली, तू नहीं रुकेगी ? नीली, सुन तो [शब्द दूर जाते हैं। श्यामलालके शब्द पास आते हैं।]

श्यामलाल : क्या हुआ, रत्नी ? क्या बात है ? यह नीली ऐसे क्यों भागी जा रही है ?

रत्नी : जिनके भाग्यमें भागना लिखा है, वे भागेंगे नहीं, तो और क्या करेंगे ?

श्यामलाल : लेकिन बात क्या हुई ? तुम लोगोंके बीचमें यह भाग्य कहाँ से आ कूदा ?

रत्नी : नीलीसे ही पूछ लेना, तुम तो उससे अकसर मिलते हो।

श्यामलाल : रत्नी।

रत्नी : तुमसे उसने अब तक कुछ नहीं कहा।

श्यामलाल : नहीं तो, कोई ऐसी बात नहीं कही, जिससे····

रत्नी : [एकदम] जिससे तुम उससे नफ़रत कर सको।

श्यामलाल : रत्नी ! यह तुझे क्या होता है ? तू कभी सीधी बात नहीं करती। सदा पहेली ही बुझाया करती है।

रत्नी : भैया, मैं औरत हूँ। औरत पहेली न बुझायेगी, तो और क्या करेगी ? उसकी सीधी बातको समझता कौन है ?

श्यामलाल : सीधी बातको समझना होता है ?

रत्नी : हाँ भैया, समझना सीधी ही बातको होता है। टेढ़ी बातको समझनेके लिए तो तरह-तरहकी विद्याएँ हैं, ज्ञान हैं; पर सीधी बातको समझनेके लिए सीधा दिल चाहिए। आज वही दुर्लभ हो गया है।

श्यामलाल : [गम्भीर स्वर] वही दुर्लभ हो गया है ! [एकदम] रत्नी, तुम ठीक कहती हो।

रत्नी : [अर्थ-भरी दृष्टिसे] तो तुम समझ गये ?

श्यामलाल : अब तक तो उलझ ही रहा था, पर अब जैसे कुछ-कुछ प्रकाश दिखाई देने लगा है।

रत्नी : देने लगा है, सच ?

श्यामलाल : हाँ रत्नी, नीलीके जीवनमें अवश्य कुछ ऐसी बात है, जो उसे परेशान किये हुए है, जिसे वह किसी औरको नहीं बताना चाहती।

रत्नी : लेकिन मुझे बता गयी हैं।

श्यामलाल : [काँपकर] तुम्हें बता गयी है ?

रत्नी : हाँ, बता गयी है और इसलिए बता गयी है कि तुम उसकी मदद कर सको।

श्यामलाल : [एकदम] मैं उसकी मदद कर सकूँ ? मैं···?

रत्नी : हाँ तुम ! तुमपर उसे विश्वास है।

श्यामलाल : रत्नी ! रत्नी ! तुम क्या कह रही हो ? उसे मुझपर विश्वास है ! सच ?

रत्नी : [शरारतसे] हूँ।

श्यामलाल : तो जल्दी बताओ, वह क्या बात है ? मैं उसके लिए क्या कर सकता हूँ ?

रत्नी : उहूँ, ऐसे नहीं, यह आवेश है। आवेशका बल बालूकी दीवारकी तरह होता है, भैया। कल बात करूँगी।

श्यामलाल : नहीं, नहीं, रत्नी, मैं बिलकुल शान्त हूँ। मैं जानता हूँ कि आवेश बुरा होता है, पर मैं बिलकुल आवेशमें नहीं हूँ। मैं कई दिनोंसे खुद नीलीसे पूछ रहा था, पर वह बताती नहीं थी।

रत्नी : इसीलिए यह और भी जरूरी हो जाता है कि उसपर निहायत ठण्डे दिमागसे विचार किया जाये। कल ही बातें होंगी।

श्यामलाल : [तेज़ीसे] रत्नी !

रत्नी : हाँ, भैया !

श्यामलाल : मैं वह बात अभी जानना चाहता हूँ। तुम्हें बताना होगा।

रत्नी : और न बताऊँ, तो ?

श्यामलाल : [एकदम] तो मैं तुम्हारा सिर तोड़ दूँगा।

रत्नी : [ज़ोरसे हँसकर] तो तोड़ दो न। शायद वह बात वहाँ लिखी मिल जाये, सोनेका अण्डा देनेवाली मुर्ग़ीकी तरह !

श्यामलाल : [एकदम पराजित खीझसे] ओह रत्नी, मैं पागल हो जाऊँगा। मैं पागल हो जाऊँगा।

रत्नी : वही तो तुम नहीं हो सकते, और बिना पागल हुए कोई किसीको कैसे पा सकता है ?

श्यामलाल : क्या मतलब ?

रत्नी : मतलब भी बतलाना होगा ? नीलीने अभीतक कुछ नहीं बताया ?

श्यामलाल : वह कुछ बताती ही तो नहीं। नहीं, रत्नी, मैं अब उससे कुछ न छिपाऊँगा। उससे सब कुछ कह दूँगा। उसे सब-कुछ बता दूँगा। तब शायद उसे मुझपर विश्वास होगा। तब शायद अपनी कहानी सुनानेको वह तुम्हारे पास न आयेगी। [दूर जाते स्वर]।

रत्नी : [एकदम] भैया, भैया, सुनो तो। ऐसा न करना। अभी ऐसा न करना, भैया।

श्यामलाल : [पास आकर] क्यों न करूँ ? मैं उसे····

रत्नी : मैं जानती हूँ कि तुम उसे पाना चाहते हो, पर वह बहुत दुःखी है।

श्यामलाल : उसका दुःख ही तो मैं जानना चाहता हूँ।

रत्नी : जानना चाहते हो ? जानकर दुःख तो न होगा।

श्यामलाल : रत्नी, रत्नी, तुम क्यों मेरी परीक्षा लेना चाहती हो ?

रत्नी : इसलिए कि तुम मज़बूत बन सको ।

श्यामलाल : [खोया-सा] क्या वह इतनी खराब बात है ?

रत्नी : तुम नीलीके पिताको तो जानते ही हो ।

श्यामलाल : उस शराबी और जुआरीको कौन नहीं जानता ?

रत्नी : और उसकी माँका चरित्र भी तुमसे नहीं छिपा है ।

श्यामलाल : वह वेश्या थी । पर जब नीलीके पिता उसे घर ले आये, तो फिर उसने उन्हें निभा दिया ।

रत्नी : ऐसा निभाया कि क्या कोई विवाहिता निभायेगी ! लेकिन भैया, तुम यह बात नहीं जानते कि माँकी मौतके बाद नीली देवीसिंहके जालमें फँस गयी थी ।

श्यामलाल : [सहसा काँपकर] देवीसिंह ! वह दुष्ट, बदमाश, गुण्डा ! नीली उसके जालमें फँस चुकी है ?

रत्नी : हाँ, भैया ! वह उस खूबसूरत शैतानकी वासनाका शिकार हो चुकी है ।

श्यामलाल : [उसी तरह] क्या ? देवीसिंह····नीली देवीसिंहकी वासनाका शिकार ! नीली देवीसिंहकी वासनाका शिकार !! नीली देवीसिंहकी वासनाका शिकार !!! [आवेग बराबर बढ़ता है । चीख़कर] मैं देवीसिंहका गला घोंट दूँगा । मैं····मैं ।

रत्नी : फिर वही आवेश, फिर वही उत्तेजना ।

श्यामलाल : [पूर्वतः] भाड़में जाये आवेश और उत्तेजना । मैं पूछता हूँ, नीलीने यह बात बतायी क्यों ?

रत्नी : क्योंकि देवीसिंहके पास इस बातके प्रमाण हैं । उन्हीं प्रमाणोंके बलपर वह नीलीसे विवाह करना चाहता है ।

श्यामलाल : [तेज़ीसे घूमता हुआ] क्या वह नीलीसे विवाह करना

चाहता है ? देवीसिंह नीलीसे विवाह करना चाहता है ?

रत्नी : लेकिन नीली देवीसिंहसे विवाह करना नहीं चाहती। वह···

श्यामलाल : समझता हूँ, रत्नी।

रत्नी : उसके चाचाको अभी इस बातका पता नहीं। पता लगते ही वह नीलीको घरसे निकाल देंगे और उसे देवीसिंहकी बात स्वीकार करनी पड़ेगी।

श्यामलाल : यह भी समझता हूँ, रत्नी।

रत्नी : लेकिन केवल समझना ही तो काफ़ी नहीं है।

श्यामलाल : वह भी समझता हूँ।

रत्नी : तब मुझे कुछ नहीं कहना।

श्यामलाल : वह भी समझता हूँ।

रत्नी : [एकदम] तब तुम कुछ नहीं समझते।

श्यामलाल : वह भी समझता हूँ।

रत्नी : [ज़ोरसे] खाक समझते हो। तुम होशमें नहीं हो।

श्यामलाल : [एकदम काँपकर] क्या हुआ ? क्या हुआ, रत्नी ?

रत्नी : यही तो मैं पूछती हूँ कि तुम्हें क्या हुआ है ?

श्यामलाल : कुछ नहीं। मैं अब जा रहा हूँ। नीली आये, तो कह देना कि वह कुछ चिन्ता न करे। देवीसिंह उसका कुछ न बिगाड़ सकेगा। उसका विवाह देवीसिंहसे नहीं, मुझसे होगा।

रत्नी : भैया।

श्यामलाल : मैं आवेशमें नहीं हूँ, रत्नी।

रत्नी : [हँसती है] आप आवेशमें हैं, लेकिन कोई डर नहीं। इस समय उसकी ज़रूरत भी है।

श्यामलाल : रत्नी ! तुम बड़ी शरारती हो।

रत्नी : तुम्हारी लाडली छोटी बहन हूँ न। लेकिन छोड़िए इन बातोंको और याद रखिए देवीसिंह नीलीका ही रहस्य नहीं

जानता, आपके रहस्य भी जानता है !

श्यामलाल : कोई चिन्ता नहीं, मैं अपनी रक्षा करना जानता हूँ।
[दूर जाते शब्द । क्षणिक शान्तिके बाद रत्नी बोल उठती है]

रत्नी : [स्वगत] मैं अपनी रक्षा करना जानता हूँ ! [हँसती है]
मैं अपनी रक्षा करना जानता हूँ । समझमें नहीं आता, भैया, इतने दिन दुनियाको कैसे ठगते रहे ? कौन-सा पाप इन्होंने नहीं किया और फिर अचानक कैसे सब-कुछ छोड़कर भले आदमी बननेकी ठान ली । इनकी माँ कितनी भयंकर थी ? जबतक जीती रही, अपने भोले-भाले पतिको उल्लू बनाती रही । वही गुण इनमें आये । पर उस दिन जब मैं उन्हें उत्तराखण्डकी यात्रापर खींच ले गयी···

[फ्लैश-बैक : भूतकालमें रत्नी व श्यामलाल]

श्यामलाल : रत्नी, तू मुझे कहाँ खींच लायी ? मेरा धर्मसे भला क्या वास्ता ?

रत्नी : भैया ! मुझसे उड़ो मत । उत्तराखण्डमें तुम धर्मके लिए नहीं आये । तुम आये हो हिमालयके इस निर्जन एकान्तमें अपने अड्डे बनाने, तस्कर-व्यापारका प्रबन्ध करने ।

श्यामलाल : [हँसकर] तुम सब-कुछ जानती हो, रत्नी !

रत्नी : जानती हूँ, तभी तो तुम्हें यहाँ लायी हूँ । शायद हिमालयकी यह गरिमा, प्रकृतिका यह सौन्दर्य, तुम्हें माँके मार्गसे हटाकर पिताके मार्गपर डाल सकें ।

श्यामलाल : रत्नी ।

रत्नी : तुम्हें पिताजीकी बिलकुल याद नहीं ।

श्यामलाल : [भावावेशमें] क्यों नहीं है, रत्नी ? वे बहुत भले थे, बहुत भले । [एकदम बदलकर] पर भले आदमी

जीना नहीं जानते। मैं जीना चाहता हूँ, उम्र पूरी करना नहीं।

रत्नी : [व्यंग्यसे] और जीनेके लिए जैसे तस्कर-व्यापारसे बढ़कर और कोई साधन ही नहीं है !

श्यामलाल : रत्नी, जिस बारेमें तुम्हें कुछ पता नहीं, उस बारेमें मत बोला करो।

रत्नी : अच्छा भैया, नहीं बोलूँगी। लेकिन ज़रा देखकर चलो। आगेका मार्ग काफ़ी ऊबड़-खाबड़ है।

श्यामलाल : सोचता हूँ, शंकराचार्यको पुस्तकें लिखनेके लिए क्या यही भयानक प्रदेश मिला था।

रत्नी : इस भयानक प्रदेशमें आपको क्या कुछ भी सौन्दर्य नहीं दिखाई देता ?

श्यामलाल : [खोया-सा] सौन्दर्य !

रत्नी : क्या तुम्हारा मन इन दृश्योंको देखनेको नहीं करता ?

श्यामलाल : वह तो करता है।

रत्नी : सच।

श्यामलाल : हाँ रत्नी, कभी-कभी तो ऐसा जी करता है कि जैसे जीवन-भर यहीं घूमता रहूँ। इन अगम्य चोटियोंपर चढ़ता रहूँ।

रत्नी : [हँसकर] और अभी आप शंकराचार्यको दोष दे रहे थे। अजी यही तो सौन्दर्य है।

श्यामलाल : [खोया-सा] यही सौन्दर्य है, तब तो···लो हम आ गये।

रत्नी : [प्रसन्न] यह मन्दिर है और वह रहा कीमूका वृक्ष।

श्यामलाल : क्या इसीके नीचे बैठकर शंकराचार्यने अपने ग्रन्थ लिखे थे।

रत्नी : हाँ भैया।

श्यामलाल : रत्नी, मैं यहीं बैठता हूँ, तू ऊपर हो आ।

रत्नी : नहीं भैया, तुम भी चलो। देखो तो, वहाँ कितने सुन्दर फूल खिले हैं। चलो, भैया उठो।

श्यामलाल : अच्छा रत्नी, चल, तेरी बात कैसे टाल सकता हूँ ? लेकिन रत्नी, तेरी सभी बातें मैं क्यों मान लेता हूँ।

रत्नी : इसलिए कि मैं तुम्हारी छोटी बहन हूँ।

श्यामलाल : नहीं।

रत्नी : मेरी माँ तुम्हें बहुत प्यार करती थी। मरते समय मुझे तुम्हारी गोदीमें डाल गयी थी।

श्यामलाल : नहीं।

रत्नी : तो फिर तुम्हीं जानते होगे।

श्यामलाल : जानता तो मैं भी नहीं, पर कभी-कभी ऐसा लगता है कि···

रत्नी : [उत्सुकतासे] कैसा लगता है ?

श्यामलाल : जैसे कि तुम मुझे वह काम करनेको कहती हो, जो मैं नहीं चाहता और अधिकारसे कहती हो। मैं चाहता हूँ कि कोई मुझे अधिकारसे कुछ कह सके, कुछ करवा सके। ये पहाड़, ये निर्झर, ये भी तो अधिकारके साथ कुछ करनेको कह रहे हैं।

रत्नी : [मुग्ध] क्या कह रहे हैं ?

श्यामलाल : क्या कह रहे हैं। मैं इनकी भाषा सुन तो नहीं पाता, पर हृदयमें अनुभव कर रहा हूँ जैसे···अरे यह क्या लिखा है ?

रत्नी : [पढ़ती हुई] यहाँ किसी प्रकारका चढ़ावा नहीं चढ़ता, भेंट-पूजा नहीं होती, केवल कोई दुर्गुण छोड़नेकी प्रतिज्ञा की जाती है।

श्यामलाल : [एकदम] कोई दुर्गुण छोड़नेकी प्रतिज्ञा की जाती है।

रत्नी : बड़ी अद्भुत बात है।

श्यामलाल : सचमुच बड़ी अद्‌भुत बात है। और कहीं तो ऐसा नहीं होता !

रत्नी : ना और कहीं ऐसा नहीं होता।

श्यामलाल : [मौन रहता है]

रत्नी : भैया, मुझमें तो एक ही दुर्गुण बहुत ख़राब है कि जब देखो तुम्हें परेशान करती रहती हूँ। अब···

श्यामलाल : न, न, ऐसी प्रतिज्ञा न करना। यह दुर्गुण नहीं है। तुम परेशान नहीं करोगी, तो मैं सदाके लिए पक्का गुण्डा बन जाऊँगा।····रत्नी क्यों न मैं···क्यों न मैं यह प्रतिज्ञा कर लूँ कि आजसे तस्कर-व्यापार, ठगी सब छोड़ता हूँ।

रत्नी : [चीख़कर] भैया···

श्यामलाल : हाँ रत्नी, मुझे ऐसा ही लग रहा है। ऐसा ही लग रहा है। ये पहाड़, ये निर्झर, ये सब मुझे यही कहते जान पड़ते हैं।

[फ्लेश-बैक समाप्त]

रत्नी : और उस दिन अचानक उन्होंने सब कुछ छोड़ देनेकी प्रतिज्ञा कर डाली। समझी थी कि सब आवेश है, पर वह तो सच निकला। अन्तमें पिता शक्तिशाली सिद्ध हुए। भैया, साथियोंसे छुट्टी ले आये और फिर आ गयी मेरी सखी नीली। वह जैसे उनकी नयी राहकी शक्ति बन गयी। पर आज उसने जो रहस्य खोला···

[सहसा पुरुषोत्तमका प्रवेश]

पुरुषोत्तम : श्यामलाल। श्यामलाल [रत्नीको देखकर] ओह आप हैं !

रत्नी : [काँपकर] आप ! आप कैसे आये ?

पुरुषोत्तम : [हँसकर] क्यों, क्या पुराने मित्रोंके पास आना मना है ?

रत्नी : आप भैयाको अब भी मित्र मानते हैं ?

पुरुषोत्तम : हम लोग खोटे हैं, पर हमारी मित्रता खोटी नहीं है।

रत्नी : [हँसकर] हाँ; जलमें रहकर जैसे कमल-पत्र नहीं भीगता, वैसे ही आपकी मित्रता आपके नापाक शरीरमें रहकर भी नापाक नहीं होती। लेकिन क्या आपकी मित्रता आपको भैयासे मिलनेकी आज्ञा देती है ?

पुरुषोत्तम : तुम्हारा मतलब समझता हूँ और तुम विश्वास नहीं करोगी कि हमें भी कितना पछतावा होता है। न जाने भगवान् हमें हमारे पापोंका क्या दण्ड देंगे ? पर क्या करें मुँह लगा खून छूटता ही नहीं।

रत्नी : आप इतना जानते हैं ! फिर भी...

पुरुषोत्तम : छोड़ो इन बातोंको। बताओ, श्यामलाल कहाँ है ?

रत्नी : [एकदम] आप उनसे न मिलें।

पुरुषोत्तम : क्यों ?

रत्नी : क्योंका जवाब आप जानते हैं।

पुरुषोत्तम : तो आप हमें इतना नीच समझती हैं कि हमारे मिलनेसे तुम्हारे भैयाका पतन हो जायेगा। अगर वह ऐसा दुर्बल है, तो उसका पतन हो ही जाना चाहिए।

रत्नी : क्या ?

पुरुषोत्तम : हाँ, दुर्बलको जीनेका अधिकार नहीं है।

रत्नी : तो तुम कैसे जी रहे हो ? तुम तो उनसे भी दुर्बल हो। छिपकर काम करनेवाला सबसे दुर्बल होता है।

पुरुषोत्तम : हम जीनेका दावा ही कब करते हैं ? हम तो साँसें पूरी कर रहे हैं। सभी ऐसा करते हैं। क्या कोई भी शरीफ़ और ईमानदार माना जानेवाला आदमी विश्वाससे कह सकता है कि वह वही है, जो दिखाई देता है।

रत्नी : आप दूसरोंकी चिन्ता क्यों करते हैं, अपनी कहिए। आप भैयासे नहीं मिल सकते। [एकदम टूटकर] नहीं, नहीं, आप उनसे मिलनेकी कोशिश मत कीजिए। जाइए…

पुरुषोत्तम : आज जा सकता हूँ, पर कल…

रत्नी : नहीं, नहीं कल भी न आइए, कभी न आइए।

पुरुषोत्तम : [शरारतसे] यह कैसे हो सकता है ? आप…

रत्नी : [याचनाका स्वर] मैं हाथ जोड़ती हूँ, आप चले जायें। जाइए। जाइए।

पुरुषोत्तम : [पीछे हटता हुआ] जाता हूँ। जा रहा हूँ, पर…पर [कुछ दूर हटकर] काश कि मेरे भी कोई बहन होती, ऐसी बहन। [ज़ोरसे] लेकिन मैं वापस आऊँगा। मैं श्यामलालको नहीं छोड़ूँगा। उसे फिर हमारे साथ आना होगा, नहीं तो [हँसता है] मैं अभी देवीसिंहको देखता हूँ। [जाता है]

रत्नी : [निःश्वास] मैं अब क्या करूँ ? कैसे भैयाको इससे मिलनेसे रोकूँ ? आदमीने अपनेको क्या बना लिया। ज्ञान जितना बढ़ रहा है, उतना ही वह गिर रहा है। प्रकाश उसे अन्धकारमें जानेका ही मार्ग दिखा रहा है। अब किसे देखूँ ?…क्या यह कुछ रुपये लेकर चुप हो जायेगा ? वह ज़रूर चुप हो जायेगा। ज़रूर, तो जाऊँ, देखूँ…

[अन्तराल]

[तेज़ीसे नीलीका प्रवेश]

नीली : [हाँफती-काँपती] जीजी, जीजी

रत्नी : कौन ! नीली, क्या हुआ ? क्या बात है ? अरे, तू सफ़ेद क्यों पड़ रही है ? क्या हुआ तुझे ?

नीली : [पूर्ववत्] जीजी ! जीजी !!

रत्नी : [गोदमें भरकर] न-न नीली, काँप मत । नीली ! नीली रानी !!

नीली : वह····व····व····

रत्नी : नीली ! नीली !! अरे, यह तो बेहोश होने लगी ! नीली, नीली, आँख खोल, नीली····ई····ई····

नीली : जी ज ज जी जी···जी····

रत्नी : हाँ, हाँ, अरे मैं ही हूँ । तुझे यह क्या हुआ नीली ! ले पानी पी, होश कर, ले [पानी पीती है, उठती है] हाँ, अब बता क्या हुआ ?

नीली : [काँपते हुए] जी जी···उन्होंने···

रत्नी : श्यामू भैयाने ।

नीली : हाँ, जीजी उन्होंने मार डाला ।

रत्नी : मार डाला, किसे ? तू कह क्या रही है ?

नीली : जीजी, उन्होंने देवीसिंहको मार डाला । बाँधकी नहरमें डुबो दिया ।

रत्नी : हाय राम, डुबो दिया ! देवीसिंहको, कैसे ?

नीली : मैं तुम्हारे पाससे गयी, तो देवीसिंह राह देख रहा था । उसने मुझे बाँधपर आनेको कहा । मैं डर गयी, पर तभी वह मिल गये । मैंने उनसे कहा ।

रत्नी : फिर ।

नीली : वह तो जैसे तैयार थे । तुरन्त मुझे लेकर बाँधपर पहुँचे । वहाँ वह अकेला था । उन्होंने मुझे उसके पास जानेको कहा ।

रत्नी : फिर, फिर क्या हुआ ?

नीली : मैं डरते-डरते उसके पास गयी। वह बड़ा खुश हुआ और मुझे लेकर नावकी तरफ़ चला। हम किनारे-किनारे चल रहे थे। बातें कर रहे थे कि तभी पीछेसे आकर उन्होंने उसे नहरमें धक्का दे दिया। वह तैरना नहीं जानता था।

रत्नी : फिर ! फिर !!

नीली : फिर वह चिल्लाया। वह भी चिल्लाये। पानीमें कूदे भी, पर दो-चार लोग जो वहाँ आये, उन्होंने उन्हें पकड़ लिया। तबतक वह बह गया था। पता ही नहीं लगा [काँपकर] जीजी ! जीजी !!

रत्नी : [एकाएक गम्भीर होकर] तो जो भय था वही हुआ। देवीसिंह बह गया। देवीसिंहके साथ रत्नीका रहस्य भी बह गया पर भैया बाज़ी हार गये। भैया बाज़ी हार गये‥‥ ओह, भैया आ रहे हैं‥‥भैया [दूर जाते शब्द]

[श्यामलालका प्रवेश]

रत्नी : [पास आकर काँपती हुई] कौन ? भैया।

श्यामलाल : हाँ रत्नी। नीली क्या यहाँ आयी है ?

रत्नी : हाँ यहीं है। बड़ी परेशान है।

श्यामलाल : अब उसे कोई डर नहीं रहा। देवीसिंह डूब गया बेचारा ?

रत्नी : [काँपकर ज़ोरसे] भैया !

श्यामलाल : रत्नी !

रत्नी : यह तुमने क्या किया ?

श्यामलाल : मैंने कुछ नहीं किया। उसका पैर फिसल गया और वह गिर पड़ा।

रत्नी : भैया !

श्यामलाल : मैं ठीक कहता हूँ। यह उसका पाप था, जो सर चढ़कर बोला।

रत्नी : भैया, भैया ! तर्क मत करो। तुम बाजी हार गये।

श्यामलाल : मैं बाज़ी हार गया। नहीं, नहीं, वह दुष्ट था, गुण्डा था, एक स्त्रीकी ज़िन्दगी बरबाद करनेपर तुला था। उसे मारकर मैं बाज़ी नहीं हारा, और···और हारा भी तो···

रत्नी : तो···

श्यामलाल : तो अपने लिए नहीं, किसी दूसरेके लिए।

रत्नी : [काँपकर] भैया ! लेकिन अब आप दूसरेकी चिन्ता छोड़कर अपनी चिन्ता कीजिए। आज पुरुषोत्तम आया था।

श्यामलाल : [चकित] पुरुषोत्तम ?

रत्नी : हाँ !

श्यामलाल : कुछ कहता था।

रत्नी : आपके बिना उन लोगोंका काम ठप्प हो रहा है। आपको वापिस चाहते हैं।

श्यामलाल : मुझे वापिस चाहते हैं ? मुझे···नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता, यह नहीं हो सकता [दूर जाता है]
[अन्तराल संगीत]

नीली : नहीं, नहीं, मेरा यह मतलब नहीं।

रत्नी : फिर, फिर क्या मतलब है ?

नीली : जीजी, मैं तुमसे क्या कहूँ, मुझे डर लगता है।

रत्नी : [हँसकर] किससे डर लगता है, श्यामू भैयासे ?

नीली : नहीं, नहीं, उनसे क्यों डरती, पर····पर····

रत्नी : पर···

नीली : पर जब वह पास होते हैं तो मैं काँपती रहती हूँ। उनकी ओर देख नहीं पाती।

रवी : क्यों नहीं देख पाती ?

नीली : पता नहीं। मैं खुद परेशान हूँ।

रवी : तुम खुद परेशान हो ? तुम झूठ बोल रही हो, नीली। तुम श्यामू भैयासे डरती हो। तुम्हारे लिए उन्होंने बाज़ी हारी, अपने प्राणोंको संकटमें डाला और तुम उन्हींसे डरती हो....

नीली : [रो पड़ती है,] जीजी, जीजी, मैं क्या करूँ ? मैं बहुत दुखी हूँ।

रवी : जिसने तुझे बचाया उसीसे डरकर बता तू सुखी होनेकी आशा करती है ?

नीली : यह तो मैं भी जानती हूँ।

रवी : लेकिन जानना ही तो काफ़ी नहीं। भैयाको तेरी ज़रूरत है। तू नहीं जानती एक दिन वह तस्कर-व्यापारके एक बड़े अड्डेके मालिक थे।

नीली : [चकित] तस्कर-व्यापारके एक बड़े अड्डेके मालिक थे ?

रवी : हाँ, हजारों रुपये कमाते थे लेकिन उन्होंने सब कुछ छोड़ दिया। सब कुछ त्याग दिया। वह अब एक सच्चा और शरीफ़ इनसान बनना चाहते हैं।

नीली : [पूर्ववत् खोयी-खोयी-सी] अब एक सच्चा और शरीफ़ इनसान बनना चाहते हैं ?

रवी : हाँ, अब तू ही उन्हें उठा या गिरा सकती है। उनका जीवन तेरे हाथोंमें है नीली।

नीली : मेरे हाथोंमें ! जीजी, मैं तो स्वयं किसीका सहारा ढूँढ़ती हूँ।

रवी : [निश्चल] यह तो और भी अच्छा है। तुम दोनों एक दूसरेका सहारा बन सकते हो।

नीली : [पूर्ववत्] हम दोनों एक दूसरेका सहारा बन सकते हैं। हाँ, जीजी, तुम ठीक कहती हो। मैं भी यही चाहती हूँ! उनका मुझपर कितना बड़ा उपकार है। और मैं यह भी जानती हूँ कि वह मुझे प्यार करते हैं, पर····

रवी : पर···

नीली : पर मैं अपने स्वभावको क्या करूँ। उनके पीछे मैं उनकी पूजा करती हूँ, पर सामने जाते ही अपनेसे हार जाती हूँ।

रवी : [एकदम] अपनेसे हार जाती है, यह कैसी दुर्बलता है। नहीं, नहीं, यह झूठ है। तू उन्हें अपराधी समझती है, हत्यारा समझती है।

नीली : [काँपकर] जीजी।

रवी : [पूर्ववत्] लेकिन तू भूल जाती है कि तू भी तो पापिन है?

नीली : [बुरी तरह काँपकर] जीजो, जीजो! इतनी निर्दय न बनो। मेरी मदद करो। मैं जानती हूँ, मैं पापिन हूँ, पर इससे···पर इससे····

रवी : नीली!

नीली : [पूर्ववत् तेज़ीसे] पर इससे उनकी हत्याका दोष तो नहीं धुल जाता। मुझे ऐसा लगता है जैसे वह, जैसे वह····

रवी : जैसे वह····

नीली : जैसे वह मुझे भी धक्का दे देंगे। मुझे भी डुबो देंगे।
[पसीना-पसीना हो जाती है]

रवी : नीली, नीली! यह तूने क्या कहा?

नीली : ओह, मैं क्या कह गयी [रोती हुई भागती है] मैं क्या कह गयी । ओह...

रत्नी : नीली ! नीली !! ओह नीली, यह किस रहस्यका उद्घाटन कर गयी ? क्या कह गयी ? भैया सुनेंगे तो क्या कहेंगे ? इसीके लिए भैयाने बाजी हारी और यही उन्हें हत्यारा समझती है [श्यामलालका प्रवेश] भैया...

श्यामलाल : [प्यारसे] रत्नी !

रत्नी : [काँपकर] भैया !

[क्षणिक सन्नाटा]

श्यामलाल : रत्नी ! उस दिन पुरुषोत्तम आया था, तो तुमने उससे क्या कहा था ?

रत्नी : मैंने ?

श्यामलाल : हाँ, तुमने उससे कुछ तो कहा ही होगा ।

रत्नी : मैंने कहा था कि वह तुमसे न मिले ।

श्यामलाल : और वह मान गया था ।

रत्नी : तब तो उसने मुझसे यही वादा किया था ।

श्यामलाल : किसी शर्तपर किया होगा ।

रत्नी : शर्त !

श्यामलाल : हाँ, उसने तुमसे उस वादेके लिए क्या पाया ?

रत्नी : भैया !

श्यामलाल : जवाब दो रत्नी !

रत्नी : जब तुम जान ही गये हो, तो जवाब क्यों माँगते हो ?

श्यामलाल : इसलिए कि क्या तुम भी शैतानको रिश्वत देनेमें विश्वास करती हो ? तुम भी भलाईको रुपयोंसे खरीदना चाहती हो ?

रत्नी : भैया ! और मैं करती क्या ?

श्यामलाल : करनेको बहुत-कुछ था। जो तुमने किया उससे बेहतर तो गोली मार देना था। सोचो तो, कब तक उसे रुपये देती रहोगी। आज फिर उसका पत्र आया है।

रत्नी : उसका पत्र आया है? रुपया माँगा है?

श्यामलाल : हाँ, रुपया माँगा है और मैंने लिख दिया है कि वह कुछ भी करनेको स्वतन्त्र है, पर उसे रुपया नहीं मिलेगा।

रत्नी : भैया!

श्यामलाल : हाँ, [क्षणिक मौन] तुम अब उसकी चिन्ता मत करो। लेकिन हाँ,...नीली क्या कहती है?

रत्नी : [मौन]

श्यामलाल : बोलो! तुमने उससे पूछा। मुझसे तो वह बोलती ही नहीं, काँपती रहती है।

रत्नी : वह आपसे डरती है।

श्यामलाल : डरती है, क्यों?

रत्नी : क्योंकि आपने देवीसिंहकी हत्या की, आप हत्यारे हैं।

श्यामलाल : [काँपकर] रत्नी।

रत्नी : हाँ, भैया।

श्यामलाल : क्या सचमुच नीली मुझे हत्यारा समझती है!

रत्नी : हाँ भैया।

श्यामलाल : [मौन]

रत्नी : भैया, भैया! क्या बात है?

श्यामलाल : कुछ नहीं रत्नी, कुछ नहीं।

रत्नी : कुछ नहीं कैसे? आपका मुँह एकाएक सफ़ेद हो गया। आपका शरीर काँप रहा है। आपकी मुट्ठियाँ भिच रही हैं।

श्यामलाल : [एकदम] चुप रहो, रत्नी!

रत्नी : भैया ! बहुत अच्छा हो कि आपका यह क्रोध मुझपर ही निकल जाये ! भैया !! [याचनासे] भैया !

श्यामलाल : रत्नी, रत्नी, तुम चली जाओ। मुझे गुस्सा न दिलाओ। मैं कुछ कर बैठूंगा। मैं नीलीको जानसे मार दूँगा।

रत्नी : भइया ! तुम्हारे दर्दको समझती हूँ ! नीलीको भी समझती हूँ। वह दुर्बल है, पर आप उससे भी बढ़कर दुर्बल हैं।

श्यामलाल : रत्नी !

रत्नी : हाँ, दुर्बल न होते तो उसे मारनेकी बात कैसे सोचते।

श्यामलाल : ओह, ओह रत्नी। तुम्हारा यह ज्ञान, तुम्हारा यह दर्शन, इसने ही तो मुझे भूल-भुलैयामें फंसाया है। यह मृगतृष्णा है।

रत्नी : इस मृगतृष्णासे बचनेका तो एक ही उपाय है, मेरी हत्या।

श्यामलाल : रत्नी, बकवास बन्द करो। तुमने समझा क्या है ? तुम्हें इस प्रकार बार-बार मेरा अपमान करनेका क्या अधिकार है ?

रत्नी : अपना अपमान आदमी अपने-आप करता है। दूसरेमें यह शक्ति नहीं है।

श्यामलाल : तो दूसरा जैसे उसका उद्धार करता है। उसे राह दिखाता है।

रत्नी : दूसरा किसीके लिए कुछ नहीं करता। अपनेको बनाना या बिगाड़ना यह सब आदमीके अपने हाथमें है।

श्यामलाल : रत्नी, बन्द कर यह ज्ञान ! बन्द कर यह बुद्धिकी कसरत। कहीं मैं पागल न हो जाऊँ। कहीं मेरे हाथ···

[सहसा पुकार आती है]

हरीश : श्री श्यामलालजी, श्यामलालजी।

रत्नी : [मौन]

श्यामलाल : [मौन]
हरीश : श्यामलालजी, अजी श्यामलालजी ।
रत्नी : भैया, तुम्हें कोई पुकार रहा है ।
श्यामलाल : पुकारने दो ।
हरीश : श्यामलालजी ।
रत्नी : नहीं, नहीं, भैया ! देखो तो कौन है । मैं अन्दर जाती हूँ । जाओ, मेरे अच्छे भैया ! जाओ ।
हरीश : श्यामलालजी ।
श्यामलाल : ओह, ओह [पुकारकर] कौन है ? चले आओ ।
रत्नी : मैं पास ही हूँ । कुछ चाहिए तो पुकार लेना [जाती है]
[हरीशका प्रवेश]
हरीश : नमस्ते भाई साहब !
श्याम : नमस्ते भाई । बैठो, इधर आरामसे बैठो ।
हरीश : जी हाँ बैठता हूँ ।
श्याम : कहिए मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?
हरीश : जी, मैं एक बहुत आवश्यक और निजी कामसे आया हूँ ।
श्याम : मुझसे काम है ?
हरीश : जी !
श्याम : तो निस्संकोच कहिए ।
हरीश : बात यह है जी···कोई है तो नहीं यहाँ ?
श्याम : मेरी बहन है, पर अन्दर है ।
हरीश : जी, बात यह है सब लोग आपकी बड़ी प्रशंसा करते हैं । आप कभी झूठ नहीं बोलते ।
श्याम : आपका काम क्या है ?
हरीश : जी वही कहता हूँ ।
श्याम : कहिए ।

हरीश : आप नीलीको तो जानते हैं।

श्याम : [चकित] नीली !

हरीश : हाँ, हाँ, आप उसे जानते हैं।

श्याम : आपका उससे क्या सम्बन्ध है ?

हरीश : जी, बात यह है कि उसके विवाहकी बात मुझसे चल रही है।

श्याम : [ठगा-सा] ऐं···क्या कहा आपने ?

रत्नी : [अन्दरसे, ज़ोरसे] भइया ! चाय भिजवाऊँ।

हरीश : आपकी तबीयत खराब है शायद।

श्याम : जी हाँ, ऐसे ही कुछ। [ज़ोरसे] चाय भेज दो रत्नी। मेरी बहनको मेरा बड़ा खयाल रहता है।

हरीश : बहनसे बढ़कर भाईको और कौन प्यार करेगा ?

श्याम : आप क्या कह रहे थे ?

हरीश : नीलीके विवाहकी बात मुझसे चल रही है। मैं उससे मिल भी चुका हूँ।

श्याम : किससे मिल चुके हैं आप ?

हरीश : नीलीसे। उसने इस सम्बन्धके बारेमें कोई आपत्ति नहीं की। मुझे भी कोई आपत्ति नहीं है।

श्याम : किसे कोई आपत्ति नहीं है ?

हरीश : नीलीको।

श्याम : ओह, पर आपको विश्वास है ?

हरीश : मैंने स्वयं पूछा था।

रत्नी : [आकर] चाय लो भैया।

श्याम : चाय, [हँसकर] रख दो।

रत्नी : [जाते-जाते] और कुछ चाहिए तो माँग लेना [प्यालीकी खड़-खड़]

हरीश : जी विश्वासका कोई सवाल ही नहीं है। रिश्ता निश्चित है, पर इधर....

श्याम : पर इधर...इधर क्या ?

हरीश : आपकी तबीयत बहुत खराब है। आप आराम करें। फिर आऊँगा।

श्याम : नहीं, नहीं। मैं ठीक हूँ। आप कहिए।

हरीश : कहूँ !

श्याम : जी हाँ, निश्चिन्त होकर कहो।

हरीश : जी, बात यह है, इधर मैंने सुना है कि उसका देवीसिंहसे सम्बन्ध रहा है। और आप जानते हैं कि देवीसिंह बड़ा बदमाश था।

श्याम : [प्याला ठकसे रखकर] एकदम झूठ। नीलीका देवीसिंह-से कोई सम्बन्ध नहीं था। उसका सम्बन्ध अगर था...

रत्नी : [आकर] भैया ! इनसे कह दो कि नीली मेरी सहेली है। वह सुशील और चरित्रवान लड़की है।

श्याम : जी, जी हाँ, वह बहुत सुशील है। बस कुछ दुर्बल है।

रत्नी : नारीका दूसरा नाम अबला है।

हरीश : जी हाँ, मुझे भी वह बड़ी घबड़ायी-सी लगी। कोई बात ठीक-ठीक नहीं कहती। कभी कहती है—शादी जल्दी होनी चाहिए, कभी कहती है—अभी नहीं, अभी रुको। पर वह तो...[हँसता है] सब ठीक हो जायेगा [क्षणिक सन्नाटा] अच्छा नमस्ते। आपको बहुत कष्ट दिया।

रत्नी : इसमें कष्ट क्या....

हरीश : जी हाँ, कष्ट क्या, मेरी शंका दूर हो गयी। नमस्ते ! नमस्ते !! [जाता है। फिर लौटता है] जी किसीसे कहियेगा नहीं कि मैं...

रत्नी : नहीं, नहीं, यह भी कोई कहनेकी बात है।
[क्षणिक सन्नाटा]

श्याम : तो नीली इससे शादी करेगी। बातचीत हो चुकी है। उसे कोई आपत्ति नहीं है। आपत्ति···आपत्ति····आपत्ति [आवेश बढ़ता है] नीलीको कोई आपत्ति नहीं है। नीलीको····

रत्नी : भैया !

श्याम : रत्नो, मेरा रिवाल्वर कहाँ है ?

रत्नी : भैया ! यह क्या हो गया ? मुझे उससे यह आशा नहीं थी।

श्याम : [तेज़] रत्नी, मेरा रिवाल्वर कहाँ है ?

रत्नी : भैया, मै आपकी पीड़ा समझती हूँ पर···

श्याम : [और तेज़] रत्नो, मैं पूछता हूँ कि मेरा रिवाल्वर कहाँ है। मैं उसे अभी चाहता हूँ।

रत्नी : भैया !

श्याम : [चीख़कर] भैया, भैया, मैं पूछता हूँ कि मेरा रिवाल्वर कहाँ है ?

रत्नी : भैया, मैं उसे बुलाती हूँ। मैं खुद जाती हूँ। मैं उससे पूछूँगी····

श्याम : उससे पूछोगी ? उससे पूछनेकी ज़रूरत नहीं। नहीं, मैं खुद उसके पास जाऊँगा और उसे गोली मार दूँगा।

रत्नी : नहीं, नहीं, भैया।

श्याम : [विक्षिप्त-सा] नहीं, नहींकी बच्ची। उधर हट ! बहुत सुन लिये तेरे उपदेश। तूने मुझे दूध पीता बच्चा समझ लिया है। हमेशा हुक्म चलाती है।

रत्नी : [पीछे-पीछे] भैया, नहीं; नहीं, आप नहीं जायेंगे। भैया, भैया, ओह मैं क्या करूँ। मैं क्या करूँ ? भैया ! भैया····

[दूर जाते स्वर, क्षणिक सन्नाटा, फिर पास आते स्वर]
लो, यह रहा रिवाल्वर। पर इसे बाहर ले जानेसे पहले मुझे इसका निशाना बनाना होगा।

श्याम : [कठोर] रत्नी !

रत्नी : [दृढ़ स्वर] मैं ठीक कहती हूँ। मेरे जीते-जी आप इसे लेकर बाहर नहीं जा सकते।

श्याम : रत्नी, यह न समझो कि मैं तुम्हें नहीं मार सकता। मैं तुम्हें भी मारूँगा। नीलीको भी और अपनेको भी।

रत्नी : तो फिर शुरू करो, मैं तैयार हूँ।

श्याम : लेकिन पहले मैं उसको मारूँगा, जो तैयार नहीं है। जो कायर है, जो विश्वासघाती है, जो [एक दम दूर जाता है] ओह रत्नी, रत्नी ! नीलीने यह क्या किया ?

रत्नी : भैया, मनुष्य कब क्या करेगा कौन कह सकता है। तुम भी प्रतिज्ञा करनेके बावजूद उसे मारनेको तैयार हो गये।

श्याम : रत्नी ! तुम नहीं जानती, तुम नहीं जानती, मैं नीलीको कितना चाहता हूँ ? नीलीके बिना मैं कैसे रह सकता हूँ ? उसको पानेके लिए मैंने प्रतिज्ञा भंग की और वह····वह···· नहीं, नहीं, यह झूठ है, झूठ है।

रत्नी : काश कि यह झूठ होता, पर मैं जानती हूँ यह सच है। नीली आपसे प्रेम नहीं करती।

श्याम : [तेज़] कैसे नहीं करती। उसे करना होगा। नहीं तो····
[कोई श्यामलालको पुकारता है]

पुरुषोत्तम : श्यामलालजी, अजी श्यामलालजी।

रत्नी : कौन, पुरुषोत्तम।

श्याम : पुरुषोत्तम ! तो आने दो पहले उसीसे निबटूँगा।

रत्नी : भैया !

शैला : श्यामलालजी ! श्यामलालजी !

श्याम : यह कौन ?

रत्नी : शैला ।

श्याम : ओह, शैला है । रत्नी उन्हें आने दो । ज़रा यहाँ ठीक कर दो और हाँ चाय ! और तुम यहाँ मत आना । [पुकारकर] आ जाओ पुरुषोत्तम, आ जाओ ।

[पुरुषोत्तम और शैलाका प्रवेश]

पुरुषोत्तम : हैलो श्याम, कैसे हो ?

शैला : नमस्ते ।

श्याम : हैलो पुरुषोत्तम, हैलो शैला । कहो किधर भूल पड़े ।

शैला : यह भी हमसे पूछते हो । हमको नरकमें छोड़कर तुम तो स्वर्गको ऐसे भागे कि···

श्याम : [एकदम] काहेका स्वर्ग ? धरतीपर तो नरक-ही-नरक है ।

पुरुषोत्तम : तो आपकी समझमें आ गया । देरसे सही, आया तो ।

शैला : देरसे आना अच्छा होता है । देर आयद दुरुस्त आयद ।

श्याम : [हँसता] चाय पियोगे न ?

शैला : आप पिलायें और हम मना करें ।

श्याम : [ख़ूब हँसता है] इस क़द्रदानीके लिए धन्यवाद [पुकारकर] रत्नो हम चाय पियेंगे ।

रत्नी : [आकर] आपने अभी चाय पी थी । आपकी तबियत खराब है सो···

पुरुषोत्तम
शैला } —[एकदम] नमस्कार ।

रत्नी : नमस्ते

श्याम : तबीयत तो ठीक हो ही जायेगी, रत्नी ! पर पुराने मित्र कब-कब आते हैं । खाने-पीनेके लिए भी भेजना न भूलना।

रत्नी : अच्छा भइया ।

पुरुषोत्तम : इस बारेमें रत्नी बहनको भी कुछ बताना होगा क्या ?

शैला : इनको हमने न जाने कितने कष्ट दिये हैं ।

रत्नी : मैं चाय बनाती हूँ तब तक उनकी सूची बना लो । आज भुगतान होगा । [सब हँस पड़ते हैं ।]

श्याम : कहिए कैसे आना हुआ ?

शैला : कैसे क्या, श्याम । पुरुषोत्तम बहुत लज्जित है । उसने जो कुछ किया तुम्हें वापिस बुलानेके लिए किया । वह तुम्हें चाहता है ।

पुरुषोत्तम : हाँ श्याम ! मैं तुम्हें चाहता हूँ । मैं प्रार्थना करता हूँ कि तुम लौट चलो । सब काम ठप्प हो गया है । सब कुछ बिगड़ गया है ।

शैला : तुम्हारी प्रतिभा ही उसकी शक्ति थी । तुम यहाँ क्या कर रहे हो ? मेरा तो वहाँ दम घुटता है । पर…

पुरुषोत्तम : श्याम, एक बार, केवल एक बार फिर मेरी मदद करो ।

शैला : श्याम, तुमने मना कर दिया तो हम कहींके न रहेंगे । तुम मना तो नहीं कर रहे न । कहो, तुम चलोगे ।

पुरुषोत्तम : श्याम बोलो, तुम क्या सोच रहे हो ? मुझे क्षमा कर दो ! रत्नीने जो रुपया दिया था सब ले आया हूँ । मैं रुपया नहीं चाहता । मैं तुम्हें चाहता हूँ ।

शैला : तुम नहीं चलोगे तो….

श्याम : तो के आगे कहनेकी जरूरत नहीं । मैं आपके साथ चलूंगा, कल आइयेगा ।

शैला : [चीखकर] श्याम !

पुरुषोत्तम : [चीख़कर] क्या कहा तुमने ? तुम चलोगे।

श्याम : हाँ !

पुरुषोत्तम : यानी तुम चलोगे, यानी तुम हमारे साथ काम करोगे।

शैला : सच श्याम ! तुम मज़ाक़ तो नहीं कर रहे।

श्याम : [हँसकर] तुमसे मज़ाक़ करूँगा। शैला, मैं स्वयं बहुत दुःखी हो उठा था। ज़रा भी शान्ति नहीं मिलती थी। खासकर तुम्हारी तो बहुत ही याद आती थी।

शैला : ओह श्याम ! मेरे अच्छे श्याम ! तुम कितने बड़े हो।

पुरुषोत्तम : [गद्गद हँसी] ओह श्याम, तुम कितने अच्छे थे। तुम कितने अच्छे हो, ओह तुमने बचा लिया।

शैला : मैंने तुमसे पहले ही कहा था पुरुषोत्तम ! श्यामसे एक बार कहनेकी ज़रूरत है। वह बड़ा दयालु है।

श्याम : दयालु [हँसता है—कठोरतासे हँसता है] मैं बड़ा दयालु हूँ !

रत्नी : [आकर] चाय तैयार है, भइया। आओ।

श्याम : [पूर्ववत्] सुना रत्नी। शैला कहती है कि मैं बड़ा दयालु हूँ ! [ख़ूब हँसता है] दयालु हा हा हा हा, दयालु··· [हँस जाता है] दयालु

रत्नी : भैया !

शैला : श्याम !

पुरुषोत्तम : श्याम बाबू !

श्याम : [उसी तरह हँसना] दयालु···दूसरोंको दुर्बल बनानेवाला दम्भी, हा हा हा हत्यारा [दूर जाते स्वर] दयालु···

[अन्तराल : रत्नी अकेली व्यग्र बैठी है।]

रत्नी : क्यासे क्या हो गया। जो इतनी तपस्यासे संचय किया था वह सब क्षण-भरमें खो दिया, सब लुटा दिया। नहीं, नहीं,

यह सच नहीं है। यह सच नहीं है, झूठ है। भैया नहीं लौट रहे। नहीं, वह अब उस राहपर नहीं चलेंगे। यह सब नीलीके व्यवहारके कारण हुआ है। यह केवल प्रतिक्रिया है। मैं नीलीसे लड़ूँगी। उसे समझाऊँगी, लेकिन··· लेकिन वह तो ऐसा डरती है, ऐसा डरती है जैसे राक्षससे बालक, तो···तो···लेकिन क्या इसीलिए भैया फिर पुराने रास्तेपर लौट जायेंगे, फिर तस्कर-व्यापार करेंगे; ठगी, धोखादेही, हत्यामें भाग लेंगे। नहीं, नहीं, यह नहीं होगा। यह नहीं होगा, मैं उन्हें रोकूँगी। हर प्रकारसे रोकूँगी। पुलिसमें रिपोर्ट करूँगी। [श्यामलालका प्रवेश] कौन, भैया ! भैया आप कहां चले गये थे। सवेरेसे राह देखती बैठी हूँ। और आपकी यह क्या हालत हो रही है ?

श्याम : रत्नी, सुनो,

रत्नी : पहले मेरी सुनो। मैं कहे देती हूँ कि तुम लौटकर नहीं जा सकते। तुमने हठ की, तो मैं पुलिसमें रिपोर्ट कर दूँगी। सब भेद खोल दूँगी।

श्याम : खोल देना, लेकिन मेरी बात सुनो।

रत्नी : मैं अब कुछ नहीं सुनूँगी। मैं जाती हूँ।

श्याम : जाती हूँ [हँसता है] जाना जैसे इतना सरल है जितना कहना। अपनी मर्जीसे न कोई जाता है न आता है ! उधर बैठो ! बैठो !!

रत्नी : [चीख़कर] नहीं बैठूँगी, नहीं बैठूँगी।

श्याम : [तीव्र] बैठो, बैठो, नहीं तो मैं अभी तुम्हें गोलीसे मार दूँगा।

रत्नी : मार दो। यही एक काम बचा है करनेको। अपनी बहनका खून पीकर फिर आरामसे···

श्याम : [एकदम हँसकर] फिर आरामसे चोरी करना, धोखा देना, हत्याएँ करना ! सो तो करूँगा, पर रत्नी, मरनेसे पहले एक सवालका जवाब तो देती जाओ ! दोगी न ? मैं नीलीके पास गया था…

[शैला और पुरुषोत्तमका हँसते हुए प्रवेश]

शैला : हैलो श्याम ।

पुरुषोत्तम : तैयार हो श्याम ।

श्याम : श्याम सदा तैयार रहता है, शैला । फिर जहाँ तुम हो, वहाँ मुझे तैयारीकी चिन्ता ही क्या करनी है । लेकिन हाँ, मैं रत्नीसे एक सवालका जवाब पूछ रहा था ।

रत्नी : मैं किसी सवालका जवाब न दूँगी, मैं जा रही हूँ ।

श्याम : शैला, रत्नीको रोक लो । वह पुलिस स्टेशन जा रही है ।

शैला : [काँपकर] पुलिस स्टेशन जा रही है, क्यों ?

पुरुषोत्तम : कौन पुलिस स्टेशन जा रही है ? रत्नी ?

रत्नी : हाँ, जा रही हूँ । कोई हिम्मतवाला रोके तो [तभी पुलिस का प्रवेश । कई सिपाही थानेदार आदि हैं । सहसा चीख़कर] पुलिस ! पुलिस तो आ भी गयी ।

शैला : [चीख़कर] पुलिस, सचमुच आ गयी ।

पुरुषोत्तम : पुलिस यहाँ क्यों आयी ?

थानेदार : श्रीमान्‌को सरकारके अतिथिगृहमें पहुँचानेके लिए ।

पुरुषोत्तम : [तेज़] हमें ? क्यों ? हम शरीफ़ इनसान हैं । हमें क्यों परेशान करते हो ? क्यों श्याम…

रत्नी : लेकिन पुलिसको सूचना किसने दी ?

थानेदार : श्यामबाबूने ।

रत्नी : भैयाने ! भैया तुम पुलिसके पास गये ? तुम ! ओह भैया, मेरे प्यारे भैया ! मैं अभी नीलीको बुलाती हूँ । [जाती है]

शैला : श्याम, तुमने पुलिस बुलायी। तुमने हमें धोखा दिया ?

पुरुषोत्तम : धोखेबाज़, बदमाश, बेईमान तू बचकर जायेगा।

श्याम : अभी तो बचनेकी राह मिली है कलतक तो भागता ही रहा। लिखी हुई सलेटपर फिर-फिरकर लिखता रहा। उसे धोकर नये सिरेसे लिखनेकी राह सूझी ही नहीं। चलिए थानेदार साहब, हम तैयार हैं।

थानेदार : सिपाहियो, सबको ले चलो। श्याम बाबू, क्षमा करेंगे मैं आपको भी हथकड़ी लगानेको विवश हूँ। [हथकड़ियोंका स्वर]

श्याम : जानता हूँ चलिए। आज मैं शुद्ध हुआ। पाप-मुक्त हुआ। [नीलीका दौड़ते-हाँफते प्रवेश]

नीली : [हाँफते हुए] ठहरो, ज़रा ठहरो ! श्याम, जा रहे हो। तुमको समझ न सकी। लेकिन उसका अब गिला कैसा ? बस इतना कहने आयी हूँ कि जब भी लौटोगे अपने घरके द्वारपर मुझे राह देखते पाओगे, इस जन्ममें चाहे अगले जन्ममें।

श्याम : नीली !

[गहन संगीतके साथ समाप्त]

सब हैं समान
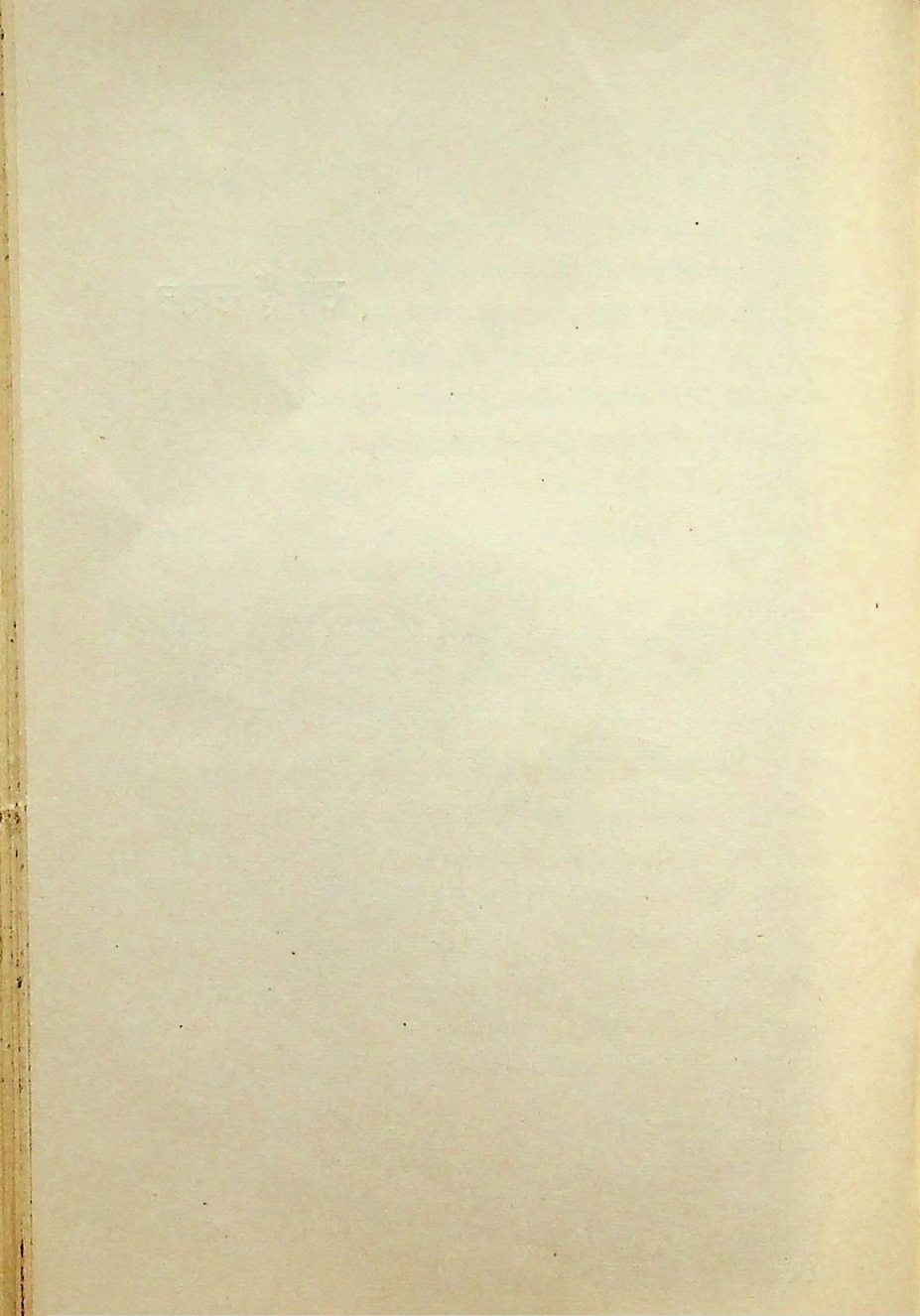
[पात्र : भद्रजन, होटलका मालिक, होटलका मैनेजर, होटलके चार-पाँच ग्राहक, पण्डितजी, ठाकुर साहब, होटलका मुख्य सेवक, इसके अतिरिक्त जनता व पुलिसके कुछ सिपाही। मध्य-भारतके किसी भागमें एक छोटा-सा शहर। उसमें एक साधारण-सा होटल। मंचपर दाहिनी ओर पास ही कोनेमें काउण्टर, जिसपर मैनेजर बैठता है। सामने बीचमें मेज़-कुरसियाँ जिनपर ग्राहक बैठते हैं। सामने दाहिनी ओर ऊपर जानेका ज़ीना, बायीं ओर होटलके भीतर जानेका द्वार। इसी ओर ज़रा पास स्नानागार बना है। उसके पास बाहरसे आनेका द्वार है। इन दोनोंके बीचमें एक मेज़ लगी है। उसपर एक सुन्दर कलशमें जल भरा है और एक खुले बरतनमें बिस्कुट रखे हैं। परदा उठनेपर मंचपर कोई नहीं है। सब कहीं स्वच्छता और सुघड़ता है जैसे उत्सव हो। इच्छानुसार सजावट की जा सकती है। सामने दीवारकी घड़ी सवेरेके सात बजानेवाली है। तभी होटलका मालिक वहाँ प्रवेश करता है। साथमें एक भद्रजन हैं।]

भद्रजन : [चारों ओर देखकर] सुन्दर, अति सुन्दर। आज इस नगरमें मेरा आना सफल हुआ। कितना स्वच्छ, कितना सुन्दर स्थान है ? हाँ तो बन्धु ! आज कोई उत्सव है ?

मालिक : जी हाँ, आज एक बहुत बड़ा उत्सव है। ऐसा उत्सव जो कभी हुआ न होगा, न भूतो न भविष्यति।....संस्कृत आती है आपको ?

भद्रजन : न भूतो न भविष्यति !....इतनी तो आती है। हाँ तो बन्धु ! आज कौन-सा उत्सव है ?

मालिक : जी हाँ उत्सव है। आप इतना भी नहीं जानते कि उत्सव देखा जाता है, उसका बखान नहीं किया जाता। आपका कमरा ऊपर है, नं० १० !

भद्रजन : [चकित होनेका नाटक] नं० १० ! हाँ तो बन्धु नं० १०।

मालिक : जी हाँ नं० १०। उसमें एक खिड़की है ?

भद्रजन : [पूर्ववत्] मेरे कूदनेके लिए। बन्धु, आपने मुझे पहचाना खूब।

मालिक : जी हाँ, मैं खूब पहचानता हूँ। ज़िन्दगी भर नब्ज़ टटोली है।

भद्रजन : अहा, तो आप वैद्य भी हैं। ठीक बन्धु, मैं ज़रा खिड़की देख आऊँ कि कूदनेमें कैसा सुभीता है ? [ज़ीनेकी ओर जाता है पर तुरन्त लौटता है।] हाँ, तो बन्धु उत्सवकी बात रह गयी। मैंने सुना है कि आपके होटलका शुद्धि-संस्कार हुआ था। मन्त्र किसने पढ़े थे ?

मालिक : [चिढ़कर] जी हाँ, मन्त्र पढ़े थे।

भद्रजन : यही तो पूछता हूँ। बन्धु, किसने पढ़े थे।

मालिक : [चिढ़कर] आपने !

भद्रजन : मैं तो बन्धु ! आज पढ़ूँगा। उस दिन····

मालिक : [एकदम] जी हाँ उस दिन। मैं पूछता हूँ कि आप हैं कौन ? आपको कैसे पता है उन सब बातोंका ?

भद्रजन : [हँसकर] बन्धु, ताड़नेवाले क़यामतकी नजर रखते हैं। देखा बन्धु आपने, मुझे उर्दू भी आती है। यूँ आप कहें तो बँगला भी बोल सकता हूँ—तोमार दोक्खिने जे फुलेर झुड़िटा आछे ओटा आनो तो—तुम्हारे दाहिने जो फूलों-की टोकरी है उसे लाओ तो [मालिक चकित होकर फूलोंकी टोकरीको देखता है] रहने दीजिए, रहने दीजिए। परिचय हो जानेपर ही गलेमें डालना। हाँ तामिल सुनेंगे,

'तन्नि कोंडुवांगो' पानी लाओ। मलयालममें पानीको 'विलड़म' कहते हैं। अँगरेज़ीमें 'वाटर', बंगलामें 'जल', मगर होता वह पानीका पानी, वही पतला बहने वाला-रंगहीन, गन्धहीन तरल-पदार्थ, दो हाइड्रोजन, एक आक्सीजन····

मालिक : [प्रभावित] क्षमा करिए। आप तो सर्वज्ञ हैं। आपको सब कुछ मालूम है, पर आप हैं कौन ?

भद्रजन : नम्बर दस [तेज़ीसे ज़ीना चढ़ जाता है]

मालिक : औफ्फो ओफ्फो [एकदम घण्टी बजाता है] कोई है। [सहसा ऊपरसे, अन्दरके द्वारसे, स्नानागारसे होटलके सेवक सिर निकाल कर देखते हैं] सब तैयार हैं ?

मुख्य-सेवक : जी हाँ। आ जायें।

मालिक : अभी रुको।

मुख्य-सेवक : जी दरवाज़ेपर बड़ी भीड़ है।

मालिक : होने दो, मैनेजर साहब सँभालेंगे। [धीरेसे] ये साहब कौन हैं ?

मुख्य-सेवक : जी मुझे तो नहीं मालूम। वैसे लगते बड़े आदमी हैं। तीन बड़े-बड़े बक्से हैं। पाँच अर्दली हैं और···

भद्रजन : [ऊपरसे] हाँ तो बन्धु, कमरा सचमुच सुन्दर है। हम प्रसन्न हुए। अब ज़रा चाय भिजवा दीजिए।

मुख्य-सेवक : सब इन्तज़ाम कर दिया है, हुज़ूर। अभी लाता हूँ। [जाता है]

भद्रजन : हम बहुत खुश हुए। [नीचे उतर आता है] हाँ तो बन्धु ! सुना है कि कुछ दिन पहले आपने अपने होटलमें अवर्णोंको आने दिया था।

मालिक : जी हाँ। अवर्ण अब कौन है ? क़ानूनने सबको वर्णहीन कर दिया है।

भद्रजन : लेकिन बन्धु ! मन एक नहीं हुए ।

मालिक : जी हाँ, उसमें देर लगती है ।

भद्रजन : हाँ, तो बन्धु ! इसीलिए सवर्णोंकी पंचायतने आपको धमकाया-डराया, आपपर जुर्माना किया और सारे होटल को, होटलकी प्रत्येक वस्तुको, दीवारों तकको धोनेकी आज्ञा दी…

मालिक : जी हाँ, जी हाँ !

भद्रजन : अच्छा हुआ बन्धु, मकड़ीके जाले उड़ गये, मच्छर मर गये । मेज़-कुरसियोंका रूप निखर आया । शायद फिरसे रंग करवाना पड़ा है ।

मालिक : जी हाँ, मैंने सब कुछ पलट दिया है । सारे होटलको काया पलट दी और अब…

भद्रजन : अब आप पंचायतकी कायापलट करनेवाले हैं ।

मालिक : जी हाँ, आज मैं सवर्ण पंचोंकी काया पलट दूँगा । उन्हींके हथियारोंसे उन्हें परास्त कर दूँगा ।

भद्रजन : [चकित] हाँ तो बन्धु, हथियार भी हैं । दिखाई तो नहीं देते ।

मालिक : जी हाँ, वे अभी दिखाई नहीं देते, पर देखते रहिए, अभी प्रकट हुए जाते हैं । [बाहर कोलाहल मचता है । द्वार-पर थपथपाहट होती है । वह ज़ोरसे पुकारता है ।] कोई है !

[एक बार फिर चारों ओरसे सेवक झाँकते हैं ।]

मालिक : [एकदम] तैयार हो जाओ । और दरवाज़ा खोल दो ।

मुख्य-सेवक : जी अभी खोलता हूँ ।

[एटेन्शन जाता है और नाटकीय ढंगसे द्वार खोलता है ।]

मैनेजरके पीछे-पीछे १५-२० मनुष्य अन्दर आकर तेज़ीसे कुरसियोंपर बैठनेको बढ़ते हैं। तभी मैनेजर पुकारता है।]

मैनेजर : बहनो और भाइयो, कुरसियोंपर बैठनेसे पहले मैं आपसे कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। [सब खड़े हो जाते हैं। भद्रजन भी उन्हींमें हैं, मुसकराता है] यह होटल नया नहीं है। पिछले बीस वर्षोंसे आप लोगोंकी सेवा कर रहा है। आपके सुख-दुःखका साथी रहा है। आपद्-विपद्में, धूप-वर्षामें, आँधी-पानीमें इसने सदा आपको शरण दी है। आपकी थकावट दूर की है। [भद्रजन पुकार उठते हैं 'हियर' 'हियर' और ताली पिट जाती है] बहनो और भाइयो, आपने हमारी तुच्छ सेवाको सराहा है। हम आभारी हैं। लेकिन मैं कहने जा रहा था, क्या कहने जा रहा था, हाँ, यह कहने जा रहा था कि पिछले १६ दिनोंसे होटलके शान्त, लम्बे जीवनमें एक तूफ़ान आ रहा है। इस तूफ़ानने हमें झकझोर दिया, झनझना दिया। मतलब यह कि सोतेसे जगा दिया। आज होटलके यशस्वी मालिक-ने [नाटकीय ढंगसे मालिककी ओर इंगित करता है। मालिक मुसकराता है, तालियाँ पिट जाती हैं] एक क्रान्तिकारी क़दम उठाया है। वह क़दम ऐसा क्रान्तिकारी है कि उससे न केवल आप, न केवल यह शहर, न केवल हमारा प्रान्त बल्कि सारा देश झनझना उठेगा [पॉज] आप सोचते होंगे कि वह क्या क्रान्तिकारी क़दम है। क्या क्रान्तिकारी, वो वो''''बहरहाल मैं अब आपके और उस क़दमके बीचमें नहीं खड़ा होना चाहता। आजसे इस होटलमें सब मनुष्योंको आनेकी अनुमति होगी। सवर्णोंको भी, अवर्णोंको भी। सवर्ण केवल पैसे देकर खा पी सकेंगे

परन्तु जो अवर्ण हैं उनके लिए स्नानका प्रबन्ध भी है। खानेमें उन्हें चायके साथ बिस्कुट मुफ़्त मिलेंगे। [भद्रजन फिर 'हियर' 'हियर' करते हैं, तालियाँ पिटती हैं] और सुनिए। जो अवर्ण लोग अस्वस्थ होंगे उनके लिए नहाना आवश्यक नहीं होगा। उनके लिए पवित्र गंगा जलके व सोनेके पानीके छींटे काफ़ी होंगे ? इसके बाद सब साथ खायेंगे, साथ पीयेंगे, साथ खेलेंगे, साथ गायेंगे, साथ नाचेंगे....

एक ग्राहक : और साथ मरेंगे।

मैनेजर : जी हाँ, और साथ मरेंगे। धन्यवाद, क्योंकि मरनेके बादकी कहानी ये मित्र बतायेंगे।

[मैनेजर बैठ जाता है। हँसी। फिर तालियाँ पिटती हैं। उसके बाद पूर्ण सन्नाटा छा जाता है। सब उसी तरह एक दूसरेका मुँह देखते हैं। फिर भद्रजन तेज़ीसे स्नानागारकी ओर बढ़ते हैं।]

भद्रजन : हाँ तो बन्धु, मुझे यह भाषण सुनकर बहुत खुशी हुई। आइए जो स्नान करना चाहें।

मैनेजर : पर यह सुविधा केवल अवर्णोंके लिए है।

भद्रजन : मैं अवर्ण हूँ।

मालिक : जी हाँ, आप अवर्ण हैं। इसका प्रमाण...

भद्रजन : प्रमाण कुछ देर बाद दूँगा। आइए अवर्ण बन्धुओ ! यहाँ एक साथ पाँच जन नहा सकते हैं। आइए....

[चलिए, चलिए, कहते हुए पाँच व्यक्ति स्नानागारमें जाते हैं]

एक ग्राहक : [तेज़ीसे] लेकिन यह सब अन्याय है, ढोंग है। धर्मभ्रष्ट करनेका षड्यन्त्र है।

दू० ग्राहक : बेशक है; यह दूषित चाल है।

[शोर जिसमें दो व्यक्ति और शामिल हो जाते हैं।]

मालिक : जी हाँ दूषित चाल है। आप मत फँसिए इस चालमें। जाइए !

प० ग्राहक : जाइए। कैसे जाइए !

मालिक : पैरोंसे, जो हाँ कैसे क्या ? पैरोंसे जाइए....जाइए। बुलाया किसने था।

दू० ग्राहक : बुलाता कौन। तुमने बुलाया। तुमने होटल खोला।

मालिक : जी हाँ, खोला है। खुला हुआ है। कोई शक है आपको। मेरा होटल है, मेरे नियम हैं, जैसे चाहूँगा, चलाऊँगा।

दू० ग्राहक : जैसे चाहूँगा, चलाऊँगा। कैसे चलाऊँगा। शहरको भ्रष्ट करोगे।

मालिक : जी हाँ करूँगा, करूँगा, करूँगा। आपको होना हो तो आ जाइए !

ती० ग्राहक : मित्र, काहेको अग्नि भड़का रहे हो। भूख और बढ़ेगी। [मुड़कर] मैनेजर साहब ! आप इनके लिए भी बिस्कुटों-का प्रबन्ध कर दें तो ये शान्त हो जायें।

मालिक : जी हाँ कर दूँगा, लेकिन ये अवर्ण बन जायें।

दू० ग्राहक : [चीख़कर] क्या कहा, मैं अवर्ण बनूँ। तुम्हारी यह हिम्मत, तुमने समझा क्या है। मैं....मैं....मैं तुम दुष्टोंको...

प० ग्राहक : ये दुष्ट इस तरह नहीं मान सकते। अभी उस दिन पण्डित-जीके चरण छू रहे थे। गिड़गिड़ा रहे थे। चलो उन्हींको बुलाकर लाते हैं।

दू० ग्राहक : और ठाकुर साहबको भी। फिर देखूँगा तुम्हारा साहस। तुम्हारा स्नानागार। तुम्हारे बिस्कुट....

[तेज़ीसे जाते हैं। पीछे-पीछे तीन-चार और भी हैं। तीसरा ग्राहक तेज़ीसे कहता है।]

तीο ग्राहक : अजी बिस्कुट तो लेते जाइए। पण्डितजी भी देख लेंगे। अच्छा मैं ही ले चलता हूँ। [जाता है] अभी आया मित्रों।

[तभी स्नानागारसे सबलोग आते हैं। दूसरे जाते हैं। पहले वाले बिस्कुट लेकर मेज़ोंपर जाते हैं।]

भद्रजन : बन्धु, यह कैसा शोर था ?

मालिक : जी हाँ, शोर था। शोर तो आप अभी देखेंगे। इसी शोरके लिए मैंने आज यह उत्सव रचा है। आप देखते रहिए, मैं उन्हें कैसा छकाता हूँ।

भद्रजन : पर किन्हें बन्धु।

मालिक : उन्हींको जो विरोध करते हैं। जो समाजके शत्रु हैं, देशद्रोही हैं, राजके शत्रु हैं। जी हाँ, उन्हींको...

भद्रजन : पर बन्धु, यहाँ तो कोई नहीं है।

मालिक : अभी आये जाते हैं। जी हाँ, देख लेना अभी आये जाते हैं। मैं उन्हें उन्हींके शस्त्रोंसे पराजित करूँगा [हँसता है] उन्हींके शस्त्रोंसे....

[तेज़ीसे तीसरे ग्राहकका प्रवेश]

तीο ग्राहक : शहरमें बड़ा शोर है। सब लोग आपके होटलको लेकर बहस कर रहे हैं। कुछ लोग बड़े क्रुद्ध हैं।

मैनेजर : क्या वे लोग इधर आ रहे हैं।

तीοग्राहक : हाँ, कुछ लोग आनेको कह रहे हैं। वे पण्डितजीको बुलाने गये हैं।

मालिक : कोई भय नहीं। जी हाँ, आने दो। [कर्मचारियोंसे] तुम अपना काम करते जाओ।

मनेजर : नहीं, नहीं, ऐसे नहीं होगा। मैं पुलिस चौकीपर जाता हूँ!

मालिक : नहीं, नहीं, जी हाँ, नहीं। तुम कहीं नहीं जा सकते। [मैनेजर रुकता नहीं तेज़ीसे जाता है] ओफ्फो डरपोक कहींका। पुलिसको बुलायेगा। पुलिस क्या करेगी? उस दिन इसीके कारण मुझे नीचा देखना पड़ा था। माफ़ी माँगनी पड़ी थी। नहीं तो मैं उन्हें तभी धराशायी कर देता...

भद्रजन : कोई बात नहीं बन्धु। आज कर लीजिए। पुलिस नहीं आयेगी।

मालिक : नहीं आयेगी। जी हाँ, क्यों नहीं आयेगी। आपको क्या पता?

भद्रजन : मैं सर्वज्ञ जो हूँ बन्धु। आप ही ने तो कहा था।

मालिक : [चकित] आप, जी हाँ। आपको कहीं देखा है।

भद्रजन : [ज़ोरसे हँसकर] खूब बन्धु, खूब। अजी सवेरे ही तो देखा था। नम्बर दसमें ठहरा हूँ।

मालिक : जी हाँ नम्बर दस। लेकिन वहाँ नहीं, कहीं और, कहाँ... कहाँ...

[तेज़ीसे कई व्यक्तियोंका प्रवेश। पण्डितजी, ठाकुर साहब, दोनों ग्राहक और तीन-चार और पण्डित लोग।]

पण्डितजी : कहाँ, कहाँ है इस होटलका मालिक?

ठा० साहब : कहाँ है वह धुन्ना, धूर्त, विश्वासघाती।

मालिक : जी हाँ धुन्ना, धूर्त, विश्वासघाती। सेवक उपस्थित है, आज्ञा कीजिए।

[नाटकीय ढंगसे झुकता है।]

पण्डितजी : यह सब क्या सुना जा रहा है।

मालिक : सुना जा रहा है, जी हाँ, सुनेंगे आप, मैं तो कह रहा हूँ।

ठा० साहब : हुम्बे, तुम तो कह रहे हो। क्या कह रहे हो ?

मालिक : जो आप सुन रहे हैं। जी हाँ, जो सुन रहे हैं वही कह रहा हूँ।

पण्डितजी : परन्तु मैं पूछता हूँ अवर्णोंको होटलमें बुलानेका साहस तुम्हें हुआ कैसे ?...

मालिक : ऐसे हुआ। जी हाँ पण्डितजी, ऐसे हुआ जैसे आपने बताया।

पण्डितजी : क्या कहा रे। जैसे मैंने बताया।

ठा० साहब : यानी तुम पण्डितजीके कहेके अनुसार कर रहे हो।

मालिक : जी हाँ, पण्डितजीने शास्त्रके अनुसार बताया है और मैंने पण्डितजीके कहेके अनुसार किया है।

पण्डितजी : [क्रुद्ध] मैंने....मैंने कब...क्या बताया ?

मालिक : [दृढ़ विश्वस्त स्वर] पण्डितजी क्रोध न कीजिए। हाँ, बैठ जाइए। अरे, सुनो ज़रा नींबू-पानी तो लाओ। हाँ जी लाओ, विशुद्ध गंगाजलमें बनाना।

पण्डितजी : लेकिन...लेकिन....।

मालिक : जी हाँ, लेकिन। तो मैं लेकिनकी चर्चा करूँगा। पण्डितजी पिछली बार अवर्णोंको चाय पिलानेके अपराधमें आपने मेरे होटलका शुद्धीकरण किया था। क्यों ठाकुर साहब !

ठा० साहब : हम्बे, किया था और...

मालिक : [नाटकीय ढंगसे रोकता है] जी हाँ, इतना ही काफ़ी है। क्यों पण्डितजी, आपने सारे होटलको, मेज़-कुरसियोंको, दीवारोंको धुलवाया था।

पण्डितजी : वह आवश्यक था लेकिन...

मालिक : [पूर्ववत्] जी हाँ, इतना ही काफ़ी है। इससे सिद्ध होता है कि धोनेसे शुद्धि हो जाती है।

ठा० साहब : हम्बे, हो तो जा है।

मालिक : जी हाँ हो जा है। क्यों पण्डितजी।

पण्डितजी : हो जाती है पर···

मालिक : जी हाँ, इतना ही काफ़ी है। जी हाँ, जब धोनेसे शुद्धि हो जाती है तो मैंने अवर्णोंको धोनेका प्रबन्ध कर दिया है।

[सब चौंकते हैं]

पण्डितजी : क्या ! क्या !!

ठा० साहब : दिके क्या कहा लालजी।

भद्रजन : अद्भुत बन्धु ! अद्भुत···हियर हियर [ताली पिटती है]

मालिक : [गर्वसे] मैंने कहा धन्यवाद। जी हाँ, मैंने कहा है कि जब धोनेसे मेज़, कुरसी, दीवारें तक शुद्ध हो जाती हैं तो इनसान क्यों नहीं हो सकता। इसलिए मैंने उनके लिए स्नानका प्रबन्ध किया है। गंगाजल भी है।

पण्डितजी : [तेज़ होकर] तो यह चाल चली है। लेकिन मैं कहता हूँ, कि ऐसा नहीं हो सकता। मेज़, कुरसी, दीवारें तो बेजान हैं।

ठा० साहब : हाँ ये चीज़ें तो बेजान हैं। ऐसा नहीं हो सकता। बोलो लोगो, बोलो···ऐसा नहीं हो सकता।

कई व्यक्ति : [एक साथ] हाँ नहीं हो सकता।

मालिक : कैसे नहीं हो सकता। जी हाँ, आप शोर न मचायें। यह होटल है सराय नहीं। सुनिए पण्डितजी, सुनिए सब लोग। बचपनमें जब कभी हम भंगी-चमारसे छू जाते थे तो हमारी माँ सोनेकी अंगूठी पानीमें डालकर और उसके छींटे देकर हमें शुद्ध कर लेती थी।

ठा० साहब : हम्बे, कर तो लेती थी। हम भी कर लेते हैं।

पण्डितजी : हम भी कर लेते हैं पर वह तो सवर्णों की शुद्धि है, ठाकुर साहब और ये हैं अवर्ण···

ठा० साहब : हाँ, हाँ, ये अवर्ण हैं। नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। नहीं हो सकता। बोलो भाइयो, बोलो नहीं हो सकता।

कई स्वर : [एक साथ] नहीं हो सकता ! नहीं हो सकता !!

भद्रजन : बन्धु, शास्त्रार्थ अद्भुत है। हम प्रसन्न हुए लेकिन प्रार्थना है कि शोर न किया जाये। हाँ, अब आगे चलिए···।

पण्डितजी : ये कौन साहब हैं ?

भद्रजन : नम्बर दस बन्धु। नम्बर दस कमरेका निवासी हूँ।

मालिक : जी हाँ उसे छोड़िए। मैं जानता था कि आप नहीं मानेंगे इसलिए पूरी तैयारीके साथ उत्सव मनानेका प्रबन्ध किया है।

भद्रजन : और उस उत्सवका पुरोहित मैं हूँ। जी हाँ बन्धु ! आगे चलिए।

मालिक : पण्डितजी, आप तो शास्त्रज्ञ हैं, वेदपाठी हैं, पुराण-इतिहास सब आपने पढ़े हैं। आपकी विद्वत्ताकी धाक दूर-दूर तक है।

ठा० साहब : हम्बे साब, घणी धाक है, घणी।

मालिक : जी हाँ, घणी है तभी तो इन्होंने शास्त्रका अध्ययन करके बताया था कि जो जैसा अन्न खाता है वैसा ही हो जाता है। भीष्म-द्रोण जैसे महात्मा दुर्योधनका अन्न खाकर भ्रष्ट हो गये थे और···

पण्डितजी : क्या····क्या···

ठा० साहब : दिके बात तो पतेकी कही है।

मालिक : जी हाँ, पतेकी तो है ही। पण्डितजी क्या कभी बेपतेकी

बात कहते हैं । सो पंचो ! शरीरकी शुद्धिके लिए स्नानका प्रबन्ध है और मन-प्राणकी शुद्धिके लिए अन्नका । मैंने अवर्णोंको चायके साथ मुफ़्त बिस्कुट देनेका प्रबन्ध किया है । वह देखिए····जब वे सवर्णोंका अन्न खायेंगे तो सवर्ण हो जायेंगे····

[बिस्कुटोंके पास खड़ा सेवक बिस्कुट उठाकर दिखाता है । क्षण भर सब विमूढ़-से देखते हैं ।]

भद्रजन : बन्धु, तुम धन्य हो । तुम्हारे तर्क धन्य हैं । दो भाई, सब अवर्णोंको बिस्कुट दो [कहता-कहता ऊपर जाता है] मैं अभी आता हूँ····

ठा० साहब : अब बोलिए पण्डितजी,

पण्डितजी : बोलूँ क्या । ढोंग, यह सब ढोंग है । अधर्म है । विश्वासघात है । भला कहीं इन तर्कोंसे ऊँच-नीच दूर हो सकती है । छोटे-बड़े, ठाकुर-चमार एक हो सकते हैं । क्यों ठाकुर साहब····

ठा० साहब : कभी नहीं हो सकते । ठाकुर-चमार कभी एक नहीं हो सकते ।

पण्डितजी : हं, हं, लालाजी । बड़े चालबाज़ हैं आप? ईश्वरकी बनायी समाज रचनाको बातोंमें उड़ाना चाहते हैं । मैं कहता हूँ निकालो सब अवर्णोंको, शुद्ध करो होटलको ।···नहीं करोगे···

मालिक : जी हां, नहीं करूँगा । होटल अशुद्ध नहीं है, अशुद्ध आप हैं । चाहें तो आपको शुद्ध कर सकता हूँ ।

पण्डितजी : क्या, क्या कहा ? ठाकुर साहब । लातोंके भूत बातोंसे नहीं माना करते । इस होटलको नष्ट करना होगा ।

[**मैनेजरका घबराये हुए प्रवेश**]

मैनेजर : सर्वनाश। बिलकुल सर्वनाश। थानेमें पुलिसका एक भी सिपाही नहीं है।

ठा० साहब : [अट्टहास] पुलिस! ठाकुरके रहते पुलिस। मैनेजर साहब और लालाजी···

मालिक : लालाजी···[काँपकर] जी हाँ, बात कीजिए। मैंने कुछ ग़लत कहा हो तो बताइए। देशके विधान···

पण्डितजी : देशका विधान देशमें लगता होगा। यह देश नहीं, शहर है। इस शहरमें शहरका विधान लागू होगा। ठाकुर साहब!

ठा० साहब : [ज़ोरसे] देखते क्या हो। नहीं मानते तो भगा दो अवर्णोंको····शुद्ध कर दो होटलको···

कई व्यक्ति : [एक साथ] : निकलो, निकलो।

दूसरा दल : हम क्यों निकलें, तुम निकलो।

पहला दल : नहीं मानोगे तो····

[शोर बढ़ता है। लोग तेज़ीसे इधर-उधर भागते हैं। कि तभी भद्रजन आकर सीटी बजाते हैं।]

भद्रजन : बन्धुओ, सावधान!

[सब चौंककर देखते हैं। ऊपर-नीचे, इधर-उधर, पुलिस खड़ी है। सब ठगे-से स्तब्ध रह जाते हैं। मालिककी आँख सहसा चमकती है।]

मालिक : आप···आप···

भद्रजन : मैं नम्बर दस कप्तान पुलिस। हाँ तो बन्धु! आपने ग़लती की। बीसवीं सदी है, इस सदीमें अभी अकेला शास्त्र काम नहीं देता। बिजलीके दोनों तार मिलते हैं तभी प्रकाश होता है—नैगेटिव और पाजेटिव। इसी तरह जब

शास्त्र और शस्त्र मिलते हैं तभी क्रान्तिकी शक्ति पूर्ण होती है। कैसी विवशता है !

मालिक : लेकिन आपको मालूम कैसे हुआ ?

भद्रजन : बन्धु ! मैंने कहा था न कि ताड़नेवाले क़यामतकी नज़र रखते हैं। मैनेजर साहबने पुलिसको लिखा, उन्होंने मुझे। अच्छा बन्धुओ, पण्डितजी, ठाकुर साहब !

[सब काँपते हैं। बहुत-से लोग उन्हें चिढ़ाते हैं।]

कई लोग : निकालिए हमें, निकालिए अब।

भद्रजन : नहीं बन्धुओ, ऐसे नहीं। शक्तिका सहारा लेना बहुत बुरी बात है। मैं चाहता हूँ कि ये गिरफ़्तार न हों। आखिर मैं इसी नगरका तो हूँ।

[सब फ़िर काँपते हैं]

मैनेजर : क्या....

मालिक : मैंने कहा था न कि कहीं देखा है। हं....हं....जी हाँ आप, आप कौन हैं ?

भद्रजन : मैं बोधा चर्मकार, एक्स एम० एल० सी० का बेटा गज्जू। गजराजसिंह वर्मा, कप्तान पुलिस।

मालिक : हैं गजराजसिंह। वही तो, वही तो इतनी देरसे पहचान रहा था ! लो बोलो अपने शहरका कप्तान पुलिस।

ठाकुर : [कम्पित] बोधा....गजराजसिंह....कप्तान साहब....

पण्डितजी : [ठगा-सा] बोधा चर्मकार....कप्तान पुलिस...

भद्रजन : अगर आप लोग मेरे साथ चाय पीकर मुझे कृतज्ञ कर सकें तो आपको कोई पैसा न देना होगा। मंज़ूर है, आप मौन हैं। मौनं सम्मतिलक्षणं। तो मंज़ूर है। लाला साहब।

चायका प्रबन्ध करो। लेकिन नं० दस नहीं, नम्बर एक। तुरन्त सबके लिए मेरी ओरसे।

मालिक : [हर्ष] जी हाँ नम्बर एक, लेकिन जीत तो नम्बर दसकी हुई है। ख़ैर। आपकी ओरसे, नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है। मेरे नगरका छोकरा मुझे छका सके। मैनेजर साहब…हैड ब्वाय…अरे तुम सब कहाँ हो, तुरन्त बढ़ियासे बढ़िया माल लाओ। आओ पण्डितजी, आपका ही शिष्य हूँ। आओ ठाकुर साहब, आपकी ही प्रजा हूँ। आओ भाइयो, जी हाँ, सब आओ सब। [मस्तीमें गा उठता है] सब है समान, जी हाँ, सब है समान, सबमें एक प्राण, सब मिलकर हरिनाम गाओ।

[पटाक्षेप]

●

रसोईघरमें प्रजातन्त्र
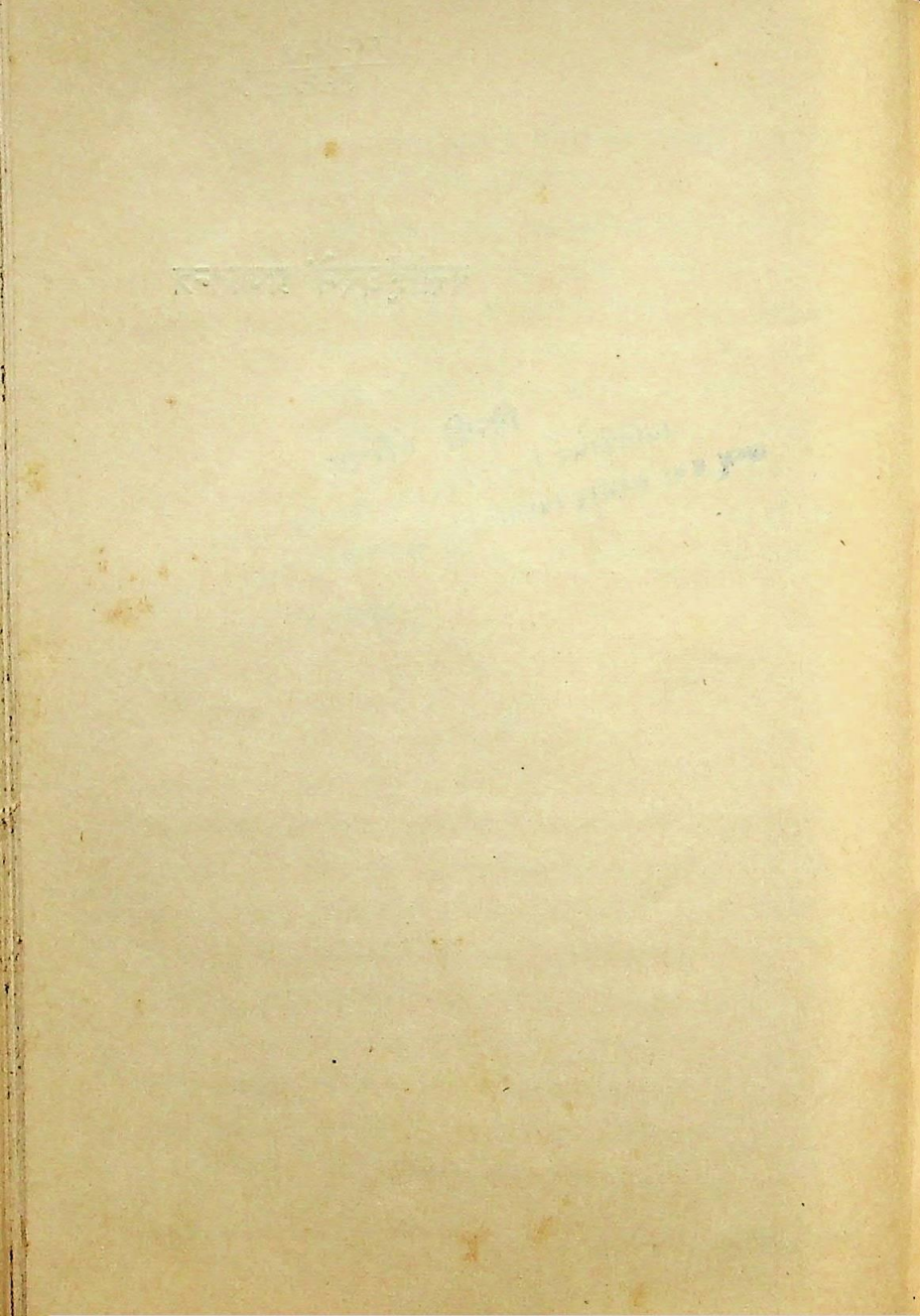
[पात्र : श्यामनाथ : घरके मालिक, रामलाल : श्यामनाथके मित्र; महाराज; : रसोइया; रामू : सहायक रसोइया; नारी, नरेश, सुरेश, अमला, विमला, अतुल, सुजाता; : श्यामनाथके परिवारके सदस्य। मंचपर एक कमरा जहाँ घरके लोग खाना खाते हैं। कमरेमें मेज़, कुरसी, चौकियाँ सब कुछ हैं। उसीके साथ रसोईघर है। मंचपर सामने ही उसका द्वार है और द्वारपर एक तख्ती लगी है जिसपर लिखा है 'रसोईघर'। द्वारके दोनों ओर दो काले बोर्ड हैं, उनपर चाकसे सिलसिलेवार खानेकी अनेक वस्तुओं-के नाम लिखे हैं। महाराज बार-बार रसोईघरमें-से आता है और बोर्डको पढ़ता है। चिनचिनाता है।]

महाराज : दूध, टोस्ट, दलिया, वारले, चोले, पूरी, ओक्खो नाकमें दम कर दियन। अभीतक आधा काम नहीं निबटन। कबसे करन। अभी तो समोसे, टिकिया, खीर सभी कुछ बनावनको रहीन। मुदा अब क्या बनाई....अपना सिर [सिर खुजलाता है]। भगवान इनकी अक्कल ठीक न बनाईन [सहसा कई आवाज़ें आती हैं।]

नारीका स्वर : महाराज...ओ महाराज...छोटे लल्लाके वास्ते दूध भेजो।

महाराज : [चीख़कर] भेजते हैं सरकार। [रसोईघरमें झाँकता है] अरे रामू ! लल्लाका दूध दे आई।

[अन्दरसे रामूका चीख़ते हुए प्रवेश]

रामू : लल्लाका दूध दे आओ। कैसे दे आओ। अभी तो माजीका दलिया नहीं बना। बड़ी भाभीका वारले तैयार नहीं हुआ ! ऊहूँ, मैं इस तरह क्यू नहीं तोड़ सकता।

देख लो बोर्ड पर....

महाराज : इसी बोर्डने तो मुसीबत कर दियन। मुदा पाकशाला न हुई पाठशाला बन गईन।

नारीका स्वर : महाराज, ओ महाराज, लल्ला कबसे चीख रहा है। दूध क्यों नहीं लाता।

महाराज : अजी अभी कैसे लाइन। अभी लल्लाका नम्बर नहीं आईन। बड़े बाबूका हुकुम है। क्यू कभी न तोड़ी। अभी हम माजीका दलिया बनाई रहन....

[एकदम नरेश, सुरेश, प्रमिला, विमला आदिका प्रवेश]

नरेश : ओ महाराज माजीका दलिया तो बन चुका, मेरा हलुआ बना।

महाराज : आपका हलुआ अभी कैसे बनाइन। अभी क्यूमें...

नरेश : क्यू गयी भाड़में, अरे ऊदबिलाव, नौ बज गये। अबतक हलुआ नहीं बना ?

सुरेश : [आता हुआ] तुम्हारा हलुआ नहीं बना तो मेरे चीज-टोस्ट कैसे बने होंगे।

अमला : [आती हुई] और मेरे समोसे। क्या अभी नहीं बने। ओह गाड। इतनी देर हो गयी। मैं कॉलेज कब पहुँचूँगी।

विमला : पण्डित ! मैंने आलूकी टिकिया बनानेको कल भी कहा था।

अतुल : [गुस्सेसे] मुझे स्कूलको देर हो गयी। मेरा नाश्ता तैयार नहीं हुआ।

सुजाता : मेरे लिए खीर नहीं बनी।

नरेश : मैं पूछता हूँ तुम करते क्या रहते हो। अबतक मेरा हलुआ नहीं बना ?

रसोइया : सरकार आपका नहीं, हलुआ मेरा बन गईन। सबसे

पहले गोपाल बाबूके टोस्ट बनायी दियन, फिर बड़े बाबूका दूध तैयार कियन, फिर माजीका दलिया बनाईन, अब बड़ी भाभीके लिए वारले बनाईन है। फिर छोटे लल्लाको दूध, मझली दीदोके चोले, रामू भइयनके लिए पूरी तैयार करिन है, मुदा उसके बाद आपका हलुआ बनाइन। बोर्ड पर जस जस लिखत रहन...[जैसे-जैसे बोलता है सब बेचैन होते हैं।]

नरेश : [एकदम] बोर्ड गया झेरेमें छछून्दर, पहले मेरा हलुआ बना। पाँच मिनिट देता हूँ।

सुरेश : और मुझे तीन मिनिटमें टोस्ट चाहिए।

अमला : मुझे समोसे एकदम चाहिए।

विमला : मैं कहती हूँ मेरे पास कुल पाँच मिनिट हैं। ओफ्फो देखता क्या है ?

अतुल : हाँ देखता क्या है, मेरा नाश्ता, कहाँ है मेरा नाश्ता....

सुजाता : मेरी खीर, मेरी खीर, कब मिलेगी ओ....ओ....

[महाराज बुतकी तरह खड़ा हो जाता है]

नरेश : अरे तू जाता क्यों नहीं। तुझसे तो ऊदबिलाव अच्छा है, मीलों लम्बा बाँध बाँधता है।

महाराज : सरकार, बांध तो हम भी बाँधन रहन पर यह आपन लोगनका काम हमसे न होइन, न होइन [रसोईघरमें जाता है]

नरेश : [ज़ोरसे] अरे छछून्दर। पहले मेरा हलुआ बना फिर कहीं जाना।

सुरेश : पहले मेरे टोस्ट !

अमला : पहले समोसे...

विमला : पहले टिकिया...

अतुल : पहले मेरा नाश्ता····

सुजाता : पहले मेरी खीर····

महाराज : [अन्दरसे आकर बाहर जाता हुआ] सबसे पहले हम अपने घर जाईत है, मुदा लौटके आईन तो सब कुछ बना देइन ।

[जाता है, सब चकित-से देखते हैं । परदा]

दूसरा दृश्य

[पहले दृश्यवाला स्थान । लगभग वही स्थिति है । बस दोनों बोर्ड नहीं हैं । उनके स्थानपर एक ओर बैलेट बॉक्स रखा है । परदा उठनेपर ला० श्यामनाथ और उनके पीछे-पीछे उनके मित्र ला० रामलाल वहाँ प्रवेश करते हैं ।]

रामलाल : अरे लाला श्यामनाथजी हैं ।

श्यामनाथ : हाँ, हाँ चले आओ रामलालजी, बेखटके चले आओ । बड़े अच्छे मौक़ेसे आये । आओ, आज तुम्हें अपना डाइनिंग रूम यानी भोजनगृह दिखाऊँ ।

रामलाल : भई, यह भोजनगृह क्या ? सीधा-सादा, भोजनघर क्यों नहीं कहते ।

श्यामनाथ : अब तुम्हें क्या बताऊँ । मैंने तो कहा था, पर लोग कहने लगे भोजनघर तो ऐसे ही हुआ जैसे जेलघर, डाकघर । 'भोजन'के साथ घरका मेल नहीं बैठता । सो बहुमतसे लोगोंने भोजनघरके स्थानपर भोजनगृह तय यानी निश्चित किया । क्या किया जाये, ज़माना यानी समय ही ऐसा आ गया है ।

रामलाल : भई, यह यानी यानीकी महारनी रहने दो । मैं सब

समझता हूँ लेकिन इस गृहसे तो 'शाला' ही आसान था।

श्यामनाथ : [हँसता है] अब तुम्हें क्या बताऊँ। इसी घरके इन्तज़ाम-से परेशान हूँ। शालोंको बुलवाकर मुफ़्तखोरोंकी एक फ़ौज खड़ी करूँ ? मेरा कुटुम्ब एक छोटा-मोटा राज है, राज। ५० प्राणी हैं और नम्बर बढ़ता ही रहता है।

रामलाल : [हँसता है] हाँ, हाँ, वह तो होगा ही।

श्यामनाथ : और पुराना ज़माना तो अब रहा नहीं कि जो सब एककी सुनते थे। अब तो रिपब्लिक यानी जमहूरियत यानी जन-तन्त्रका युग है।

रामलाल : यह तुम्हारी यानी खत्म नहीं होगी ?

श्यामनाथ : ओहो भूल गया। अब तुम्हें क्या बताऊँ राष्ट्रभाषा सीखने-का अभ्यास कर रहा हूँ। अपना राज है। हमने बनाया है सो यह हमारा फ़र्ज़ अर्थात् कर्तव्य हो जाता है कि हम राष्ट्रभाषा जल्दीसे जल्दी सीख लें।

रामलाल : वह तो सीखनी ही चाहिए।

श्यामनाथ : सो उसीका अभ्यास कर रहा हूँ और रही जनतन्त्रकी बात, वह सब झगड़ोंकी रामबाण दवा है। मैंने तो, तुम्हें क्या बताऊँ, रामलालजी, घरमें भी जनतन्त्र कर दिया है, बड़ा अच्छा रहा। अब इस रसोईकी ही बात ले लो।

रामलाल : क्या मतलब ? रसोईमें भी जनतन्त्र आ गया ?

श्यामनाथ : [गर्वकी हँसी] वही तो बात है। अब तुम्हें क्या बताऊँ। पहले रोज़ लड़ाई होती थी। सबको अलग-अलग खाना चाहिए। नाकमें दम कर रखा था। रसोइया एक हफ़्ता भी नहीं टिकता था।

रामलाल : [हँसता है] खूब...खूब...यूँ कहो अच्छा खासा जंगली-राज था।

श्यामनाथ : वही तो, अब तुम्हें क्या बताऊँ। सबने मुझे अल्टोमेटम दे दिया कि या तो इस बातका कोई प्रबन्ध हो, नहीं तो घर बारहबाट होता है।

रामलाल : तब तुमने क्या किया?

श्यामनाथ : जो आजकल दुनिया करती है यानी बहुमतका राज। परसों तक यहाँ बोर्ड रखे थे। सब अपनी-अपनी रुचिकी उसपर लिख देते थे और महाराजको नम्बरसे सब बनानेका हुक्म था। कोई क्यू नहीं तोड़ सकता था। पर मैंने देखा यह महा-राजके ऊपर ज़ुल्म है! एक आदमी कैसे इतनी चीज़ें बना सकता है। सो मैंने बोर्ड हटवाकर बैलेट-बॉक्स रखवा दिया।

रामलाल : यानी···

श्यामनाथ : [हँसकर] देखा यह यानी तुम्हारे सिरपर भी चढ़ गया। हँ हँ हँ····यानी भाई! सब लोग अपनी-अपनी रुचि एक चिटपर लिखकर इस बॉक्समें डाल देते हैं। उसपर दस्तखत नहीं किया जाता बिलकुल चुनावकी तरह होता है। रसोइया उसे खोलता है और जिन दो चीज़ोंको सबसे अधिक वोट मिलती है वे ही बनती हैं।

रामलाल : वाह-वाह! कमाल कर दिया आपने। वाह-वाह, सचमुच कमाल कर दिया।

श्यामनाथ : अब तुम्हें क्या बताऊँ। ठीक आठ बजे चाय-नाश्तेकी घण्टी बजती है। बारह बजे भोजनकी, पाँच बजे चायकी, फिर आठ बजे भोजनकी। घण्टी बजनेके एक घण्टेके भीतर-भीतर सब काम निबट जाना चाहिए।

रामलाल : वाह-वाह, वाह-वाह! आपका घर तो भारत सरकारके लिए आदर्श बन रहा है!

श्यामनाथ : [हँसकर] वह तो···अब तुम देखे जाओ। सच्चा

प्रजातन्त्र बनाकर छोड़ूँगा। कपड़ोंके मामलेमें भी यही प्रबन्ध कर दिया है। भोजनके बारेमें एक और मज़ा रहता है। कोई यह नहीं जान सकता कि आज क्या बनेगा। इससे उत्सुकता बनी रहती है।

रामलाल : सच ! क्या रसोइया किसीको बताता नहीं ?

श्यामनाथ : [गर्वसे] अब तुम्हें क्या बताऊँ। यही तो बात है।

रामलाल : लेकिन…?

श्यामनाथ : लो, वह आ गया। आठ बज रहे हैं। घण्टी बजायेगा। [घण्टी बजती है] पण्डित, इधर देखो। ये देखो हमारे मित्र आये हैं। इनके लिए भी….।

रसोइया : जी…जो…

श्यामनाथ : हाँ, हाँ, इनके लिए विशेष कुछ नहीं बनाना। जो हम खायेंगे वही यह भी। जल्दी जाओ।

रसोइया : जी, अभी लाई रहन। [नरेशका प्रवेश]

श्यामनाथ : लो, वे आने लगे। पहली पारीमें पुरुष अधिक रहते हैं। आओ, आओ, बैठो….और लोग कहाँ हैं ?

नरेश : जी, सुरेश-महेश तो सबेरे ही चले गये। प्रदीप-कुलदीप अभी गये हैं। कहते थे आज वे कॉलेजमें ही नाश्ता करेंगे। अतुल-प्रतुल भी स्कूलमें नाम लिखानेको कह रहे थे……।

श्यामनाथ : यह तो बड़ी खराब बात है। अब तुम्हें क्या बताऊँ, यह तो ठीक है कि जो बनेगा वह सबको अच्छा नहीं लगेगा। पर हमें एक-दूसरेकी पसन्दकी क़द्र करनी चाहिए। जो तय हो गया उसे स्वीकार करना चाहिए। अपने देशमें तो जनतन्त्र है। बहुमतके आगे सिर झुकाना पड़ता है। अब तुम्हें क्या बताऊँ अभीसे नहीं सीखोगे तो आगे कैसे करोगे ? देशका शासन कैसे चलाओगे ?

नरेश : जी हाँ, सो तो है ही। सब धीरे-धीरे समझ जायेंगे, वैसे आज बना क्या है ?

श्यामनाथ : मुझे क्या मालूम। और मालूम करके लेना भी क्या है। हमेशा उत्सुकता बनी रहनी चाहिए। अब तुम्हें क्या बताऊँ, खानेमें मज़ा आयेगा। क्यों रामलालजी।

रामलाल : सो तो है, अगर रसोईमें क्या बना है यह पहले पता लग जाये तो स्वाद जाता रहता है।

श्यामनाथ : अब तुम्हें क्या बताऊँ, ये लोग क्या जानें इन बातोंको ? लो वह आ गया···ले आ भाई···अरे पहले इधर ला। मेहमानके सामने, कोई बढ़िया चीज़ होगी। हम लोगोंकी रुचि ही ऐसी है।

रसोइया : जी, यह तो···।

श्यामनाथ : यह तो क्या ! अरे बोलता क्यों नहीं है···देखूँ पकौड़ियाँ हैं, आलूकी हैं न ? अरे तो झिझकता क्यों हैं। तू तो पकौड़ियाँ बढ़िया बनाता है।

रसोइया : जी ये पकौड़ियाँ आलूकी नहीं, बेंगनकी···

श्यामनाथ : [काँपकर] क्या कहा ? फिर तो कहना।

रसोइया : जी, आज बैंगनकी पकौड़ियाँ बनाइन हैं !

श्यामनाथ : [आगबबूला] बैंगनकी पकौड़ियाँ। क्या बकता है। गुस्ताख, बदतमीज़। क्या तुझे नहीं मालूम कि मैं बैंगन नहीं खाता।

रसोइया : हम तो जानत रहिन, सरकार, मुदा बकसवामें जो परचा निकलन वे नहीं जानत···[अट्टहास]

[श्यामनाथ क्रोधसे काँपते हैं। सब मुँह छिपाकर हँसते हैं। परदा गिरता है।]

■
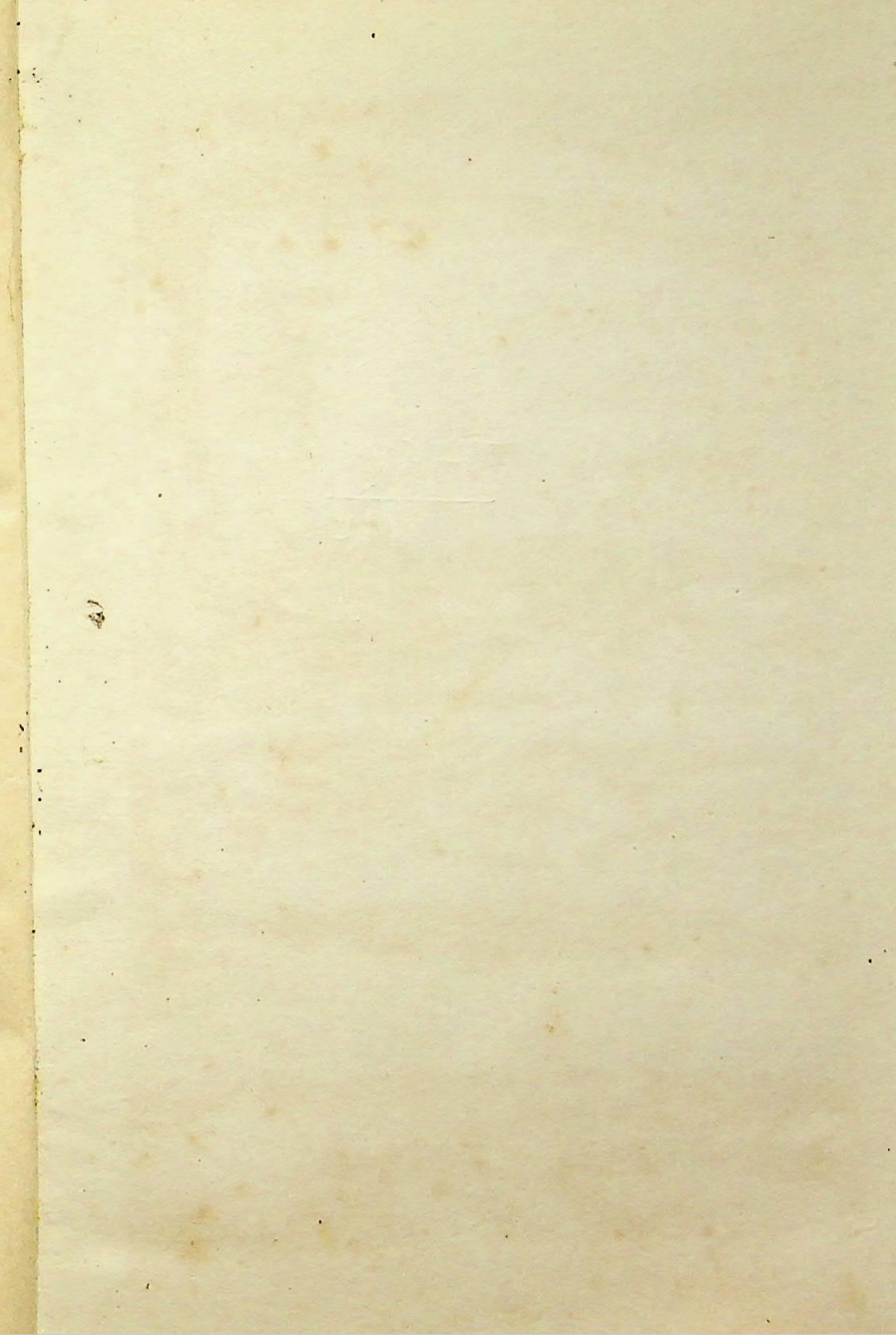
भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक-हितकारी
मौलिक साहित्यका निर्माण

•

संस्थापक
साहू शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

•

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५